ISSN (P) : 0976-5255
(e) : 2454-339X
Impact Factor : 8.870 (SJIF)

गोकुल दास हिंदू गर्ल्स कॉलेज
मुरादाबाद
द्वारा

शोध मंथन

A Peer Reviewed & Refereed International Journal

Vol. - XIV | Special Issue | Feb.2023

मुख्य अतिथि संपादकः
प्रो० चारू महरोत्रा

अतिथि संपादकः
डॉ० शैफाली अग्रवाल

JOURNAL ANU BOOKS
Delhi • Meerut • Glasgow (U.K.)
www.anubooks.com

शोधमंथन
हिन्दी जर्नल (पत्रिका)

शोधमंथन में समाज, साहित्य, कला, राजनीति, अर्थ, मनोविज्ञान, गृहविज्ञान, पुस्तकालयविज्ञान, पत्रकारिता शिक्षा, कानून, इतिहास, दर्शन, महिला शिक्षा, महिला जगत, पुरूष, बाल जगत आदि के जुड़े विषय पर उत्कृष्ट, मौलिक, तरूपरक, वैज्ञानिक पद्धति से युक्त व प्रासंगिक उच्चस्तरीय शोधपत्रों को प्रकाशित किया जाता है।

मुख्य अतिथि संपादकः
प्रो० चारू महरोत्रा
प्राचार्या
गोकुल दास हिंदू गर्ल्स कॉलेज, मुरादाबाद

अतिथि संपादकः
डॉ० शैफाली अग्रवाल
असिस्टेंट प्रोफेसर, मनोविज्ञान विभाग
गोकुल दास हिंदू गर्ल्स कॉलेज, मुरादाबाद

प्रो० अंजना दास, अंग्रेजी विभाग, गोकुल दास हिंदू गर्ल्स कॉलेज, मुरादाबाद
प्रो० ओ०पी० चौधरी, अध्यक्ष, श्री अग्रसेन कन्या पी०जी० कॉलेज, वाराणसी
प्रो० सीमा गुप्ता, साइकोलॉजी विभाग, गोकुल दास हिंदू गर्ल्स कॉलेज, मुरादाबाद
प्रो० अनुराधा सिंह, साइकोलॉजी विभाग, आर०जी० पी०जी० कॉलेज, मेरठ
प्रो० बंदना पांडे, हिंदी विभाग, गोकुल दास हिंदू गर्ल्स कॉलेज, मुरादाबाद
प्रो० पूनम देवदत्त, डायरेक्टर सेंटर फॉर साइकोलॉजी एवं हुमन बिहेवियर, शोभित डीम्ड यूनिवर्सिटी
डॉ० गीता सिंह, असिस्टेंट प्रोफेसर, साइकोलॉजी विभाग, ए०के०पी० पी०जी० कॉलेज, खुर्जा, बुलंदशहर
डॉ० रूपाली गुप्ता, असिस्टेंट प्रोफेसर, अंग्रेजी विभाग, गोकुल दास हिंदू गर्ल्स कॉलेज, मुरादाबाद
साक्षी शुक्ला, असिस्टेंट प्रोफेसर, रसायन विज्ञान विभाग, गवर्नमेंट पी०जी० कॉलेज, न्यू टेहरी, टेहरी गढ़वाल, उत्तराखंड

Managing Editor : Vishal Mithal

- शोधमंथन त्रै–मासिक जर्नल है, यह विशेष अंक है।
- शोधमंथन में पूर्व प्रकाशित लेख व पत्र प्रकाशित नहीं किये जाते।
- शोधमंथन के प्रबन्ध सम्पादक पूर्व निर्धारित हैं। यथा समय अतिथि सम्पादक चयनित किये जाते हैं।
- प्रकाशित सामग्री का कॉपी राइट जर्नल अनु बुक्स, मेरठ का है।
- अपना शोध पत्र प्रकाशित करवाने के लिये ई–मेल के द्वारा अपने पूर्ण पते के साथ भेजे।
- सम्पादकीय समिति का निर्णय अन्तिम होगा।
- **Authors are responsible for the cases of plagiarism.**

Published by Mithal K., Journal Anu Books, Meerut
Printed by D.K. Fine Art Printers Pvt. Ltd., New Delhi

शुभकामना संदेश

अत्यन्त हर्ष का विषय है कि गोकुलदास हिंदू गर्ल्स कॉलेज की ओर से अनु पब्लिकेशन, मेरठ द्वारा प्रकाशित शोध पत्रिका 'शोधमंथन' का विशेषांक, फरवरी 2023 प्रकाशित होने जा रहा है, जिसका मुख्य विषय है 'बदलते हुए पर्यावरण का प्रभाव'। इसके लिए मैं पत्रिका की मुख्य संपादिका प्रो० डॉ० चारू मेहरोत्रा, प्राचार्या, गोकुलदास हिन्दू गर्ल्स कॉलेज, मुरादाबाद एवं सह–संपादिका डॉ० शेफाली अग्रवाल, असिस्टेन्ट प्रोफेसर, गोकुलदास हिन्दू गर्ल्स कॉलेज, मुरादाबाद को हार्दिक शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ।

मुझे आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि पर्यावरण जैसे ज्वलन्त वैश्विक मुद्दे पर आधारित यह शोध पत्रिका शोध छात्रों एवं सभी पाठकों के लिए अत्यन्त उदपयोगी सिद्ध होगी।

शुभकामनाओं सहित।

शैलेन्द्र कुमार सिंह (आई०ए०एस०)
जिलाधिकारी मुरादाबाद/
प्राधिकृत नियन्त्रक
जी०डी०एच०जी० कॉलेज, मुरादाबाद

ISSN: (P) 0976-5255 (e): 2454-339X
Impact Factor: 8.870 (SJIF)

शोधमंथन

हिन्दी शोध पत्रिका

A Peer Reviewed & Refereed International Journal in Hindi

Vol. XIV **Special Issue** **Feb. 2023**

https://doi.org/10.31995/shodhmanthan

अनुक्रमणिका

1. समान नागरिक संहिता एंव लैगिक न्याय एक विश्लेशणात्मक अध्ययन 1
डॉ० मीनाक्षी शर्मा, डॉ० प्रीति शर्मा
2. पर्यावरणीय परिवर्तन : साहित्य, धर्म, संस्कृति पर प्रभाव 3
प्रीति सिंह
3. अनुसूचित जाति एवं गैर अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के स्वभाव एवं उसके आयामों का उनकी शैक्षिक उपलब्धि के साथ संबंध का अध्ययन 7
प्रो० नन्दलाल मिश्रा, डॉ० अवनीश द्विवेदी
4. भारत की धरोहरें 11
डॉ० बाल चन्द्र गोविंद राव कुलकर्णी
5. भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन और जवाहर लाल नेहरू 14
प्रो० फ़ैज़ान अहमद
6. कस्तूरबा गाँधी : आदर्श नारी एवं सेवानिष्ठ पत्नी 20
बिजेन्द्र कुमार श्रीवास्तव, डॉ० मनोज कुमार सिंह
7. छात्रों में मूल्यों के प्रति उदासीनता का अध्ययन 24
डॉ० मृत्युंजय मिश्रा, प्रोफेसर (डॉ०) नन्दलाल मिश्र
8. पुरुषार्थ चतुष्ट्य में धर्म का विवेचन 29
घनश्याम शर्मा
9. कविता का लोकपक्षीय चिंतन और विजेन्द्र की कविता 34
डॉ० हरिहरानंद
10. वनों के अवैज्ञानिक और व्यावसायिक दोहन का समाज एवं पारिस्थितिक तंत्र पर प्रभाव (उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्र के संदर्भ में) 38
प्रो० किरन त्रिपाठी
11. जनजाति उपयोजना क्षेत्र में महिला विकास का स्तर 43
डॉ० प्राची शास्त्री
12. नैतिक अन्तर्द्वन्द्व एवं विकास 49
प्रो० नन्दलाल मिश्र, मेधा मिश्रा
13. भारत मे नगरीकरण की गत्यात्मक्ता : एक भोगौलिक विवेचन 53
डॉ० जे० पी० शर्मा,
14. पर्यावरण : वर्तमान में सामाजिक एवं सांस्कृतिक विरासत 58
डॉ० ओम प्रकाश चौधरी, मानसी चौधरी
15. पर्यावरण प्रदूषण के कारण तथा उनका निदान 62
प्रो० पुनीता शर्मा
16. भारत में सतत् विकास– चुनौतियों और रणनीतियों का एक अध्ययन 67
डॉ० रविन्द्र भारद्वाज, डॉ० विवेक उपाध्याय

17. रेखना मेरी जान : ग्लोबल वार्मिंग में प्रेम की अनूठी दास्तान 71
प्रो० सीमा अग्रवाल
18. अभिवृत्तियों पर लिंग एवं जाति के प्रभाव का अध्ययन 75
डॉ० गीता सिंह
19. किशोरावस्था के विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण एवं मानसिक स्वास्थ्य के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन 81
नेहा श्रीवास्तव
20. साहित्य और संगीत 87
प्रो० प्रवीण सैनी
21. एक नजर में : हरित क्रान्ति 90
गौरव शर्मा
22. भारतीय संस्कृति भारत देश की अमूल्य धरोहर 95
प्रो० सुधा सिंह
23. दर्शन की सार्वभौमिकता 97
डॉ० सौरभ सक्सेना
24. भारत में पर्यावरण की समस्याएं और समाधान 100
प्रो० मीनाक्षी शर्मा, डॉ० प्रेमलता कश्यप
25. भारतीय कला में नारी का स्थान 103
अनामिका सक्सेना
26. वर्तमान परिवेश में भारतीय संस्कृति 106
श्रीमती आराधना कुमारी
27. श्री अरविन्द और पाश्चात्य दर्शन 108
डॉ० अदिती गोस्वामी
28. औद्योगिक क्षेत्र तथा कृषि उत्पादों का एक अध्ययन जिला फर्रुखाबाद के संदर्भ में 110
डॉ० मनीशा सक्सेना
29. माध्यमिक स्तर पर सरकारी एवं प्राइवेट विद्यालयों के शिक्षकों की आर्थिक एवं शैक्षिक स्थिति का तुलनात्मक अध्ययन 114
डॉ० सरोज पाण्डेय
30. सेवारत व असेवारत महिलाओं के किशोर बालक/बालिकाओं की संवेगात्मक परिपक्वता का तुलनात्मक अध्ययन 118
डॉ० साधना मिश्रा
31. धर्म और पर्यावरण का संबंध 122
डॉ० रवि कुमार
32. भारत–रोम व्यापार का सांस्कृतिक प्रभाव (अमरावती की बौद्ध कला के विशेष सन्दर्भ में) 125
डॉ० अरविन्द कुमार राय
33. राष्ट्रीय प्रगति और महिला सशक्तीकरण 128
डॉ० संगीता तिवारी
34. औद्योगिक तथा पर्यावरण निम्नीकरण– एक दृष्टिकोण 134
डॉ० मनीशा सक्सेना
35. कबीर और मीरा के काव्य में प्रेम के स्वरूप का तुलनात्मक विवेचन 137
प्रो० वंदना पाण्डेय
36. भारतीय साहित्य पर कोविड–19 का प्रभाव 139
राजेश कुमार
37. पर्यावरण समस्याएं एवं समाधान 143
डॉ० अनीता भारद्वाज

1

समान नागरिक संहिता एंव लैगिक न्याय एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ० मीनाक्षी शर्मा
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
नई टिहरी, टिहरी गढ़वाल, उत्तराखण्ड

डॉ0 प्रीति शर्मा
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, गृह विज्ञान विभाग
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
नई टिहरी, टिहरी गढ़वाल, उत्तराखण्ड

समान नागरिक संहिता पूरे देश के एक समान कानून के साथ–साथ सभी धार्मिक समुदायों के लिये, विवाह, तलाक, उत्तराधिकार इत्यादि विषयों पर भी समान कानून का प्रावधान करता है[1]। भारतीय संविधान के भाग–3 में वर्णित मौलिक अधिकार के अर्न्तगत अनुच्छेद–14 विधि के समक्ष समानता तथा विधि के समान संरक्षण का प्रावधान करता है[2]। वही अनुच्छेद 15 में व्यवस्था है कि राज्य किसी नागरिक के प्रति केवल धर्म, मूल वंश, जाति, लिंग या जन्म स्थान को लेकर विभेद नही करेगा[3]। सविधान में वर्णित इन अधिकारों एवं अन्य अधिकारों को सुनिश्चित् करने के लिये सम्पूर्ण देश में समस्त नागरिकों के लिये एक जैसे कानून का होना आवश्यक है। समान नागरिक संहिता एक देश एक नियम के सिद्वान्त को पुष्टि करती है जिसे सभी धर्मो को मानने वाले व्यक्तियों पर लागू किया जाना चाहिए। भारत के संविधान के अनुच्छंद 44 में समान नागरिक संहिता का स्पष्ट उल्लेख किया गया है, अनुच्छेद 44 के अनुसार, ''राज्य भारत के पूरे क्षेत्र में नागरिकों के लिये एक समान सिविल संहिता[4]।

ऐतिहासिक परिपेक्ष्य

समान नागरिक संहिता पर वहस औपनिवेसीक काल से चली आ रही है। वर्ष 1840 की लोकी रिर्पोट ने अपराधों, सबूतों और अनुबधों से सम्बन्धित, भारतीय कानूनों के संहिताकरण में एकरूपता के महत्व और आवश्यकता पर बल दिया। वर्ष 1859 की उद्घोषणा में भी ब्रिटिश सरकार ने धार्मिक मामलों में पूर्ण अहस्त़क्षेप का वादा किया इसलिये जब आपराधिक कानूनों को संहिताबद्ध किया गया तब व्यक्तिगत कानूनों को अलग–अलग समुदायों के लिये अलग–अलग कोडों द्वारा शामिल किया जाता रहा।

संविधान का प्रारूप तैयार करते समय जवाहरलाल नेहरू और डॉ बी0 आर0 अम्बेडकर जैसे प्रमुख नेताओं ने एक समान नागरिक संहिता के लिये अपनी सहमति जतायी परन्तु रूढिवादियों एंव धार्मिक कट्ठरपन्थियों के विरोध एंव नागरिकों में जागरूकता की कमी के कारण समान नागरिक संहिता को राज्य के नीति निर्देशक सिद्वान्तो में सम्मिलित किया गया। यघपि समान नागरिक संहिता को संविधान सभा द्वारा लागू नही करवाया जा सका परन्तु इस दिशा में कई सुधार अवश्य किये गये।

हिन्दू कानूनों में सुधार के लिये डॉ0 बी0 आर0 अम्बेडकर द्वारा बिल का मसौदा किया गया जिसने तलाक को वैध बनाया, बहुविवाह का विरोध किया, बेटियों को विरासत का अधिकार दिया परन्तु इस हिन्दू कोड बिल के तीव्र विरोध के बीच चार अलग–अलग कानूनों का एक संस्करण तैयार किया गया।

हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम 1956 मूल रूप से बेटियों को पैतृक सम्पति में उत्तराधिकार का अधिकार नही देता था परन्तु 9.9.2005 के अधिनियम में संशोधन किया गया। इसके अतिरिक्त विशेष माध्यम से इस असमानता को दूर किया गया। इसके अतिरिक्त विशेष विवाह अधिनियम–1954 के द्वारा किसी भी धार्मिक व्यक्तिगत कानून के बाहर सिविल विवाहों के लिये अनुमति प्रदान की गयी।

विभिन्न न्यायिक निर्णयों के माध्यम से समान नागरिक संहिता की दिशा में कदम आगे बढाये गये। सर्वप्रथम शहवानों केस (1985) में सर्वोच्च न्यायलय ने अखिल भारतीय आपराधिक संहिता के ''पत्नियों बच्चों और मॉता–पिता के भरण–पोषण ''प्रावधान धारा–125 के अन्तर्गत तीन तलाक एंव भरण–पोषण के अधिकार से वचित महिला शाहबानों के प़क्ष में फैसला सुनाया इसके अतिरिक्त, सर्वोच्च न्यायलय ने एक समान नागरिक संहिता की सिफारिश भी की परन्तु इस फैसले के पश्चात् देश में काफी विरोध प्रदर्शन, सभाएं

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

एंव आन्दोलन हुए, इस दबाव में आकर तत्कालीन सरकार ने 1986 में मुस्लिम महिला (तलाक पर सुरक्षा का अधिकार) अधिनियम पारित किया, जिसने मुस्लिम महिलाओं के लिये आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा–125 को लागू नही किया गया।

1986 मे डेनियल लतिफी केस के अन्तर्गत मुस्लिम महिला अधिनियम को इस आधार पर चुनौती दी गयी थी कि यह अनुच्छेद ,14 और 15 के अन्तर्गत समान अधिकार एंव अनुच्छेद 21 के अन्तर्गत जीवन जीने के अधिकार एंव का उल्लंघन करता है[6]। सुप्रीम कोर्ट ने इस कानून को सवैधानिक मानते हुए इसे दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के साथ मिला दिया और माना कि इद्दत अवधि के दौरान एक पत्नी द्वारा प्राप्त राशि इद्दत के समय गुजारा करने के साथ–साथ भविष्य के लिये भी पर्याप्त होनी चाहिए। इसी प्रकार सरला मुद्गल केस, जॉन वल्लमट्टम मामले इत्यादि मामलों में सर्वोच्च न्यायलय ने धर्म से आगे बढकर निर्णय दिये परन्तु समान नागरिक संहिता का प्रश्न जस का तस ही रहा।

भारतीय संविधान की प्रस्तावना में''1976 में 42 वे संविधान संशोधन के माध्यम से पंथनिरपेक्ष शब्द जोडा गया। जिससे स्पष्ट है कि भारतीय संविधान का ध्येय धार्मिक आधार पर होने बाले भेदभाव को समाप्त करना है, परन्तु अभी तक समान नागरिक संहिता होने से धार्मिक कानूनों की वजह से एक बडा वर्ग विशेष रूप से महिलाएं अपने अधिकारों से वंचित है एंव अन्याय का शिकार है।

लैगिक न्याय

लैगिक न्याय महिलाओं और पुरूषों के बीच उन असमानताओं को समाप्त करने पर जोर देता है जो परिवार, समुदाय, बाजार और राज्य में उत्पादित एंव पुनरूत्पादित की जाती है। देश में समान नागरिक संहिता का पालन ना होने से लैगिक न्याय की प्राप्ति भी सम्भव नही हो पर रही है। भारतीय संविधान प्रत्येक भारतीय नागरिक को समान अधिकार प्रदान करता है, परन्तु शादी, तलाक, उत्तराधिकार जैसे मामलों में हमेशा स्त्री को अन्याय झेलना पड़ता है। समान नागरिक संहिता के माध्यम से सदियों से धर्म के नाम पर होने वाले अन्याय को समाप्त करने में सहयोग मिलेगा एंव महिलाओं के समान अधिकार सुनिश्चित् किये जा सकेंगे।

भारतीय परिपेक्ष्य में देखा जाये तो मुस्लिम महिलाओं को विवाह, तलाक आदि के सम्बन्ध में व्यक्तिगत कानूनों से वचित किया जाता है जबकि पाकिस्तान, बंग्लादेश, तुर्की इत्यादि देशों में महिलाओं को संहिताबद्ध व्यक्तिगत अधिकार प्राप्त है। समान नागरिक संहिता से ना केवल लैगिक न्याय अपितु लैगिक समानता की भी प्राप्ति होगी। आज जहॉ विभिन्न धर्मो के अनुसार विवाह, विरासत आदि पुरूष प्रधान है, आजादी के सात दशकों बाद भी महिलाएँ समानता के लिये संघर्ष कर रही है ऐसे में सभी लिंग, जाति, धर्मो के लिए एक कानून आवश्यक है।

समय–समय पर सर्वोच्च न्यायलय द्वारा सरकारों को समान नागरिक संहिता बनाने की दिशा में निर्देशित किया गया है समान नागरिक संहिता से न्याय प्रकिया में धर्मो के अलग–अलग नियमों के कारण होने वाली सुनवाई में होने वाला विलम्ब कम किया जा सकेगा एंव विवादों का निपटारा भी शीघ्र होगा। समान नागरिक संहिता लागू होने से राजनीतिक गुटबाजी करने का मुद्दा समाप्त होगा। विभिन्न धर्मो में एक समान कानून देश की एकता को भी सुदृढ करेगा।

समान नागरिक संहिता के विभिन्न लाभों के साथ–साथ विभिन्न चुनौतियों जैसे–देश की 17–18 करोड़ मुस्लिम जनसंख्या का विरोध, मेघालय, मणिपुर जैसे राज्यों को स्थानीय मान्यताओं के अनुरूप प्राप्त मान्यता का प्रश्न, आदिवासियों को विवाह, जमीन जायदाद को लेकर प्राप्त विशेष रियायत प्राप्त है उसका क्या होगा? हिन्दूओं की अलग–अलग जाति की भी भिन्न–भिन्न मान्यताएँ है वैसे ही बौद्ध एंव जैन की विशेष मान्यताओं को हटाना भी विरोध का विषय बन सकता है। तमाम चुनौतियों एवं विरोध को ध्यान में रखकर समान नागरिक संहिता लागू करने से पूर्व नागरिकों के मध्य व्यापक शिक्षा, जागरूकता कार्यक्रम चलाये जाने चाहिएं, सभी धर्मो के हितों को ध्यान में रखकर ही नये कानून का मसौदा तैयार किया जाना चाहिएं, देश के समस्त नागरिकों विशेष रूप से महिलाओं के व्यापक हितों को ध्यान में रखकर एंव सदियों से महिलाओं पर धर्म के आधार पर जो अनुचित व्यवहार किया जा रहा उसको दूर करने के लिए वर्तमान समय में समान नागरिक संहिता लागू किया जाना अतिआवश्यक है।

सन्दर्भ

1. https://en.m.wikipedia.org/wiki/uniform_civil_code.16-11-2022.9am
2. भारत का संविधान, अनुच्छेद–14
3. भारत का संविधान, अनुच्छेद–15
4. भारत का संविधान, अनुच्छेद–44
5. https:// Indian kanoon.org/ doc/823221. 18-11-2022 10.05 am
6. https:// Indian kanoon.org/ doc/410660. 18-11-2022 11.05 am
7. https://www.unwomen.ong/en/digital-library/publications/2010/1/gender-justice-key-to-achieving-themillennium-development-goals

2

पर्यावरणीय परिवर्तन : साहित्य, धर्म, संस्कृति पर प्रभाव

प्रीति सिंह
सहायक प्राध्यापिका, हिन्दी विभाग
गोकुलदास हिन्दू गर्ल्स कॉलेज, मुरादाबाद

हिन्दी शब्द 'पर्यावरण' 'परि' तथा 'आवरण' दो शब्दो से मिलकर बना है। 'परि' का अर्थ है – 'चारो तरफ' तथा 'आवरण' का अर्थ है – 'घेरा'। अर्थात् प्रकृति का वह आवरण जो उसे चारों तरफ से घेरे हुए है यथा वायु, जल, मृदा, पेड़–पौधे तथा प्राणी आदि सभी पर्यावरण के अंग है। 'गोस्वामी तुलसीदास' जी ने 'रामचरित मानस' में लिखा है –

''छिति, जल, पावक, गगन समीरा।
पंच रचित अति अधम शरीरा।।''

पर्यावरण चिंतन की अवधारणा के पीछे एक लम्बा संक्रमणकालीन दौर रहा है। जिसके बीज यूरोप की औद्योगिक क्रान्ति, प्रथम तथा द्वितीय विश्व युद्ध, शीत युद्ध, अरब युद्ध, ओजोन क्षरण, परमाणु बम के परीक्षणों, वायु प्रदूषण से होने वाली मौतों की संख्या में वृद्धि, जनसंख्या में अप्रत्याशित बढ़ोत्तरी तथा विकास की अंधी–दौड़ की पूर्ति हेतु संसाधनो का अंधाधुंध दोहन आदि में देखे जा सकते है।

जबकि भारतीय अवधारणा इसके ठीक विपरीत है। भारतीय मनीशा में यह बात दीर्घकाल से बैठी हुई है कि हम सब प्रकृति के ही अंग है हमारा शरीर प्राकृतिक शक्तियों का ही पूँजीभूत रूप है। भारतीय संस्कृति में अग्नि, नदियाँ, वृक्ष सूर्य, पशु–पक्षी आदि प्राकृतिक घटकों को पूजनीय माना जाता रहा है। यूरोप के आधिपत्यवाद की अपेक्षा भारतीय संस्कृति प्रकृति के साथ सामंजस्य पूर्ण कदमताल करती हुई आगे बढ़ी है। अधिकतर भारतीय पर्व और त्यौहार भी प्रकृति से जुड़े है। चाहे वो बैसाखी हो या बसंत पंचमी या सावन।

पर्यावरण को हमारे यहाँ जीवन की रीढ़ माना जाता है। ''वृक्ष हमारे लिए जमीन पर चुपचाप खड़ी रहने वाली हरी चीज कभी नहीं रहे। ये हमारे जीवन में रचे–बसे रहे हैं। हमने इन्हें अपनी कथा–कहानियों, लोकगीतों और नाना कलाओं में संजोए रखा है। हिन्दी कवि सोहन लाल द्विवेदी जी ने 'प्रकृति का सन्देश' कविता में सम्पूर्ण मानव जाति को प्रकृति से सीख लेने की बात कही है –

''पर्वत कहता शीश उठाकर, तुम भी ऊँचे बन जाओ,
सागर कहता है लहराकर, मन में गहराई लाओ,
समझ रहे हो क्या कहती है, उठ–उठ गिर–गिर तरल तरंग उमंग
पृथ्वी कहती धैर्य न छोड़ो कितना ही हो सिर पर भार,
नभ कहता है फैलो इतना, ढक लो तुम सारा संसार।

पर्यावरण और साहित्य, धर्म, संस्कृति का अर्न्तसम्बन्ध

पर्यावरण और साहित्य का आपस में घनिष्ठ सम्बन्ध है। दोनों एक दूसरे के पूरक है। आदिकाल से ही पर्यावरण और साहित्य का आपस में सम्बन्ध दिखता है। 'आदिकवि वाल्मिकी' ने भी अपनी रामायण में लिखा है, ''क्रौंच पक्षी का रूदन सुनकर ही मुझे काव्य रचना करने की प्रेरणा मिली। महाकवि कालिदास का सम्पूर्ण रचना संसार प्रकृति की गोद में ही जन्मा। विरह का बारहमासा द्वारा चित्रण 'रामचरितमानस' में राम द्वारा जंगल के पशु–पक्षियों द्वारा माता– सीता का पता पूछना–

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

''हे खग – मृग, हे मधुकर श्रेनी।
तुम देखी सीता मृगनयनी।।

हिन्दी कवियों का भी प्रकृति से गहरा सम्बन्ध दिखाई पड़ता है। भक्तिकालीन कवि 'कबीरदास' जी ने पर्यावरणीय उपादानों का प्रतीक रूप में प्रयोग किया है। यहाँ पर उन्होंने नलिनी को आत्मा का तथा जल को ब्रह्म का प्रतीक मानकर आत्मा और परमात्मा के सम्बन्ध की व्याख्या की है।

''काहे री नलिनी तू कुम्हिलानी, तेरे ही नाल सरोवर पानी।''

प्रेमाश्रयी कवि 'मलिक मुहम्मद जायसी' ने भी अपनी रचना 'पद्मावत' के 'नागमती वियोग वर्णन' में 'नागमती की विरह दशा का वर्णन बारहमासा में किया है।

''नागमती कौअें को अपना दूत मानकर कहती है
पिउ सो कहेउं संदेसड़ा, हे भौरा, हे काग।
सो धनि विरहे, जरि मुइ, ते हि क धुंआ हम्मलाग।।

कृष्णभक्तिकालीन महाकवि 'सूरदास' जी ने पर्यावरण को अपनी पूर्ण चेतना के साथ उद्दीपन और आलंकारिक रूप में चित्रित किया है। संयोग दशा में पर्यावरण मानव हृदय के उल्लास और आनन्द को बढ़ाता है किन्तु विरह दशा में वह हृदय को अत्यधिक व्याकुल बना देता है।

''पिया बिनु साँपिनि कारी राति।
कबहुँ जामिनि होत जुन्हैया डसि उलटी ह्वे जाति।।''

कवि रहीम ने भी प्रकृति से मानव को संदेश लेने के लिए प्रेरित किया।

''वृक्ष कबहूँ नहिं फल भखै, नदि न संचै नीर।
परमारथ के कारनै, साधुन धरा सरीर।।

छायावादी काव्य तो प्रकृति प्रेम से भरा पड़ा है। छायावादी कवि 'सुमित्रानन्दन पन्त तो कहते है। ''मुझे कविता करने की प्रेरणा प्रकृति से मिली'' कवि ने गंगा को नारी का रूप देकर उसका चित्रण इस प्रकार किया है –

''सैकत शैय्या पर दुग्ध धवल,
तन्वंगी गंगा ग्रीष्म विरल,
लेटी श्रांत क्लांत निश्चल

छायावादी कवि 'जयशंकर प्रसाद' कामायनी में 'धरा' को मानवती वाटिका का रूप देते हुये लिखते है।

''सिन्धु सेज पर धरा वधू अब तनिक संकुचित बैठी सी,
प्रलय निशा की हलचल स्मृति में मान किये सी ऐंठी सी।।''

''निराला'' जी ने ''संध्या सुन्दरी'' कविता में संध्या को सुन्दरी का रूप प्रदान किया है –

''दिवसावसान का समय मेघमय आसमान से उतर रही है।
वह सन्ध्या सुन्दरी परी सी, धीरे – धीरे – धीरे।।''

आधुनिक युग की मीरा कही जाने वाली कवयित्री 'महादेवी वर्मा' जी ने अपना परिचय, बादल से दिया है।

''मै नीर भरी दुख की बदली।
परिचय इतना इतिहास यही, उमड़ी कल थी, मिट आज चली।''

प्रगतिवादी कवियों – केदारनाथ अग्रवाल की कविता वसंती हवा, नागार्जुन की कविता बादल को घिरते देखा है। प्रयोगवादी कवियों में अज्ञेय की कविता – 'कलगी बाजरे की प्रकृति से सम्बन्धित महत्वपूर्ण कविता है।

काव्य के साथ गद्य– साहित्य में प्रकृति अपने महत्वपूर्ण रूप में उपस्थित है। हिन्दी के महान सर्जक आचार्य 'हजारी प्रसाद द्विवेदी' ने अपने कई ललित निबंधों का विषय वनस्पति को बनाकर उससे अभूतपूर्व मानवतावादी निष्कर्ष निकाले है। उदाहरणतः अशोक के फूल, देवदारू, शिरीश के फूल आदि। रामवृक्ष बेनीपुरी का निबन्ध ''गेहूँ और गुलाब भी महत्वपूर्ण निबन्ध है जिसमें गेहूँ, मानवीय भूख और गुलाब, सौन्दर्य का प्रतीक है। विद्या निवास मिश्र का निबन्ध चितवन की छाँह, कुबेरनाथ राय के निबन्ध प्रकृति से सम्बन्धित है।

आधुनिक काल के महाकाव्य 'कामायनी' में 'जयशंकर प्रसाद ने यह दर्शाया है कि प्रकृति के प्रति निर्मम दोहन का भाल हमारी संस्कृति में हमेशा से अस्वीकार रहा है।

कामायनीकार ने ''चिन्तासर्ग में ऐसे महानाश की कथा कहकर अन्धभोग के प्रति हमें आगाह किया है। 20वीं व 21वीं शताब्दी पर्यावरण चिंतन के हिसाब से जागरूकता की कसौटी पर सफल प्रतीत होती जान पड़ती है। जहाँ न सिर्फ साहित्य बल्कि अनेक स्तरों पर पर्यावरणीय चेतना दिखाई दी। यहाँ आकर हमने समझा की पर्यावरण का विषय केवल प्रदूषण तक सीमित नहीं है। इसका सबसे प्राथमिक पहलू प्राकृतिक संसाधनों के स्वतः घटित पारस्परिक संतुलन की रक्षा है।

''सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड एक कुटुम्ब है, यहाँ किसी का अलग अस्तित्व नहीं है।''

गाँधी जी ने भी कहा है– ''प्रकृति के भण्डार में हर किसी की जरूरतें पूरी करने को यथेष्ट संसाधन है, पर किसी भी लालच को पूरा करने में यह भण्डार असमर्थ है, जैसे–2 सभ्यताओं ने विकास किया, वैसे–2 नई–नई समस्याऐं भी हमारे सामने पनपी है। पर्यावरण को लेकर जो भी आधुनिक चिंतन हुआ उसका विस्तार कथा–साहित्य में ही प्राप्त हुआ है। एक आधुनिक विधा में आधुनिक दौर की समस्याओं पर नये सिरे से विचार–विमर्श हुआ है।

प्राकृतिक चेतना के कई स्तर आधुनिक उपन्यासों में दिखाई देते है–

1. इंसानी श्रम और कुदरती प्रणाली की जगह मशीनी और कृत्रिम प्रणालियों का प्रचलन।
2. विकास की आड़ में प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन।
3. आदिवासियों से उनका मूल निवास स्थान छिनकर उनके जीवन को नष्ट करने वाले कारखानों का निर्माण।

पर्यावरणीय चिंतन को केन्द्र में रखकर हिन्दी–साहित्य में अनेक उपन्यास कहानियाँ लिखी गई ''मरंग घोड़ा नीलकंठ हुआ (महुआ माजी) रह गई दिशाऐं इसी पार (संजीव) हिडिम्ब (एस0आर0 हरनोट) व कुइयांजान (नासिरा शर्मा) आदि। इन उपन्यासों में पर्यावरणीय चिंतन से सम्बन्धित प्रश्नों को प्रमुखता से उठाया गया है। 'रह गयी दिशाऐं इसी पार, में 'संजीव' जीव – वैज्ञानिकों द्वारा क्लोनिंग और जेनेटिक्स के क्षेत्र में की जाने वाली अभूतपूर्व उपलब्धियों को मानवीय संबंधों के जटिल संसार में पनपने वाली विसंगतियों की संज्ञा देते है। लेखक इसमें जीवों की महत्ता को दर्शाते है। 'मरंगघोड़ा नीलकंठ हुआ' उपन्यास में लेखिका आदिवासियों व प्रकृति के टूटते सम्बन्धों की मर्मातक पीड़ा को दर्शाती है। उपन्यास में सबसे बड़ा सवाल मनुष्य द्वारा प्राकृतिक तौर पर स्वस्थ जीवन जीने का अधिकार है ''नासिरा शर्मा'' का उपन्यास 'कुइयांजान' जल संरक्षण के हमारे प्रयास, पर्यावरण के प्रति हमारी चेतना को एक नया आयाम देता है। पूरा उपन्यास रोचक अंदाज और सहज तरीके से इस मुद्दे पर आवाज उठाता है इस आवाज पर अगर हमने अभी गौर नहीं किया तो शायद काफी देर हो जायेगी।

कविता उपन्यास के अतिरिक्त कहानी, रेखाचित्र, संस्मरण, यात्रावृतांत जैसी हिन्दी की अनेक विधाऐं हैं जिनसे पर्यावरणीय चिंतन पर विचार किया गया है। 'निर्मल वर्मा की पहाड़ों पर लिखी गयी कहानियां, अलका सरावगी की कहानियां महत्वपूर्ण है। वरिष्ठ साहित्यकार प्रभाकर श्रोत्रिय ने अपनी पत्रिका 'ज्ञानोदय' का एक अंक 'पानी' जैसे महत्वपूर्ण विषय पर निकाला था। आज की अनेक महत्वपूर्ण पत्रिकाऐं जल, जंगल और जमीन जैसे महत्वपूर्ण विषयों पर विशेषांक निकालती है। 'फणीश्वरनाथ रेणु' का रिपोतार्ज ''ऋण–जल–धन–जल' बाढ़ और सूखे वाले इलाकों का दौरा कर लिखी जाने वाली महत्वपूर्ण रचना है।

प्रेमचन्द जैसे युगप्रवर्तक साहित्यकार के साहित्य में पर्यावरणीय संवेदना के दर्शन होते है। 'पूस की रात' कहानी में अपने प्राकृतिक परिवेश का परदा खोलते है। ''रात को शीत ने धधकना शुरू किया।'' प्रेमचन्द ने 'दो बैलों की कथा' के माध्यम से प्रकृति के उदात्त संवेदनात्मक पक्ष को उभारा है। यात्रावृतांतो के अन्तर्गत निर्मल वर्मा के 'चीड़ों पर चाँदनी, अज्ञेय का 'अरे यायावर रहेगा याद, महत्वपूर्ण है।

संस्कृति ही सांस्कृतिकता का मूलाधार है। संस्कृति के कारण ही मनुष्य विकास की प्रक्रिया में अन्य जीवों की अपेक्षा सफल और विकसित प्राणी है। संस्कृति के अभाव में मनुष्य अपनी विकास यात्रा तय नहीं कर पाता है। संस्कृति का सामाजिक जीवन में विशेष महत्व है। संस्कृति समाज की ऐसी उपलब्धि है जो बहुत हद तक अमर है। इसलिए व्यक्ति और समस्त समाज के जीवन में संस्कृति एक धरोहर है।

लेकिन इक्कीसवी सदी समय, समाज, संस्कृति, देश और भाषा में परिवर्तन ला रहा है। परिवर्तन युग की मांग है।

संस्कृति उस महासागर के समान है, जो समस्त अच्छाईयों को समेटते हुए और विभिन्न प्रकार के अभिलेखों को आत्मसात करते हुए अपने मूल स्वरूप को स्पष्ट उज्जवल और सुरक्षित बनाए हैं।

भारतीय संस्कृति इसका अनुपम उदाहरण है। जो विभिन्न संस्कृतियों की जन्मदायी है जो दिन–प्रतिदिन के व्यवहार को नियंत्रित है वे मानव व्यवहार को दिशा, आदर्श व उद्देश्य प्रदान करता है। प्राचीन भारतीय संस्कृति की उपेक्षा और अंधानुकरण तथा भौतिक सुख की लालसा भी संस्कृति को प्रदूशित करने वाले कारण है। संस्कृति परम्पराओं से, विश्वासों से जीवन की शैली से, आध्यात्मिक पक्ष से भौतिक पक्ष से निरन्तर जुड़ी है। यह हमें जीवन का अर्थ, जीवन जीने का तरीका सिखाती है।

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

जवाहर लाल नेहरू : ''संस्कृति मन एवं आत्मा का विस्तार है।''

संस्कृति प्रदूशित होने का मुख्य कारण पाश्चात्य संस्कृति की नकल करना है। समय गतिशील है इस गतिशीलता के साथ–साथ हमारी संस्कृति में भी बदलाव दृष्टिगोचर हो रहे है, अपनी मूल संस्कृति को छोड़कर आज का मानव पाश्चात्य संस्कृति की चकाचौंध में घिरता चला जा रहा है, चाहे वह खान–पान हो, रहन सहन हो, आचार–विचार हो, अभिव्यक्ति का माध्यम हो, मानवीय मूल्यो के प्रति आज हमारी धारणा बदलती जा रही है। हमारी संस्कृति में प्रणाम नमस्कार आदर के रूप में प्रचलित है। आज हम पाश्चात्य संस्कृति की नकल करते हुए हाय हैलो करते है। आज किसी के पास किसी के लिये समय नहीं है। समय है भी तो लोग फोन में व्यस्त रहते है, परस्पर वार्तालाप समाप्त होते जा रहे है। जैसे–2 इंटरनेट व सोशल मीडिया का प्रभाव बढ़ रहा है वैसे वैसे हम नैतिकता को भूल रहे है सोशल मीडिया का प्रभाव गलत नहीं है यह हमारे ज्ञान के उच्चतम स्तर को बढ़ाने में सहायक हो रही है। हमें आधुनिक होना चाहिए किन्तु अपनी संस्कृति को नहीं भूलना चाहिए संयुक्त परिवारो के विखंडन के फलस्वरूप भावों में एकता एवं सौहार्द्र की भावना का लोप होता जा रहा है। परिणाम स्वरूप हमारी संस्कृति का भी विखंडन हो रहा है।

संस्कृति के बिना मानव–जीवन विश्रृंखलित हो जायेगा। समस्याओं को सुलझाने और परिस्थिति का सामना करने के लिए पुराने ढंगो के आधार पर नये ढंगो की खोज की जानी चाहिए। परम्पराऐं हमें धैर्य, साहस और आत्मविश्वास प्रदान करती है। भौतिकता की चाह की दौड़ में बेतहाशा भागने वालों की भीड़ सी लगी है आज मानव पाश्चात्य संस्कृति का दास बन चुका है यह दौड़ हमें कहाँ गिराएगी इसका अंदाजा भी नहीं लगाया जा सकता है। किसी देश की संस्कृति उसकी सम्पूर्ण मानसिक निधि को सूचित करती है। यह किसी खास व्यक्ति के पुरूषार्थ का फल नहीं, अपितु असंढय ज्ञात तथा अज्ञात व्यक्तियों के भगीरथ प्रयत्न का परिणाम होती है। सभी व्यक्ति सामर्थ्य और योग्यता के अनुसार संस्कृति के निर्माण में सहयोग देते है।

भारतीय संस्कृति में एक व्यक्ति नहीं अपितु लोक कल्याण की भावना निहित है–

''सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यंतु मा कष्चिद् दुःख भाग भवेत्।।''

पर्यावरणीय परिवर्तन ने धार्मिक व्यवस्था को उलट–पलट कर रख दिया है। भारतीय संस्कृति में धर्म का विशेष महत्व है। धर्म का अर्थ है ''जो धारण किया जाय'' वैदिक काल में धर्म का विशेष महत्व रहा है– धार्मिक पुस्तकों में ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, रामायण, श्रीमद्भागवतगीता का विशेष स्थान रहा है। ऋग्वेद में नदी को माता तथा वृक्षों का विशेष स्थान रहा। कमल को माता लक्ष्मी का स्थान प्राप्त था, पीपल में भगवान शिव, कदम्ब की डालियों में भगवान कृष्ण का निवास स्थान माना जाता था।

इसी तरह पशुओं में बैल को शिव की सवारी, चूहे को गणेश की सवारी माना गया है।

वैदिक काल की सारगर्भित वर्ण व्यवस्था का स्थान रूढ़िवादी विकृत जातिवादी व्यवस्था ने ले लिया है। मनुष्यों को उनके गुणों से नहीं वरन जाति से पहचाना एवं स्थान दिया जाता है जो भारतीय समाज के लिए एक बड़ा कलंक है।

विभिन्न धर्मो में उपस्थित अच्छाईयां, बुराईयों में बदलती चली जा रही है। धार्मिक सहिष्णुता का स्थान, धार्मिक कट्टरता लेती जा रही है।

वास्तव में आज पर्यावरणीय संवेदना के प्रति उसी तरीके के संरक्षण की भावना की दरकार है जो वैदिक साहित्य में उपलब्ध हुआ करती थी। हर पुरानी चीज बुरी नहीं होती है और हर नई चीज जरूरी नहीं की अच्छी ही हों। पर्यावरण का तो तात्पर्य ही है कि ''परित आवरणम पर्यावरण।'' वेदो में अगर तमाम नदियों का वर्णन है तो क्या यह अकारण है? अनेक हिन्दी कवियों ने ऋतुओं को आधार बनाकर जो बारहमासा रचा है, क्या वह निरूद्देश्य रूप में रचा गया है। आज इन सवालों से जूझने की जरूरत है। आज भी स्वामी निगमानन्द जैसे महान लोग हमारे देश में मौजूद है जो अपनी माँ यानी गंगा नदी को बचाने के लिए अपने प्राणो का सहर्ष उत्सर्ग कर देते हैं।

वास्तव में मानव को जीवन के आधारभूत तत्व के रूप में प्रकृति को समझने, उसे स्वीकारने, उसके प्रति संवेदनशील बने रहने का जरूरत है। जिससे हमारा देश पुनः एक बार 'सोने की चिड़िया' जैसे विशेषण को प्राप्त कर सके।

संदर्भ

1. संजीव. (2011). रह गई दिशा इसी पार. राजकमल प्रकाशन।
2. महुआ. (2012). माजी मरंग घोड़ा नीलकंठ हुआ. राजकमल प्रकाशन।
3. प्रो0 श्रीराम. (2009). समकालीन भारतीय साहित्य, विविध विमर्श. वाणी प्रकाशन. प्रथम संस्करण. पृष्ठ **11.**
4. दिवाकर, डॉ0 महेश. पर्यावरण और वाड्.मय पृष्ठ **122.**
5. दिवाकर, डॉ0 महेश. हिन्दी की विश्व यात्रा और सांस्कृतिक प्रदूषण. पृष्ठ **203.**
6. सिंह, डॉ0 बबलू. 21वीं सदी और साहित्यिक विमर्श. पृष्ठ **494.**

3

अनुसूचित जाति एवं गैर अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के स्वभाव एवं उसके आयामों का उनकी शैक्षिक उपलब्धि के साथ संबंध का अध्ययन

प्रो० नन्दलाल मिश्रा
अधिष्ठाता, कला संकाय
महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय
चित्रकूट सतना (म०प्र०)
ईमेलः *avnshdwivedi@gmail.com*

डॉ० अवनीश द्विवेदी
पीएच०डी० शिक्षाशास्त्र
महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय
चित्रकूट सतना (म०प्र०)

सारांश

ग्रीक चिकित्सक हिप्पोक्रेटस ने 400 ई0 पू0 में शरीर द्रव्यों के आधार पर स्वभाव का होना कहा था। तब से आज तक व्यक्तित्व के एक पक्ष स्वभाव पर पर्याप्त कार्य हुआ है। फिर भी अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के स्वभाव पर तथा उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर काफी कम काम हुआ है। प्रस्तुत अध्ययन में स्वभाव व उसके 15 आयामों का शैक्षिक उपलब्धि के साथ–सहसंबंध देखा गया है। अध्ययनार्थ सर्वेक्षण विधि का प्रयोग करते हुए 200 विद्यार्थियों का न्यादर्श चयनित कर प्रदत्त संलग्न कार्य किया गया है। पिपरसन सहसंबंध गुणांक का प्रयोग करके परिकल्पना परीक्षण तदुपरान्त सुझाव प्रस्तुत किए गए है।

मुल बिन्दू

अनुसूचित जाति के विद्यार्थी, गैर अनुसूचित जाति के विद्यार्थी स्वभाव, शैक्षिक उपलब्धि।

स्वभाव व्यक्तिगत विभिन्नताओं से संबंधित है, जो व्यवहार के विशिष्ट तरीकों से परिलक्षित होता है तथा किसी उद्दीपन के प्रति अनुक्रिया के ढंग को दर्शाता हैं। यह जन्मजात निर्धारित है परन्तु कुछ बहुत पर्यावरण के उसकी अनुक्रिया द्वारा भी निर्धारित हो जाता है। स्वभाव के अनेको आयाम है यथाः एक समाज में आसानी में घुलने मिलने वाला व्यक्ति मिलनसार कहलाता है। सत्तावादी व उसको दिखाने वाला गुण प्रबलता अपने मनोभावों को दिखाने वाला गोपनीय, वाद–विवाद, तर्क एवं समस्या समाधान में रूचि प्रदर्शित करने वाला चिन्तनशील, बिना विचार के कार्य करने वाला अधीर तथा साधारण, प्रसन्नचित्त एवं स्थिर व्यक्ति सौम्य स्वभाव का कहा जाता है। दूसरे के विचारों को स्वीकषति देना स्वीकृति आयाम, ईमानदार एवं अन्य व्यक्तियों का विश्वासपात्र उत्तरदायित्व आयाम को दर्शाता है। ऊर्जा एवं उत्साह सम्पन्न परिश्रम पर विश्वास रखने वाले व्यक्तियों में शक्ति आयाम होता है। सहयोगी समाज के अन्य व्यक्तियों का सहयोग करने वाला तथा अपने से उच्चस्थ अधीनस्थ व समकक्ष तीनो से सामंजस्य बैठाकर चलने वाला व्यक्ति होता है। स्थायी रूचियों वाला व्यक्ति दृढ़ होता है। जबकि गर्मजोशी आयाम स्वभाव वाला व्यक्ति उदार एवं छोटे–मोटे पक्षपात करने वाला होता है। दूसरो को निर्देश देना परन्तु निर्देश न मानना अक्रामक स्वभाव का व्यक्ति होता है। सहनशीलता आयाम दर्शाता है कि व्यक्ति शान्त, संतोषी परम्परावादी है। जबकि दृढ़ मस्तिष्क आयाम दर्शाता है कि व्यक्ति बुद्धिमत्तापूर्ण, विवेकी व सैद्धान्तिक है। उपरोक्त स्वभाव के आयामों का विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि से किस प्रकार सम्बन्ध है यह दर्शाना शोध का प्रमुख ध्येय है। स्वभाव के कौन से आयाम शैक्षिक उपलब्धि के लिये सहयोगी है उनकी पहचान करके व उनमें यथासम्भव वातावरण के द्वारा शैक्षिक उपलब्धि में उन्नति की जा सकेगी। अनुसूचित जाति के विद्यार्थी एवं अन्य विद्यार्थी जो भारतीय संविधान के अनुच्छेद 341 व अन्य अनुच्छेदों में वर्णित है एवं जिनकी शैक्षिक उपलब्धि सामान्यतयः कम रहती है। उनके लिए प्रस्तुत शोध के परिणाम उपयोगी होगें।

अध्ययन के उद्देश्य

अनुसूचित एवं गैर अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के स्वभाव व उसके मिलनसार, प्रबलता, गोपनीयता, चिन्तनशीलता, आवेग,

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

सौम्यता, स्वीकार्यता, उत्तरदायित्व, शक्ति, सहयोदृढ़ता, गर्मजोशी, आक्रामकता, सहनशीलता तथा दृढ़मस्तिष्क आयामों का उनकी शैक्षिक उपलब्धि के साथ संबंध का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पना

अनुसूचित जाति एवं गैर अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के स्वभाव व उसके आयामों का शैक्षिक उपलब्धि के साथ कोई सार्थक सहसंबंध नहीं है।

अध्ययन अभिकल्प

शोधकर्ता ने शोध हेतु वर्णनात्मक अनुसंधान के अन्तर्गत आनेवाली सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया है। न्यादर्श के रूप में शोधकर्ता ने हमीरपुर जनपद के कक्षा 11 एवं 12 में अध्ययनरत 14 से 18 वर्ष आयु के विद्यार्थियों को चयनित किया है। जिसमें 100 अनुसूचित जाति के विद्यार्थी व 100 गैर अनुसूचित जाति के विद्यार्थी है। चयनित न्यादर्श से प्रदत्त संकलन हेतु एन0के0 चड्ढ़ा व एस0 चन्दाना द्वारा निर्मित तथा नेशनल साइकोलाजिकल कार्पोरेशन आगरा द्वारा प्रकाशित डायमेंशन आफ टेम्परामेंट स्केल का प्रयोग किया गया है। उपकरण में कुल 152 कथन है जो कि स्वभाव के 15 आयामों से संबंधित है। विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के मापन का आधार उनके कक्षा 10 में प्राप्त अंक/ग्रेड है। परिकल्पना पीरक्षण हेतु कार्लपियरसन द्वारा प्रतिपादित गुणनफल आघूर्ण सहसंबंध गुणांक का प्रयोग किया गया है। जिसके लिए स्वतंत्रांश 98 तथा सारणी मान .195 को आधार बनाया गया है। जिसका सार्थकता स्तर 0.05 रखा गया है।

परिकल्पना परिक्षण

अनुसूचित जाति एवं गैर अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के स्वभाव व उसके आयामों मिलनसार प्रबलता, गोपनीयता, चिन्तनशीलता, आवेग, सौम्यता, स्वीकार्यता, उत्तरदायित्व, शक्ति, सहयोग, दृढ़ता, गर्मजोशी, आक्रामकता, सहनशीलता, तथा दृढ़मस्तिष्क का उनकी शैक्षिक उपलब्धि से कोई सार्थक सहसंबंध नहीं है।

तालिका

अनुसूचित जाति एवं गैर अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के स्वभाव एवं उसके आयामों का उनकी शैक्षिक उपलब्धि के संबंध का अध्ययन

क्र० सं०	विवरण	अनुसूचित जाति के विद्यार्थी		गैर अनुसूचित जाति के विद्यार्थी	
	स्वभाव व आयाम तथा शैक्षिक उपलब्धि	मध्यमान	सहसंबंध गुणांक (r)	मध्यमान	सहसंबंध गुणांक (r)
1	स्वभाव	75.58	.532*	85.30	.144
2	मिलनसार	06.90	.120	6.60	.251*
3	प्रबलता	5.25	.047	5.41	.071
4	गोपनीयता	5.38	.635*	5.43	.73*
5	चिन्तनशीलता	5.31	.802*	5.83	.482*
6	आवेग	3.87	.101	4.27	.132
7	सौम्यता	5.25	.452*	5.57	.030
8	स्वीकार्यता	4.2	.332*	3.96	.508*
9	उत्तरदायित्व	5.14	.253*	5.37	.067
10	शक्ति	6.86	.312*	7.26	.096
11	सहयोग	6.06	.128	7.22	.277*
12	दृढ़ता	4.65	.657*	5.34	.664*
13	गर्मजोशी	6.70	.097	8.34	.062
14	आक्रामकता	5.25	.041	5.61	.144
15	सहनशीलता	5.13	.097	6.43	.124
16	दृढ़मस्तिश्क	3.75	.692*	3.58	.281*
17	शैक्षिक उपलब्धि	54.85	–	68.87	–

98 स्वतंत्रांश तथा 0.05 सार्थकता स्तर पर सारणी मान 0.195

संख्या = 100 *, सार्थक सहसंबंध

आरेख

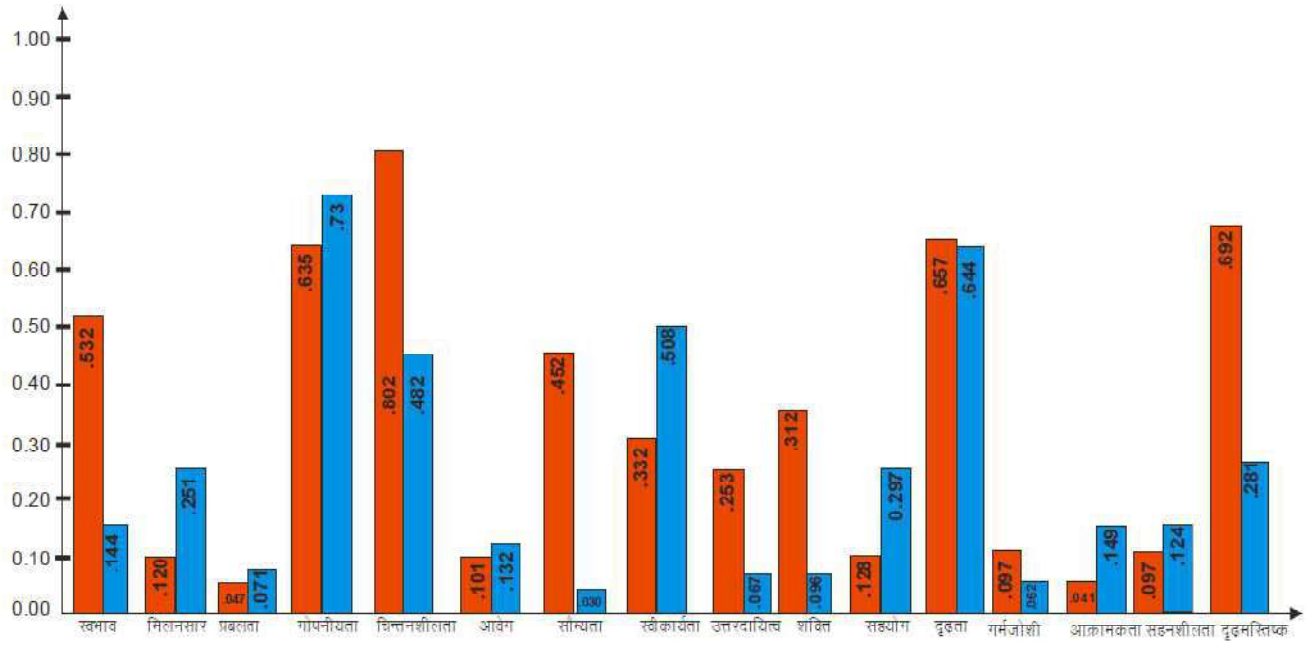

अनुसूचित जाति एवं गैर अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के स्वभाव व उसके आयामों का उनकी शैक्षिक उपलब्धि के साथ प्राप्त सहसम्बन्ध गुणांक का ग्राफीय प्रदर्शन

तालिका के अवलोकन से स्पष्ट है कि अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों स्वभाव व शैक्षिक उपलब्धि के मध्य परिगणित सहसंबंध गुणांक का मान .532 है जो कि सारणी मान 0.195 से अधिक है। अतः सार्थक सहसंबंध दर्शाता है। इसी प्रकार शैक्षिक उपलब्धि व स्वभाव के आयाम गोपनीयता का सहसंबंध गुणांक .635, चिन्तनशीलता का .802, सौम्यता का .452, स्वीकार्यता का .332, उत्तरदायित्व का .253, शक्ति का .312, दृढ़ता .657, व दृढ़मस्तिष्क का सहसंबंध गुणांक .692 प्राप्त हुआ है जो कि सार्थक सहसंबंध दर्शाते है। शेष मिलनसार .120, प्रबलता .047, आवेग .101, सहयोग .128, गर्मजोशी .697, आक्रामकता .041, सहनशीलता .097 प्राप्त सहसंबंध गुणांक सार्थक नहीं है।

इसी प्रकार गैर अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों जिनका स्वभाव व उसके आयामों तथा शैक्षिक उपलब्धि के मध्य परिणित सहसंबंध गुणांक का मान .195 से अधिक है। मिलनसार, गोपनीयता, चिन्तनशीलता, स्वीकार्यता, शक्ति, दृढ़ता तथा दृढ़मस्तिष्क है। शेष स्वभाव व उसके प्रबलता, आवेग, सौम्यता, उत्तरदायित्व, गर्मजोशी, आक्रामकता तथा सहनशीलता, शैक्षिक उपलब्धि के साथ सार्थक सहसंबंध नहीं दर्शाते है।

परिणाम से स्पष्ट है कि स्वभाव व उसके ज्यादातर वह आयाम जो नकारात्मक है उनका शैक्षिक उपलब्धि से सार्थक सहसंबंध नहीं पाया गया है। मिलनसार, सौम्यता, उत्तरदायित्व, सहयोग, आयामों का शैक्षिक उपलब्धि से सहसंबंध दोनो वर्ग विद्यार्थियों में भिन्न है। इसका कारण सांस्कृतिक पृष्ठभूमि है व शिक्षा के प्रति कम जागरूकता है अनुसूचित जाति के विद्यार्थी जो सौम्यता व उत्तरदायित्व से युक्त है उनकी शैक्षिक उपलब्धि ही उच्च है। उनका अध्ययन है जबकि गैर अनुसूचित जाति के विद्यार्थी जो मिलनसार व सहयोग को निभाने में समय लगाते है। वे भी शैक्षिक रूप से पिछड़ते नहीं है। उनका यह गुण शैक्षिक जागरूकता व गृह में अध्ययन के प्रति सकारात्मक वातावरण के कारण है।

अध्ययन की उपयोगिता

स्वभाव यद्यपि जन्मजात है फिर भी वातावरण द्वारा प्रभावित होता है। चिन्तनशीलता, गोपनीयता, सौम्यता, स्वीकार्यता, उत्तरदायित्व व दृढ़मस्तिष्क जैसे आयामों को उपयुक्त वातावरण द्वारा बढ़ाकर अनुसूचित जातियों का शैक्षिक पिछड़ापन दूर किया जा सकता है। अध्यापक, अभिभावक एवं संस्थायें इस हेतु प्रयास करें सबके साथ स्वयं छात्र भी अपने आप को प्रबलता, आवेग, गर्मजोशी, आक्रामकता व अतिसहनशीलता से बचें व इसको हतोत्साहित करने वाले व्यक्तियों, मित्रों का संग करे जिससे कि उनकी शैक्षिक उपलब्धि बढ़ सकें।

संदर्भ

1. गुप्ता, एस0पी0. (2011). व्यवहार परक विद्वानों में सांख्यिकी विधियाँ. शारदा पुस्तक भवनः प्रयागराज।

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

2. सिंह, डॉ0 अरूण कुमार. (2014). व्यक्तित्व का मनो विज्ञान. मोतीलाल बनारसीदासः नई दिल्ली।
3. सिंह, डॉ0 अरूण कुमार. (2007). शिक्षा, मनोविज्ञान एवं समाजशास्त्र में शोध विधियाँ. मोतीलाल बनारसीदास।
4. चड्ढ़ा, एन0के0., चन्दना, एस0. (2011). डायमेन्शन्स ऑफ टेम्परामेन्ट शेड्यूल. एन0पी0आर0सी0ः आगरा।
5. कैन्टरेल, पाल ई0. (2001). अस्टडी ऑफ टेम्परामेन्ट।
6. http://camphillchurch,org>temperament ent.
7. अन्दारबी, अजा. (2018). अस्टडी ऑफ अकेडमिक अचीवमेन्ट उमंग ट्राइवल एण्ड नान ट्राइवल।
8. एडोलसेन्ट्स ऑफ कश्मीर. http://researchgate.net/figure/
9. दास, रितामोनी. (2015). अस्टडी ऑन अकेडमिक अचीवमेन्ट ऑफ शेड्यूल कास्ट एण्ड शिड्यूलकास्ट स्टूडेन्टस इन रिलेशन टू एडजस्टमेन्ट एण्ड इन्टेलीजेन्स एण्ड सेकेण्ड इन आसाम. पीएच0डी0 एजूकेशन आसाम यूनिवर्सिटी।

4

भारत की धरोहरें

डॉ० बाल चन्द्र गोविंद राव कुलकर्णी
असिस्टेंट प्रोफेसर, इतिहास विभाग
लोकमान्य तिलक महाविद्यालय, वाडवानी
जिला– बीड० (महाराष्ट्र)
ईमेलः *drbgk68@gmail.com*

सारांश

''इस विश्व में सच्चा आनंद मनुष्य के सही इहलौकिक लक्ष्यों में निहित है और सच्चा आनन्द आत्मा, मन और शरीर के बीच स्वाभाविक समन्वय स्थापित करने और उसे बनाए रखने में है। किसी संस्कृति का मूल्यांकन इस बात से होता है कि उसने सामंजस्य की इस स्थिति को प्राप्त करने और अपने अभिव्यंजनात्मक उद्देश्यों और गतिविधियों के सही माध्यमों को किसी सीमा तक खोज लिया है।

भारत की स्थापत्य कला अलग–अलग विकसित एवं समृद्ध होती रही है जो भारत की विरासत है ये अलग–अलग क्षेत्रों में अलग–अलग शैलियों में अपनी विषय वस्तु के लिए हैं। इतनी विभिन्नता होने के बाद भी भारत की समृद्ध संस्कृति एवं सभ्यता का यशोगान करती है।''

श्री अरविन्द

विश्व धरोहर में भारत अपनी स्थापत्य कला के लिए सर्वोच्च स्थान पर आसीन है जिसे संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक संगठन द्वारा मान्यता प्राप्त है। भारत के ये स्थल अपनी सांस्कृतिक और प्राकृतिक विरासत को संजोये हुए हैं। भारत में इन धरोहरों का निर्माण प्रागैतिहासिक, वैदिक काल से लेकर वर्तमान समय तक मंदिरों, स्थलों और इमारतों के निर्माण ने देश के इतिहास को संजोये रखा है।

भारत अपने सामाजिक एवं आर्थिक जीवन में अनेकों विषमाओं के साथ एकता को दर्शाता है जिसका स्पष्ट उदाहरण यहाँ की सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक इमारतों में नज़र आता है। भारत ने अपनी प्रतिकूल परिस्थितियों में भी ग्रहणशीलता को अपनाकर एक अद्भुत संस्कृति का उदय किया जो उसको अपनी विशाल संस्कृति और सभ्यता विरासत के रूप में प्राप्त हुआ। इन्हीं में कुछ को विश्व धरोहरों में सम्मिलित किया गया है।

1. आगरा का लाल किला

1983 में यूनेस्को द्वारा शामिल भारत की प्रथम विश्व धरोहर लाल किले का निर्माण कार्य मुगल बादशाह अकबर ने 1556 में आरम्भ कराया। इस किले दीवाने आम सफेद संगरमर से निर्मित पहला भवन है। यह भवन तीन ओर से खुला है इसकी छत ऊँचे स्तम्भों पर आधारित है जो संगमरमर से निर्मित सुन्दर मेहराबों के द्वारा जोड़ी गई है। इसमें तख्त–ए–ताउत भी है जिस पर बादशाह बैठता था। इसके बाद दीवाने खास का निर्माण 1637 में शाहजहाँ ने करवाया जिसमें स्तम्भों और मेहराबों को सुन्दर पच्चीकारी से सुसज्जित किया गया। दीवाने आम एवं दीवाने खास के अतिरिक्त शीश महल जो एक शाही स्नानागार था, मोती मजिस्द, खास महल, मुसम्मन बुर्ज, नगीना मस्जिद एवं जामा मजिस्द आदि भवन भी है।

2. अजन्ता की गुफाएँ

1983 में यूनेस्को द्वारा घोषित भारत की दूसरी विश्व धरोहर में अजन्ता की गुफाएँ हैं। ये गुफाएँ महाराष्ट्र में औरंगाबाद जिले से 104 किमी0 उत्तर–पूर्व में स्थित हैं। एक विस्तृत पहाड़ी के पार्श्व में 29 गुफाएँ काटकर बनायी गई हैं। इनका निर्माण दूसरी सदी

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

ईसा पूर्व से सातवीं सदी ईस्वी तक हुआ। गुफा संख्या 9, 10, 19, 26, 29 चैत्य प्रकोष्ठ के रूप में है और शेष 24 बिहारों के रूप में। चैत्य स्थापत्य गुफा नं0 26 और विहार स्थापत्य में गुफा नं0–1 अजन्ता की गुफाओं में बोधिसत्व जीवन से सम्बंधित सजीव चित्रकारी की गयी है।

3. ताजमहल

1983 में यूनेस्को द्वारा भारत के विश्व धरोहर घोषित तीसरी इमारत ताजमहल है। इसका निर्माण मुगल बादशाह शाहजहाँ द्वारा किया गया। ताजमहल का मुख्य स्थापत्यकार उस्ताद अहमद लाहौरी तथा मुख्य मिस्त्री फारस का मुहम्मद ईसा खाँ था, इसका निर्माण कार्य 1631 में प्रारम्भ हुआ तथा 1653 में अर्थात 22 वर्षों में बनकर तैयार हुआ। ताजमहल के निर्माण में मकराना के संगमरमर का प्रयोग किया गया। इसकी कल्पना एक चतुर्भुज के रूप में की गई है जिसका एक सिरा उत्तर की ओर और दूसरा दक्षिण की ओर है। मकबरा एक 22 फीट ऊँचे आसन पर बना है उसका आकार वर्गाकार है उसके प्रत्येक कोने में एक छतरी और मध्य में फूला हुआ गुम्बद है जिसकी ऊँचाई 187 फीट है। आसन के प्रत्येक कोने में एक तीन मंजिला मीनार है जिसके ऊपर छतरी है। मकबरे के मध्य में एक अष्टकोणीय कक्ष है जिसके कोनों पर गलियारों से जुड़े छोटे कक्ष हैं उन सबका एक ही केन्द्र बिन्दु है अर्थात मध्य में बनी कब्र है। कब्र के चारों ओर काटकर बनाई गई जाली को छोड़कर रत्नों की जड़ावट से नमूने बनाए गए हैं। मकबरें में सभी वास्तुकलात्मक तत्वों को कुशलतापूर्वक परस्पर जोड़ा गया है जिससे सम्पूर्ण रचना में एक संतुलन और सांमजस्य दिखाई देता है।

4. एलोरा की गुफाएँ

आधुनिक महाराष्ट्र के औरंगाबाद से लगभग 25 किमी0 पश्चिमोत्तर में स्थित एलोरा की गुफाएँ यूनेस्को द्वारा 1983 में घोषित भारत के विश्व धरोहर में चौथे स्थान पर है। यहाँ कुल 34 शैलकृत गुफाएँ है। ये गुफाएँ विभिन्न कालों में बनी है। इनमें गुफा सं0–1 से 12 बौद्धों, 13–29 हिन्दुओं, 30–40 जैनियों की है। यहाँ भारतीय धार्मिक–चेतना के तीन प्रमुख स्तम्भों–हिन्दू, बौद्ध और जैन धर्मों के देवालय साथ–साथ होना राजाओं की धार्मिक सहिष्णुता का परिचायक है। एलोरा की कुल 34 गुफाओं में से सर्वाधिक प्रसिद्ध है। गुफा संख्या सोलह जो विश्व विख्यात कैलाश मंदिर है। यह समूचा मंदिर पहाड़ी के एक भाग को काटकर बनाया गया है और इसमें कोई जोड़ नहीं है। शिल्पियों ने पहाड़ी को और उसके विभिन्न भागों को तराशकर मूर्तियों की आकृतियों, उनके अंग प्रत्यंग का सूक्ष्मातिसूक्ष्म अंकन किया है। साथ ही आकाशलोक, स्वर्गलोक एवं गंधर्वलोक के देवताओं के साथ प्रकृति का सूक्ष्म अंकन किया गया है। एलोरा का स्थापत्य विशाल, भव्य और आश्चर्य चकित कर देने वाला है।

5. कोणार्क का सूर्य मंदिर

1984 में यूनेस्को द्वारा विश्व में भारत की धरोहरों में पाँचवे स्थान पर उड़ीसा प्रान्त में स्थित कोणार्क का सूर्य मंदिर भारतीय स्थापत्य का सर्वश्रेष्ठ नमूना है। कोणार्क का यह सूर्य मंदिर 'काले पैगोड़ा' के नाम से प्रसिद्ध है। इस मंदिर का निर्माण तेरहवीं सदी में खुर्दा नरेश नरसिंह देव ने करवाया था। यह मंदिर 875 फुट लम्बे और 540 फुट चौड़े प्रागंण में बनाया गया है सम्पूर्ण मंदिर पहियों वाले रथ की आकृति में बनाया गया है, जिसे सूर्य के सात घोड़े खींच रहे हैं। इसमें आधार पर निर्मित बारह पहिए या चक्र, बारह राशियों के प्रतीक हैं एवं सूर्य के सात घोड़े उसकी किरणों के रंगों के प्रतीक हैं। परन्तु यह मंदिर कभी पूरा नही हो पाया यह माना जाता है कि ऊपरी ढाँचे का निर्माण पूरा होने से पहले इसकी नींव धसने लगी।'' यह मंदिर भारतीय वास्तु शिल्पियों के सबसे सुन्दर वास्तु कलात्मक प्रयासों में से एक है। मंदिर इतने जटिल और सूक्ष्म शैल्पिक अंलकरण वाला है कि प्रत्येक पत्थर एक अनुपम आभूषण जैसा प्रतीत होता है।

6. महाबलीपुरम् के स्मारक

1984 में यूनेस्को द्वारा विश्व धरोहर घोषित महाबलीपुरम्, जिसे मामल्लपुरम भी कहते हैं, भारत के दक्षिणी समुद्र तट पर मद्रास से 48 किमी0 पर स्थित है। इसका संस्थापक नरसिंहवर्मन था। आज यहाँ केवल एक ही चट्टान से बने मंदिर और उत्कीर्ण मूर्तियाँ ही शेष बची हैं। पल्लव कालीन वास्तुकला के इन सुन्दरतम् उदाहरणों का निर्माण मामल्ल शैली में हुआ है। मामल्ल शैली के अन्तर्गत दो प्रकार के मंदिर आते हैं– (1) मण्डप तथा (2) रथ। मण्डप में एक स्तम्भ युक्त बरामदा एवं अन्दर की ओर खोद कर बनाए गए एक या दो कमरे आते हैं। महाबलीपुरम् के प्रसिद्ध मण्डप हैं– बराह, महिष, और पंच पाण्डव मण्डप। दूसरे प्रकार के मंदिर हैं– रथ मंदिर है यह सप्त पैगोडा के नाम से जाने जाते हैं। ये एकाश्मक है और ठोस चट्टानों को काटकर बनाए गए हैं। महाबलीपुरम् के मण्डप द्रौपदी और पाँच पाण्डवों के नाम से जाने जाते हैं यथा धर्मराज रथ, भीमरथ, द्रौपदी रथ। वास्तव में से रथ शैव मंदिर है।

महाबलीपुरम् के समुद्र तट पर स्थित शोर मंदिर अपनी श्रेष्ठ कारीगरी के लिए प्रसिद्ध है जो सदियों से जलवायु परिवर्तनों एवं विभिन्न प्रहारों को सहता हुआ आज भी भारतीय उत्कृष्ट स्थापत्य को दर्शाता है।

7. हवा महल

राजस्थान के जयपुर में स्थित हवा महल राजपूतों की शाही विरासत, वास्तुकला और संस्कृति का प्रतीक है। 1798 में महाराजा सवाई प्रताप सिंह द्वारा निर्मित इस महल का डिजाइन लाल चंद उस्ताद द्वारा तैयार किया गया था। किसी राजमुकुट की

भांति बिना किसी नींव के बनने वाली, 15 मीटर ऊँची, यह इमारत दुनिया की सबसे ऊँची इमारत है। चूने, लाल और गुलाबी बलुआ पत्थर से निर्मित हवा महल में 953 जालीदार झरोखे हैं जिससे प्रातः काल पड़ने वाली सूर्य की रोशनी एक अनूठा दृश्य उत्पन्न करती है। वेंचुरी प्रभाव के कारण इन झरोखों से आने वाली ठण्डी हवा, गर्मी में भी महल को वातनुकूलित रखती है। राजपूत और मुगल स्थापत्य का मिश्रण है। इस महल की दीवारों पर बनी फूल–पत्तियाँ राजपूत शिल्प कला एवं पत्थरों पर की गई नक्काशी मुगल शिल्प कला के नमूने हैं।

8. साँची का बौद्ध स्तूप

मध्य प्रदेश राज्य की राजधानी भोपाल से 40 किमी0 दूर साँची में मौर्य सम्राट अशोक द्वारा तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व में एक ऊँची पहाड़ी पर स्तूप का निर्माण कराया गया। साँची बौद्ध धर्म का प्रमुख स्थल एवं बौद्ध कला स्थापत्य का अद्भुत नमूना है। इसके परिक्रमा पथ के साथ चारों दिशाओं में बालू, पत्थर से निर्मित चार तोरण हैं। तोरणों के लम्बे–लम्बे पट्टकों पर बुद्ध के जीवन से संबंधित कथाओं का मूर्तियों के रूप में अंकन किया गया है जिसके द्वारा भारतीय जीवन के विविध पक्षों के दर्शन होते हैं। साँची स्तूप में बुद्ध के जीवन के विविध पक्षों को प्रतीक के रूप में दर्शाया गया है। वर्ष 1989 में युनेस्को द्वारा साँची के स्तूप को विश्व विरासत स्थल का दर्जा प्रदान किया गया।

9. गोवा के चर्च

16वीं एवं 17वीं शताब्दी के लगभग पुर्तगालियों द्वारा गोवा में अनेक चर्चों और गिरिजाघरों का निर्माण किया गया। जिनमें प्रमुख थे– बेसिलिका ऑफ बीम जीसस, सेंट कैथेड्रल, सेंट फ्रांसिस असीसी के चर्च और आश्रम, चर्च ऑफ लेडी ऑफ रोजरी, चर्च ऑफ सेंट आगस्टीन और सेंट कैथरीन चैपल। ये चर्च पुर्तगाली शैली के हैं जो मध्यकालीन पुर्तगाली और इस्लामी कला के सामंजस्य के प्रमाण हैं। इनमें से कुछ के स्तम्भों पर शिलालेख भी पाए गए हैं।

10. खजुराहो के मंदिर

भारत के हृदय स्थल में स्थित मध्य प्रदेश में 10–12वीं शताब्दी के मध्य चन्देल शासकों द्वारा बनवाये गये खजुराहों के मंदिर वैष्णव, शैव, शाक्त और जैन धर्म से सम्बंधित है। इन मंदिरों में ऊँचे चबूतरे पर निर्मित पूर्ण विकसित शिखरों वाले गर्भगृह में मुख्य देवता की मूर्ति स्थापित की गयी है। मंदिर के चारों ओर प्रदक्षिणा पथ होने से इन्हें 'सांधार प्रासाद' कहा जाता है। मंदिर का अपूर्व सौन्दर्य, सुडौल आकार सुदीर्घ विस्तार और बारीक नक्काशी प्रभावोत्पादक और बेजोड़े है।

संदर्भ

1. श्रीवास्त, के0सी0. (2001–2002). 'भारत की संस्कृति तथा कला'. युनाइटेड बुक डिपोः इलाहाबाद।
2. जैन, एच.सी. (1995). 'ऐतिहासिक स्थल', जैन पुस्तक मंदिरः जयपुर।
3. खुराना, के0एल0. (2006). 'मध्यकालीन भारतीय संस्कृति'. लक्ष्मी नारायण अग्रवालः आगरा।
4. श्रीवास्तव, के0सी0. (2011–12). 'प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति'. युनाइटेड बुक डिपोः इलाहाबाद।
5. बाशम, ए0एल0. (1967). ''अद्भुत भारत''. बाल प्रेसः नई दिल्ली।

5

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन और जवाहर लाल नेहरू

प्रो० फ़ैज़ान अहमद
प्रोफेसर (राज0वि0)
एवं कार्यवाहक प्राचार्य
जी0बी0पन्त (पी0जी0) कालेज, कछला (बदायूँ)
ईमेलः *gbpantdegreecollege@gmail.com*

जवाहर लाल नेहरू का जन्म 14 नवम्बर 1889 ई0 को इलाहाबाद के मीरगंज में एक सम्पन्न कश्मीरी ब्राह्मण परिवार में हुआ था। वे मोती लाल नेहरू और स्वरूपरानी के एकमात्र पुत्र थे। उनके पिता मोती लाल नेहरू इलाहाबाद उच्च न्यायालय में अपने समय के सफल एवं उच्च कोटि के अधिवक्ता थे। जवाहर लाल नेहरू की औपचारिक शिक्षा 1905 ई0 में लन्दन के हैरो स्कूल में प्रारम्भ हुई। 1907 ई0 में उन्होंने ट्रिनिटी कॉलेज, कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया, जहाँ से उन्होंने विज्ञान ऑनर्स में स्नातक की परीक्षा उत्तीर्ण की। 1910 ई0 में उन्होंने क़ानून की शिक्षा प्राप्त करने के लिए वकीलों के एसोसिएशन 'इनर टैम्पल' में प्रवेश लिया। लन्दन में अपनी क़ानून की शिक्षा पूर्ण करने के पश्चात् 1912 ई0 में जवाहर लाल नेहरू बैरिस्टर बनकर भारत लौटे। यहाँ आने के पश्चात् अपने पिता की इच्छा के अनुरूप उन्होंने इलाहाबाद में वकालत प्रारम्भ की। जवाहर लाल ने आठ वर्ष तक इलाहाबाद हाईकोर्ट में वकालत की। लेकिन इसके बाद भी वकालत का व्यवसाय उनका प्रेरणास्रोत नहीं बन सका और ना ही उसमें उन्हें कोई विशेष रुचि ही उत्पन्न हो सकी।

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में प्रवेश

अपने छात्र जीवन में ही जवाहर लाल नेहरू भारत के राष्ट्रीय आन्दोलन की सरगर्मियों में दिलचस्पी लेते रहे। 1904 ई0 में जापान के हाथों रूस जैसे शक्तिशाली राष्ट्र की पराजय ने नेहरू जी के हृदय में भारत राष्ट्र की स्वतन्त्रता के सपने भर दिए। 1912 ई0 में बाँकीपुर (बिहार) में भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस का अधिवेशन आयोजित किया गया, जिसमें डेलिगेट की हैसियत से जवाहर लाल नेहरू ने भाग लिया। इस अधिवेशन की अध्यक्षता गोपाल कृष्ण गोखले ने की थी। उनके विचारों ने जवाहर लाल नेहरू को बहुत प्रभावित किया।

तत्कालीन वातावरण के अनुसार जवाहर लाल नेहरू ने वकालत के साथ–साथ सार्वजनिक कार्यों में भाग लेना प्रारम्भ कर दिया। वह संयुक्त प्रान्त काँग्रेस संगठन के सदस्य बन गए। 1915 ई0 में गोपाल कृष्ण गोखले ने दक्षिण अफ्रीका के भारतीयों के लिए चन्दा इकट्ठा करने के लिए एक समिति का गठन किया, जिसमें जवाहर लाल नेहरू ने सचिव का कार्य किया। 1915 ई0 में ही पहली बार उन्होंने एक जनसभा को सम्बोधित किया। यह जनसभा प्रेस पर लगे प्रतिबन्धों की भर्त्सना करने के लिए बुलायी गई थी। 1916 ई0 में बाल गंगाधर तिलक एवं एनी बेसेण्ट ने देश में स्वशासन की माँग के लिए 'होमरूल लीग' की स्थापना की। पुणे में बाल गंगाधर तिलक ने तथा मद्रास में एनी बेसेण्ट ने आन्दोलन चलाया। जवाहर लाल नेहरू, बाल गंगाधर तिलक एवं एनी बेसेण्ट दोनों ही के द्वारा चलाए जा रहे 'होमरूल लीग' के सदस्य बने। 1916 ई0 में भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस के लखनऊ अधिवेशन के समय उनके जीवन में एक क्रान्तिकारी मोड़ आया। यहाँ महात्मा गाँधी से उनकी पहली मुलाक़ात हुई जो आगे चलकर इस रूप में फलीभूत हुई कि गाँधी जी ने जवाहर लाल को अपना उत्तराधिकारी घोषित कर दिया। महात्मा गाँधी ने यह भविष्यवाणी भी कर दी कि ''मेरे मरने के बाद जवाहर लाल मेरी ही भाषा बोलेगा।''[1] 1916 ई0 में ही उनका विवाह कमला नेहरू से हुआ। उनके एक पुत्री हुई– इन्दिरा प्रियदर्शिनी, जिन्होंने भारत के प्रधानमन्त्री पद को सुशोभित किया।

1918 ई0 में जवाहर लाल नेहरू 'होमरूल लीग' के सचिव बने। 1919 ई0 में 'रोलेट ऐक्ट' ने पूरे देश में सनसनी पैदा कर

दी। व्यक्तिगत स्वतन्त्रताओं पर प्रतिबन्ध लगाने और राजनीतिक बन्दियों को बग़ैर ट्रायल किए सज़ा देने जैसे अमानवीय क़ानूनों ने ब्रिटिश सरकार विरोधी आन्दोलन को तीव्र गति प्रदान कर दी। महात्मा गाँधी ने सार्वजनिक विरोध प्रदर्शित करने के लिए 13 अप्रैल 1919 ई0 का दिन तय किया। देश भर में ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध हड़तालें हुईं और तमाम काम–काज बन्द हो गया। अमृतसर के जलियाँवाला बाग़ में एक सभा हो रही थी, जहाँ पर हज़ारों की संख्या में लोग एकत्र थे। जनरल डॉयर ने उन पर गोली चलाने का आदेश दे दिया। इसमें लगभग 800 व्यक्ति मारे गए तथा 2 हज़ार घायल हुए। जवाहर लाल नेहरू जलियाँवाला बाग़ काण्ड की जाँच से जुड़े हुए थे। वे इस घटना से बहुत दुःखित हुए। इस घटना ने उन्हें राजनीतिक रूप से गाँधी जी के निकट लाना प्रारम्भ कर दिया। जवाहर लाल नेहरू लिखते हैं कि ''पंजाब जाँच के ज़माने में मुझे गाँधी जी को बहुत कुछ समझने का मौक़ा मिला। तब से उनकी राजनैतिक अर्न्तदृष्टि में मेरी श्रद्धा बढ़ती गई।''[2] 1920 ई0 का वर्ष 'ख़िलाफ़त आन्दोलन' की तैयारी का वर्ष था। ख़िलाफ़त को काँग्रेस से जोड़ने के लिए गाँधी जी ने तुर्की के पदच्युत ख़लीफ़ा के समर्थन में देश में 'ख़िलाफ़त आन्दोलन' चलाने का सुझाव दिया। जवाहर लाल का यह विचार था कि तुर्की में ख़लीफ़ा को पदच्युत करना एक धार्मिक मामला है, न कि राजनैतिक। किन्तु उन्होंने अपने इस वैचारिक दृष्टिकोण की भिन्नता के बाद भी राजनीतिक दृष्टि से गाँधी जी का सहयोग जारी रखा।

1920 ई0 का वर्ष जवाहर लाल नेहरू के जीवन का एक परिवर्तनकारी बिन्दु साबित हुआ। इस वर्ष उनकी माँ और पत्नी बीमार हो गयीं, जिन्हें स्वास्थ्य लाभ के लिए वे मसूरी ले गए। वह जिस होटल में ठहरे थे उसी में कुछ अफ़ग़ान नेता भी आकर ठहर गए थे। जवाहर लाल नेहरू न कभी उनसे मिले थे और ना ही उनका उनसे कोई सम्बन्ध था। लेकिन फिर भी ब्रिटिश सरकार ने उन्हें यह हिदायत दी कि वे अफ़ग़ानों से न मिलें। यह वह बिन्दु था जहाँ से ब्रिटिश सरकार से उनका सीधा संघर्ष प्रारम्भ हो गया। इसी वर्ष जवाहर लाल नेहरू प्रतापगढ़ के किसानों के सम्पर्क में भी आए। वे दो हफ़्ते तक किसानों से मिलते रहे, जिसने उन्हें किसानों की समस्याओं और उनकी शिकायतों से साक्षात्कार कराया। डॉ0 जयलक्ष्मी कौल ने लिखा है कि ''नंगे, भूखे, ग़रीब, चिथड़ों में लिपटे किसान तथा उन पर ज़मीदारों, सूदख़ोरों के द्वारा किए गए अत्याचार तथा बेदख़ली जवाहर लाल के चिन्तन का विषय बन गया। वे सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन को ग्रामीण समस्याओं के समाधान के लिए आवश्यक मानने लगे और समाजवाद उन्हें इसके एक विकल्प के रूप में दिखाई देने लगा।''[3] जवाहर लाल नेहरू ने इन किसानों का विश्वास प्राप्त करने के साथ ही उनमें आत्मसम्मान और साहस पैदा करने का भी प्रयास किया। उन्होंने किसानों को भयमुक्त होकर कार्य करने और संगठित रहने के लिए प्रेरित किया। अतः जवाहर लाल नेहरू को अब किसानों के मित्र के रूप में जाना जाने लगा। इस तरह उन्हें पहली बार भारतीयों की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक स्थिति का पता चला। उन्होंने आधुनिक, औद्योगिक एवं शिक्षित भारत की कल्पना की, जिसमें अंग्रेज़ों को भारत से बाहर निकालना पहला क़दम था।

1921 ई0 में जवाहर लाल नेहरू ने गाँधी जी द्वारा चलाए गए 'असहयोग आन्दोलन' को सफल बनाने के लिए कार्य करना प्रारम्भ कर दिया। उन्होंने इलाहाबाद में इस आन्दोलन का नेतृत्व किया। आन्दोलन को सफल बनाने के लिए उन्होंने विद्यार्थियों से अपील की कि वे स्कूल–कॉलेज छोड़ दें, स्वयंसेवक बन जाएं या किसानों के बीच जाकर काम करें। उन्होंने स्वयंसेवकों का एक दस्ता भी बनाया था, जो कि विदेशी माल बेचने वाली दुकानों पर धरना देता था। इलाहाबाद शहर में जवाहर लाल विदेशी कपड़े घर–घर से इकट्ठा करने वालों में से एक थे। अक्टूबर 1921 ई0 में संयुक्त प्रान्त में एक राजनैतिक सम्मेलन हुआ जिसमें उन्होंने 'स्वदेशी' का प्रस्ताव पास किया। जवाहर लाल नेहरू का कहना था कि ''स्वराज्य की प्राप्ति स्वदेशी वस्त्र के प्रयोग पर ही निर्भर है। इसलिए लोगों को विदेशी कपड़ा छोड़ देना चाहिए और इसके बदले हाथ से कता–बुना हुआ कपड़ा काम में लाना चाहिए।''[4] उन्होंने विदेशी कपड़ों को जलाने का समर्थन किया।

'असहयोग आन्दोलन' में सक्रिय रूप से भाग लेने के परिणाम स्वरूप 5 दिसम्बर 1921 ई0 को जवाहर लाल नेहरू को ब्रिटिश सरकार द्वारा गिरफ़्तार कर लिया गया और लखनऊ जेल में भेज दिया गया। यह उनके जीवन की पहली जेल यात्रा थी। इस दौरान वह 3 मार्च 1922 ई0 तक जेल में रहे। इस समय तक असहयोग–आन्दोलन अपने चरम पर पहुँच चुका था, किन्तु फ़रवरी 1922 ई0 में 'चौरी–चौरा काण्ड' हो जाने के कारण गाँधी जी ने इस आन्दोलन को वापस ले लिया। इससे जवाहर लाल नेहरू बहुत दुःखी हुए और गाँधी जी के 'अहिंसक नागरिक प्रतिरोध' की तकनीकि के प्रति अपनी असहमति व्यक्त की। गाँधी जी की अहिंसावादी नीतियों के समर्थक न होते हुए भी जवाहर लाल सदैव गाँधी जी के अहिंसात्मक आन्दोलनों के समर्थक बने रहे। जेल से छूटने के पश्चात् जवाहर लाल नेहरू संयुक्त प्रान्त में पुनः चरख़ा कार्य, धरना–प्रदर्शन तथा बहिष्कार आदि कार्यों में जुट गए। उन्होंने संगठन को और पूर्णता देना, दौरों का आयोजन करना तथा जन जागृति लाने का प्रयास किया। इसके विरुद्ध सरकार ने प्रतिक्रिया व्यक्त की और 12 मई 1922 ई0 को जवाहर लाल को गिरफ़्तार कर लिया गया। उन्हें 18 महीने सश्रम कारावास और 100 रुपये का अर्थदण्ड दिया गया। किन्तु 31 जनवरी 1923 ई0 को समय से पहले ही उन्हें जेल से रिहा कर दिया गया।

जेल से बाहर आने के बाद जवाहर लाल नेहरू को सबसे अधिक चिन्ता काँग्रेस के भीतरी मतभेदों की थी। अतः वे संयुक्त प्रान्तीय काँग्रेस कमेटी के मन्त्री की हैसियत से काँग्रेस को संगठित करने के काम में लग गए। इसी समय वे अखिल भारतीय काँग्रेस के महामन्त्री भी बने। इसके साथ ही नेहरू जी इलाहाबाद नगर निगम के प्रधान पद पर भी आसीन हुए और इस पर लगभग दो वर्षों तक कार्य किया। 1923 ई0 में जवाहर लाल नेहरू अमृतसर के 'अकाली–आन्दोलन' के सम्पर्क में आए। इस आन्दोलन का मुख्य

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

उद्देश्य गुरुद्वारों को भ्रष्ट महंतों के चंगुल से मुक्त कराना था। इन महंतों को यह काम सौंपा गया था कि वे सिक्खों को अंग्रेज़ी हुकूमत के प्रति वफ़ादारी का पाठ पढ़ाएँ और राष्ट्रीय आन्दोलन से उन्हें दूर रखें। 1919 ई0 के सुधारों द्वारा सिक्खों को अलग प्रतिनिधित्व प्रदान किया गया था। नेहरू जी ने सिक्खों को प्रेरणा दी कि वे ज़िला परिषदों और निगमों में साम्प्रदायिक आधार पर प्रतिनिधित्व जैसे बेकार के प्रश्नों की तरफ़ अपना ध्यान न बँटने दें। इसके पश्चात् नेहरू जी नाभा गए। यहाँ के महाराज को कुशासन का आरोप लगाकर हटा दिया गया था। सिक्ख इसका कड़ा विरोध कर रहे थे। 21 सितम्बर 1923 ई0 को नेहरू जी ने नाभा में प्रवेश किया। ब्रिटिश सरकार ने उनके नाभा में प्रवेश पर प्रतिबन्ध लगा दिया था। किन्तु नेहरू जी ने सरकार का आदेश मानने से इनकार कर दिया। फलस्वरूप उन्हें गिरफ़्तार कर लिया गया। नेहरू जी को नाभा में अनधिकृत प्रवेश के लिए 6 माह एवं शड्यन्त्र के मामले में दो साल की सज़ा सुनाई गई। किन्तु उसी शाम उनकी सजाएं स्थगित कर दी गईं और उनको नाभा छोड़कर तुरन्त चले जाने का आदेश दिया गया।

मार्च 1926 ई0 में जवाहर लाल नेहरू ने दूसरी बार यूरोप की यात्रा की। वहाँ उन्होंने लगभग एक वर्ष नौ महीने का समय व्यतीत किया। अपनी इस यूरोप यात्रा के दौरान ही फ़रवरी 1927 ई0 में ब्रूसेल्स में हुए पद्दलित राष्ट्रों के प्रतिनिधियों के सम्मेलन में उन्होंने भारतीय राष्ट्रीय कॉंग्रेस के प्रतिनिधि के रूप में भाग लिया। डॉ0 जयलक्ष्मी कौल ने लिखा है कि ''इस सम्मेलन में पं0 नेहरू ने बहुत ही तर्कपूर्ण एवं सशक्त ढ़ंग से पराधीन राष्ट्रों की आज़ादी की बात की। इसके द्वारा उनको यह भी समझ में आ गया कि विश्व की शोषित मानवता की समस्याएं समान हैं, इसलिए संघर्ष में सब–सबके सहायक हो सकते हैं।''[5] इस सभा में साम्राज्यवादी शक्तियों के विरुद्ध एक संगठन बनाया गया, जिसकी कार्यकारिणी में जवाहर लाल नेहरू को भी चुना गया। यद्यपि नेहरू जी भारतीयों की ब्रिटिश शासन से राजनीतिक दृष्टि से स्वतन्त्रता के पक्षधर थे, किन्तु इस सम्मेलन के पश्चात् समाजवादी विचारों के कारण वे सामाजिक एवं आर्थिक स्वतन्त्रता को भी आवश्यक समझने लगे।

1928 ई0 में जवाहर लाल नेहरू ने कॉंग्रेस के महासचिव के रूप में पाँच प्रान्तीय दलों के सम्मेलनों की अध्यक्षता की और अनेक युवा समूहों को सम्बोधित किया। इसी समय वह 'ऑल इण्डिया ट्रेड यूनियन कॉंग्रेस' के सभापति भी चुने गए। उन्होंने अपने वक्तव्यों से किसान, मज़दूर, मध्यमवर्गीय युवा एवं बुद्धिजीवी वर्ग को आन्दोलित कर दिया और सबके प्रिय नेता हो गए। 1928 ई0 में ही ब्रिटिश सरकार द्वारा भारत में संवैधानिक सुधार की दूसरी किस्त प्रस्तावित करने के लिए 'साइमन कमीशन' भारत आया। इसमें एक भी भारतीय सदस्य नहीं था। अतः इस कमीशन का सारे देश में विरोध हुआ। इसके विरोध में जवाहर लाल नेहरू ने भी सारे देश में जुलूस और विरोध सभाओं का आयोजन किया। 'साइमन कमीशन' के विरुद्ध लखनऊ में प्रदर्शन के दौरान उन्होंने पुलिस की लाठियाँ भी खाईं। 1928 ई0 में मोती लाल नेहरू द्वारा लिखित, 'नेहरू रिपोर्ट' को सर्वदलीय सम्मेलन में स्वीकार कर लिया गया किन्तु 'औपनिवेशिक स्वराज्य' की नेहरू रिपोर्ट की संस्तुति को जवाहर लाल एवं अन्य युवाओं ने स्वीकार नहीं किया। फलतः मोती लाल नेहरू एवं जवाहर लाल नेहरू के बीच मतभेद हो गया। जवाहर लाल ने कॉंग्रेस को जल्दी से जल्दी पूर्ण स्वराज्य के लक्ष्य को स्वीकार करने के लिए प्रेरित किया।

पूर्ण स्वाधीनता की घोषणा

1929 ई0 से पूर्व देश के राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेने वाले अधिकांश नेताओं का मुख्य लक्ष्य डोमिनियन स्टेटस अर्थात् औपनिवेशिक स्वराज्य की प्राप्ति था। किन्तु जवाहर लाल नेहरू इससे सहमत नहीं थे। दिसम्बर 1929 ई0 में भारतीय राष्ट्रीय कॉंग्रेस का ऐतिहासिक अधिवेशन लाहौर में हुआ। गाँधी जी के आशीर्वाद से जवाहर लाल नेहरू इस अधिवेशन के अध्यक्ष चुने गए। इस अधिवेशन में उन्होंने 1928 ई0 की नेहरू रिपोर्ट को निरस्त करके 31 दिसम्बर की रात को 12 बजे लाहौर में रावी नदी के तट पर राष्ट्रीय ध्वज फहराकर पूर्ण स्वराज्य की प्राप्ति को राष्ट्रीय आन्दोलन का लक्ष्य निर्धारित किया। कॉंग्रेस कार्य समिति द्वारा 26 जनवरी 1930 ई0 का दिन 'पूर्ण स्वराज्य दिवस' के रूप में मनाये जाने का निश्चय किया गया। इस अधिवेशन में जवाहर लाल नेहरू ने समाजवादी विचारों को भी सम्पूर्ण देश के सामने रखा। उन्होंने देश की शोषित एवं पद्दलित जनता को शोषण से मुक्ति दिलाना कॉंग्रेस का लक्ष्य निर्धारित किया। अपने अध्यक्षीय भाषण में जवाहर लाल नेहरू ने स्पष्ट कहा कि ''सफलता प्रायः उन्हीं के हाथ लगती है, जो हिम्मत करते हैं, काम करते हैं। उन कायरों के हाथ कभी नहीं, जो परिणामों से डरा करते हैं।''[6] इस प्रकार अब उनका एकमात्र लक्ष्य भारत को ब्रिटिश साम्राज्य से स्वतन्त्र कराना बन गया।

सविनय अवज्ञा आन्दोलन

फ़रवरी 1930 ई0 में कॉंग्रेस कार्यकारिणी ने गाँधी जी को 'सविनय अवज्ञा आन्दोलन' प्रारम्भ करने का अधिकार दे दिया। गाँधी जी ने नमक क़ानून तोड़कर इस आन्दोलन को प्रारम्भ करने का निश्चय किया। अपने 78 सहयोगियों के साथ उन्होंने साबरमती आश्रम से डाँडी तक की यात्रा की और 6 अप्रैल 1930 ई0 को नमक बनाकर आन्दोलन की शुरुआत की। जवाहर लाल नेहरू ने 'सविनय अवज्ञा आन्दोलन' में हिस्सा लेने के लिए देश की जनता का आह्वान किया। इलाहाबाद ज़िले में इस अभियान की जिम्मेदारी स्वयं जवाहर लाल नेहरू ने ली। 9 अप्रैल 1930 ई0 को उन्होंने शहर में ग़ैर क़ानूनी ढ़ंग से बनाए गए नमक के पैकेट बेचे। 14 अप्रैल 1930 ई0 को उन्हें गिरफ़्तार कर 6 माह की सज़ा देकर नैनी जेल भेज दिया गया।

11 अक्टूबर 1930 ई0 को जेल से रिहा होने के पश्चात् जवाहर लाल नेहरू ने प्रान्तीय कॉंग्रेस कार्यकारिणी की मीटिंग बुलाई

और उसमें 'कर बंदी आन्दोलन' चलाने का प्रस्ताव पारित किया। जवाहर लाल नेहरू ने घोषणा की कि ज़िले और शहर की कॉंग्रेस कमेटियाँ भूमिकर 'लगान' और आयकर न देने का कार्यक्रम संगठित करेंगी। इसके पश्चात् उन्होंने इलाहाबाद में एक विशाल सभा का आयोजन किया। 19 अक्टूबर 1930 ई0 को उन्होंने इलाहाबाद में होने वाले किसान सम्मेलन में भाग लिया। इस सम्मेलन में लगभग 1600 किसानों ने 'कर बन्दी आन्दोलन' करने की घोषणा की। सम्मेलन से लौटने के बाद जवाहर लाल को पुनः गिरफ़्तार कर लिया गया और नैनी जेल भेज दिया गया। जेल में ही उन पर मुक़दमा चलाया गया और राजद्रोह, नमक क़ानून व आर्डिनेन्स 6 के आरोपों में उन्हें 2 साल की क़ैद और 700 रुपये जुर्माने की सज़ा सुनाई गई। जवाहर लाल की गिरफ़्तारी ने सविनय अवज्ञा आन्दोलन में नई जान डाल दी।

6 फ़रवरी 1931 ई0 को मोती लाल नेहरू की मृत्यु हो जाने के कारण जवाहर लाल नेहरू कॉंग्रेस की गतिविधियों में ज़्यादा भाग न ले सके। 5 मार्च 1931 ई0 को सरकार और कॉंग्रेस में 'गाँधी–इरविन समझौता' हो गया और वायसराय ने इस बात की घोषणा कर दी कि भारतीय संवैधानिक विकास का उद्देश्य भारत को डोमिनियन स्टेटस देना है। कॉंग्रेस ने यह भी स्वीकार कर लिया कि वह गोलमेज़ सम्मेलन में भाग लेगी। जवाहर लाल नेहरू के अनुसार यह एक अनावश्यक शरणगति थी। उन्होंने इस पर असन्तोष व्यक्त किया। 'गाँधी–इरविन समझौते' को मंजूरी देने के लिए 29 मार्च 1931 ई0 को कराची में कॉंग्रेस की बैठक हुई। यद्यपि जवाहर लाल नेहरू इस समझौते के विरोधी थे, किन्तु फिर भी दल में खुले मतभेद को रोकने के उद्देश्य से उन्होंने इस समझौते को स्वीकार कर लिया।

द्वितीय गोलमेज़ सम्मेलन की असफलता के बाद गाँधी जी भारत लौट आए। 26 दिसम्बर 1931 ई0 को नेहरू जी जब गाँधी जी से मिलने बम्बई जा रहे थे तो उन्हें गिरफ़्तार कर लिया गया, क्योंकि सरकार ने उन पर इलाहाबाद से बाहर जाने पर पाबन्दी लगा रखी थी। उन्हें यू0पी0 पॉवर्स आर्डिनेन्स के अन्तर्गत दो साल की सजा और 500 रुपये अर्थदण्ड से दण्डित किया गया। किन्तु 30 अगस्त 1933 ई0 को माता की बीमारी के कारण उन्हें समय से पूर्व छोड़ दिया गया। इसी दौरान उन्होंने अपनी प्रमुख रचना 'विश्व इतिहास की झलक' लिखा, जो बाद में उनकी पुत्री 'इन्दिरा प्रियदर्शिनी के नाम पत्र' के रूप में छपी।

1934 ई0 के प्रारम्भ में नेहरू जी कुछ दिनों के लिए कलकत्ता गए। वहाँ पर उन्होंने ब्रिटिश सरकार की समसामयिक नीतियों के विरुद्ध तीन उत्तेजनापूर्ण भाषण दिए, जिसके फलस्वरूप 12 फ़रवरी 1934 ई0 को इलाहाबाद लौटने पर बग़ावत के जुर्म में उन्हें गिरफ़्तार कर लिया गया। उन्हें अलीपुर जेल भेज दिया गया तथा दो साल की सज़ा सुनाई गई। अप्रैल 1934 ई0 में जब नेहरू जी जेल में थे, तब उन्हें पता चला कि गाँधी जी ने यह निश्चय किया है कि 'सविनय अवज्ञा आन्दोलन' सभी रूपों में समाप्त कर दिया जाए। गाँधी जी के इस वक्तव्य से जवाहर लाल को बहुत आघात लगा। अपनी इसी जेल यात्रा के दौरान उन्होंने अपनी आत्मकथा 'टूवर्ड फ्रीडम' लिखी। 3 दिसम्बर 1935 ई0 को पत्नी की बीमारी के कारण उन्हें जेल से रिहा कर दिया गया।

भारत सरकार अधिनियम 1935

अगस्त 1935 ई0 में ब्रिटिश संसद द्वारा पारित 'भारत सरकार अधिनियम 1935' को सम्राट की स्वीकृति मिल गई। कॉंग्रेस ने तो इस नए संविधान को पूर्णतया रद्द कर दिया। तत्कालीन कॉंग्रेस अध्यक्ष जवाहर लाल नेहरू ने इसका तीव्र विरोध करते हुए कहा कि ''यह एक अनैच्छिक, अप्रजातन्त्रीय और अराष्ट्रवादी संविधान है, जो कि समस्त देश पर और सर्वसम्मत इच्छा के विरुद्ध लाद दिया जाएगा।''[7] उनका यह भी मानना था कि इस अधिनियम का हिन्दुस्तान के किसी भी मसले से कोई सम्बन्ध नहीं था। इसके द्वारा अंग्रेज़ों ने अपने निहित स्वार्थ की सुरक्षा की थी।

द्वितीय विश्वयुद्ध

1 सितम्बर 1939 ई0 को जर्मनी द्वारा पोलैण्ड पर आक्रमण और 3 सितम्बर 1939 ई0 को इंग्लैण्ड द्वारा जर्मनी के विरुद्ध युद्ध की घोषणा के परिणाम स्वरूप द्वितीय विश्वयुद्ध प्रारम्भ हो गया। ब्रिटिश सरकार ने कॉंग्रेस या केन्द्रीय विधायिका से विचार विमर्श किए बिना भारत को भी युद्धरत राज्य घोषित कर दिया। परन्तु अक्टूबर 1939 ई0 में कॉंग्रेस मन्त्रिमण्डलों ने भारत को, बिना उसकी सहमति के, द्वितीय विश्वयुद्ध में खींच लिए जाने के कारण विरोध में त्यागपत्र दे दिया। फिर भी कॉंग्रेस ने सहयोग का द्वार खुला रखा। द्वितीय विश्वयुद्ध के इस नैराश्य भरे माहौल में भी जवाहर लाल ने राष्ट्रीय आन्दोलन को मज़बूत दिशा प्रदान की। नेहरू जी इस संकट की स्थिति में सत्याग्रह के विरुद्ध थे, किन्तु दूसरी ओर वे बिना किसी शर्त के ब्रिटेन को अहिंसक सहयोग देने के भी पक्षधर नहीं थे।

जब अक्टूबर 1940 ई0 में गाँधी जी ने 'व्यक्तिगत सत्याग्रह आन्दोलन' प्रारम्भ किया तो जवाहर लाल नेहरू ने भी उसमें भाग लिया। 31 अक्टूबर 1940 ई0 को ब्रिटिश सरकार ने उन्हें गिरफ़्तार कर जेल भेज दिया और गोरखपुर में उनके विरुद्ध मुक़दमा चलाया गया। इस अवसर पर जवाहर लाल नेहरू ने कहा कि ''भारत सरकार के विरुद्ध असन्तोष फैलाना मेरा विशेष कर्तव्य और अधिकार है तथा कोई पैरवी करने से इन्कार कर दिया।''[8] ज़िला जज ने जवाहर लाल को चार साल की कड़ी क़ैद की सज़ा सुनाई। लेकिन 4 दिसम्बर 1940 ई0 को ब्रिटिश सरकार ने जवाहर लाल सहित सभी कॉंग्रेस कार्यकर्ताओं को जेल से रिहा कर दिया।

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

क्रिप्स मिशन

ब्रिटिश सरकार ने 22 मार्च 1942 ई0 को सर स्टैफ़र्ड क्रिप्स के नेतृत्व में एक शिष्ट मण्डल भारत भेजा। भारत आने पर उन्होंने घोषणा की कि भारत में ब्रिटिश नीति का उद्देश्य, जितनी जल्दी सम्भव हो सके, स्वशासन की स्थापना करना है। क्रिप्स ने अपनी पहली प्रेस कान्फ्रेंस में ही स्पष्ट कर दिया कि 'रक्षा विभाग' पूरी तरह से अंग्रेज़ों के हाथ में ही होगा। इसका काँगेस सहित सभी भारतीय दलों ने विरोध किया। जवाहर लाल नेहरू का विचार था कि अपनी सुरक्षा की देखभाल करने के लिए भारत को पूरी आज़ादी होनी चाहिए, तभी वह दुनिया के अन्य देशों की सुरक्षा तथा आज़ादी में भी सहायता कर सकता है। क्रिप्स प्रस्ताव का उन्होंने पूर्ण रूप से विरोध किया। जवाहर लाल नेहरू का कहना था कि ''क्रिप्स प्रस्ताव को मान लेने का अर्थ है भारत की अखण्डता को दाँव पर लगा देना।''[9] इसके लिए नेहरू जी कभी तैयार नहीं थे।

भारत छोड़ो आन्दोलन

1942 ई0 में क्रिप्स मिशन की असफलता ने काँग्रेस तथा भारतीय जनता को क्षोभ से भर दिया और वह पुनः आन्दोलन का रास्ता अपनाने के लिए तत्पर हो गई। 14 जुलाई 1942 ई0 को काँग्रेस कार्यकारिणी ने अंग्रेजों को भारत से चले जाने का प्रस्ताव पारित किया। 8 अगस्त 1942 ई0 को बम्बई में हुई काँग्रेस कमेटी की बैठक में इस प्रस्ताव का समर्थन हुआ। इस अधिवेशन में जवाहर लाल नेहरू ने अपने भाषण द्वारा यह माँग रखी कि ब्रिटेन, भारत की सत्ता तत्काल भारतीयों के हाथ में सौंप दें। उन्होंने अंग्रेज़ों को भारतीयों की असीम ग़रीबी और दुःख के लिए ज़िम्मेदार ठहराया। इस आन्दोलन के विरोध में ब्रिटिश सरकार ने प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए गाँधी जी, जवाहर लाल नेहरू एवं वर्किंग कमेटी के अन्य सदस्यों को गिरफ़्तार कर लिया। नेहरू जी के जीवन की यह अन्तिम जेल यात्रा रही। इसके दौरान वे 3 वर्ष जेल में रहे।

कैबिनेट मिशन योजना

19 फ़रवरी 1946 ई0 को लार्ड पैथिक लॉरेन्स ने घोषणा की कि मन्त्रिमण्डल का शिष्टमण्डल जिसमें वह स्वयं, सर स्टैफ़र्ड क्रिप्स और ए0वी0 एलेक्ज़ेण्डर होंगे, भारत जाएगा ताकि वायसराय की सहायता से भारतीय नेताओं से बात–चीत कर सके। शिष्टमण्डल 24 मार्च 1946 ई0 को दिल्ली पहुँचा और भारत के भिन्न–भिन्न राजनैतिक दलों से लम्बी बात–चीत हुई। मुस्लिम लीग और काँग्रेस में भारत की एकता अथवा विभाजन के विषय में समझौता नहीं हो सका, इसलिए शिष्टमण्डल ने अपनी ओर से संवैधानिक समस्या का हल प्रस्तुत किया। जवाहर लाल नेहरू का मानना था कि कैबिनेट मिशन योजना में कुछ त्रुटियों के बाद भी अच्छाइयाँ मौजूद थीं। अतः नेहरू जी ने संविधान सभा की रचना को प्राथमिकता दी, क्योंकि इस योजना के अनुसार संविधान सभा की रचना प्रजातान्त्रिक आधार पर होनी थी।

नेहरू जी हमेशा इस तथ्य के पक्षधर रहे कि हिन्दुस्तान के निवासियों को अपने भाग्य का निर्णय स्वयं करने का अधिकार होना चाहिए। चूँकि इस योजना में यह व्यवस्था थी कि संविधान सभा के सभी सदस्य भारतीय हों, अतः जवाहर लाल इससे सहमत थे। उन्होंने मुस्लिम अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा हेतु भी इस प्रस्ताव की सराहना की, लेकिन साथ ही योजना में अन्य अल्पसंख्यकों जैसे सिक्ख आदि के लिए इस प्रकार का प्रावधान न होने की निन्दा की। वे योजना के अन्तर्गत प्रस्तावित प्रान्तों के सामूहिककरण से भी सहमत नहीं थे। 1946 ई0 में जवाहर लाल नेहरू पुनः भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस के अध्यक्ष चुने गए। 10 जुलाई 1946 ई0 को अखिल भारतीय काँग्रेस कमेटी में अपने भाषण में उन्होंने कहा कि ''काँग्रेस केवल संविधान सभा में सम्मिलित होने के लिए वचनबद्ध है और किसी बात के लिए नहीं। संविधान सभा प्रभुसत्तात्मक संस्था होगी, लंदन से नीति सम्बन्धी वक्तव्य कुछ भी हुआ करें। अल्पसंख्यकों को सुरक्षा का आश्वासन देने के लिए काँग्रेस सदा प्रतिज्ञाबद्ध रही है, लेकिन यह कार्य केवल संविधान सभा द्वारा किया जाएगा।''[10] लेकिन इस योजना के सम्बन्ध में ब्रिटिश सरकार की नीति विरोधाभास पूर्ण रही।

अन्तरिम सरकार का गठन

वायसराय लार्ड वेवल ने काँग्रेस अध्यक्ष के नाते जवाहर लाल नेहरू के समक्ष अन्तरिम सरकार बनाने का प्रस्ताव रखा। उन्होंने यह भी आश्वासन दिया कि वे संविधान के अनुसार ही कार्य करेंगे। अतः काँग्रेस ने इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया और 2 सितम्बर 1946 ई0 को जवाहर लाल के नेतृत्व में अन्तरिम सरकार का गठन हुआ। लेकिन मुस्लिम लीग इसमें सम्मिलित नहीं हुई। वायसराय द्वारा पुनः सुझाव देने पर उसने मुसलमानों के हितों की रक्षा करने के लिए 13 अक्टूबर 1946 ई0 को इसमें सम्मिलित होना स्वीकार कर लिया। शीघ्र ही अन्तरिम सरकार में यह अनुभव किया गया कि लीग का उद्देश्य देश की सेवा नहीं अपितु अंग्रेज़ों की सहानुभूति प्राप्त करना था। जवाहर लाल नेहरू ने मुस्लिम लीग की भूमिका के विषय में कहा था कि ''लीग ने अंग्रेज़ों की सहायता प्राप्त करने हेतु अपने आप को सम्राट के दल के रूप में परिणत कर लिया है।''[11] यद्यपि लीग अन्तरिम सरकार में सम्मिलित हो गई थी, किन्तु उसने संविधान सभा में सम्मिलित होना स्वीकार नहीं किया। संविधान सभा की प्रथम बैठक 9 दिसम्बर 1946 ई0 को दिल्ली में हुई। 11 दिसम्बर को डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद संविधान सभा के स्थाई सभापति चुन लिए गये। 13 दिसम्बर 1946 ई0 को जवाहर लाल नेहरू ने सुप्रसिद्ध 'उद्देश्य प्रस्ताव' रखा जो कि 22 जनवरी 1947 को पास हुआ। इसके अनुसार संविधान सभा ने दृढ़ और गम्भीर निश्चय व्यक्त किया कि भारत को 'स्वतन्त्र और प्रभुसत्तापूर्ण गणतन्त्र' बनाना है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति और भारत का विभाजन

20 फ़रवरी 1947 ई0 को ब्रिटिश प्रधानमन्त्री एटली ने घोषणा की कि सम्राट की सरकार जून 1948 ई0 तक प्रभुसत्ता भारतीयों के हाथों में सौंप देगी। इस सन्दर्भ में कार्य करने एवं सत्ता हस्तान्तरण करने हेतु ब्रिटिश प्रधानमन्त्री ने वायसराय के रूप में लार्ड वेवल के स्थान पर लार्ड माउण्टबेटन को नियुक्त किया। इस घोषणा का भारत में सर्वत्र स्वागत हुआ। जवाहर लाल नेहरू ने अन्तरिम सरकार में काँग्रेस सदस्यों की तरफ़ से बोलते हुए कहा कि ''एटली की घोषणा एक बुद्धिमत्ता पूर्ण एवं शौर्यपूर्ण निर्णय है।''[12]

4 जुलाई 1947 ई0 को ब्रिटिश संसद ने 'भारतीय स्वतन्त्रता अधिनियम 1947' प्रस्तावित किया, जो शीघ्र ही 18 जुलाई 1947 ई0 को स्वीकृत हो गया। इस अधिनियम के द्वारा भारत एवं पाकिस्तान नामक दो अधिराज्य बनाने की घोषणा की गई। जवाहर लाल नेहरू ने बहुत दुःखी मन से हिन्दू और मुसलमानों के बीच रक्तपात रोकने के लिए अन्तिम उपाय के रूप में भारत विभाजन के प्रस्ताव को स्वीकार किया था। 15 अगस्त 1947 ई0 को भारतीय महाद्वीप पर ब्रिटिश शासन का अन्त हुआ और भारत तथा पाकिस्तान नामक दो स्वतन्त्र अधिराज्य अस्तित्व में आए। इस प्रकार 15 अगस्त 1947 ई0 का दिन जवाहर लाल नेहरू के लम्बे एवं घटनापूर्ण जीवन का एक महत्वपूर्ण पड़ाव था।

निष्कर्षतः

कहा जा सकता है कि जवाहर लाल नेहरू एक महान् स्वततन्त्रता संग्राम सेनानी, कुशल राजनेता, महान् देशभक्त, शोषित मानवता के उद्धारक एवं प्रखर वक्ता थे। गाँधी युग के महान् नेता, जवाहर लाल नेहरू भारत के स्वतन्त्रता संग्राम के वीरों में केवल गाँधी जी से ही कम थे। वास्तव में गाँधी जी के अतिरिक्त जवाहर लाल नेहरू ही ऐसे व्यक्ति थे जिनका जीवन भारत के स्वतन्त्रता संग्राम का इतिहास है। वह 1929, 1936, 1937 और 1946 ई0 में तथा 1951 से 1954 ई0 तक काँग्रेस के अध्यक्ष रहे। 1946 ई0 में उन्होंने भारत की अन्तरिम सरकार का निर्माण किया और स्वतन्त्र भारत के प्रथम प्रधानमन्त्री बने। इस पद पर वह 15 अगस्त 1947 ई0 से 27 मई 1964 ई0 तक अर्थात् अपनी मृत्यु पर्यन्त रहे। भारत की स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् जवाहर लाल नेहरू भारतीय राजनैतिक रंगमंच पर ऐसे छा गए कि भारत ही नेहरू था और नेहरू ही भारत थे। भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में उन्होंने कुल नौ बार जेल–यात्रा की, जिसका सामूहिक समय नौ वर्षों से अधिक है। वह गाँधी जी के सच्चे शिष्य तथा अनुयायी थे। गाँधी जी को जवाहर लाल नेहरू में पूर्ण विश्वास था और वह इस तथ्य को प्रकट रूप से कह चुके थे कि जवाहर लाल नेहरू ही उनके राजनैतिक उत्तराधिकारी हैं। वह सदैव पद्दलित मानवता को सहायता देने के लिए उद्यत रहते थे। लगभग 17 वर्षों के अपने कार्यकाल में उन्होंने स्वतन्त्र भारत को एक सबल आर्थिक और राजनीतिक स्वरूप प्रदान किया। अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भारत की प्रतिष्ठा को जमाने का श्रेय उन्हीं को जाता है। महान् स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी जवाहर लाल नेहरू निःसन्देह भारतीयों के आदर, स्नेह और श्रद्धा के पात्र बने रहेंगे।

सन्दर्भ

1. अवस्थी, डॉ0 अमरेश्वर., अवस्थी, डॉ0 रामकुमार. (2017). आधुनिक भारतीय सामाजिक एवं राजनीतिक चिन्तन. रिसर्च पब्लिकेशन्सः जयपुर. पृष्ठ **325.**
2. कौल, डॉ0 जयलक्ष्मी. (2008). पण्डित जवाहर लाल नेहरू एवं राष्ट्रीय आन्दोलन. मनीश प्रकाशनः वाराणसी. पृष्ठ **32.**
3. वही. पृष्ठ **33.**
4. गोपाल, एस0. (1975). जवाहर लाल नेहरू : ए बायोग्राफी 1889–1947. भाग–1. जॉनसन कम्पनीः लन्दन. पृष्ठ **60.**
5. कौल, डॉ0 जयलक्ष्मी. (2008). पण्डित जवाहर लाल नेहरू एवं राष्ट्रीय आन्दोलन. पृष्ठ **39.** मनीश प्रकाशनः वाराणसी.
6. वही. पृष्ठ **47.**
7. ग्रोवर, बी0एल0., यशपाल. (2003). आधुनिक भारत का इतिहास. पृष्ठ **406.** एस0 चन्द एण्ड कम्पनी लि0ः नई दिल्ली.
8. द हिन्दुस्तान टाइम्स. 4 नवम्बर 1940.
9. कौल, डॉ0 जयलक्ष्मी. (2008). पण्डित जवाहर लाल नेहरू एवं राष्ट्रीय आन्दोलन. मनीश प्रकाशनः वाराणसी. पृष्ठ **85.**
10. वही. पृष्ठ **100.**
11. ग्रोवर, बी0एल0., यशपाल. (2003). आधुनिक भारत का इतिहास. एस0 चन्द एण्ड कम्पनी लि0ः नई दिल्ली. पृष्ठ **416.**
12. कौल, डॉ0 जयलक्ष्मी. (2008). पण्डित जवाहर लाल नेहरू एवं राष्ट्रीय आन्दोलन. मनीश प्रकाशनः वाराणसी. पृष्ठ **103.**

6

कस्तूरबा गाँधी : आदर्श नारी एवं सेवानिष्ठ पत्नी

बिजेन्द्र कुमार श्रीवास्तव
शोधार्थी, इतिहास विभाग
राजा हरपाल सिंह महाविद्यालय, सिंगरामऊ, जौनपुर,
वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय,
जौनपुर, (उ०प्र०)

डॉ० मनोज कुमार सिंह
असिसटेंट प्रोफेसर, इतिहास विभाग
राजा हरपाल सिंह महाविद्यालय, सिंगरामऊ, जौनपुर,
वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय,
जौनपुर, (उ०प्र०)

सारांश

सृष्टि के चक्र को चलायमान रखने के लिए ईश्वर ने स्त्री–पुरूष को एक दूसरे के पूरके के रूप में बनाया है। पुरूष को शारीरिक बल अधिक दिया तो स्त्री को प्रेम से भरा हृदय भावुक्ता के साथ–साथ समर्पण की भावना रग–रग मे भरी हुई। ऐसी ही भावना ओत प्रोत थी बा अर्थात् कस्तूरबा गाँधी। महात्मा गाँधी के बापू बनने के पीछे इस महान महिला के त्याग की अहम भूमिका है। अगर ये न होती तो आज गाँधी जी 'महात्मा' न होते। पति का साथ निभाते–निभाते कस्तूरबाई सारे हिन्दुस्तानियों की बा बन गयी। कस्तूरबा गाँधी की मृत्यु को एक अरसा हो चुका है, लेकिन दुनिया को बताने के लिए कस्तूरबा होना, मोहनदास की पत्नी होना क्या था, यह अपने आप में एक दिलचस्प कहानी है।

मुख्य बिन्दु

कस्तूरबा गाँधी, पत्नी धर्म, बापू की इच्छा, आदर्श नारी, समर्पित नारी, भारत छोड़ो आन्दोलन, स्त्री शक्ति, स्त्री मुक्ति का प्रतीक।

प्राक्कथन

कद्र अब तक तेरी तारीख ने जानी ही नहीं।
तुझ में शोले भी हैं, बस अश्क फिशानी ही नहीं।
तू हकीकत भी है दिलचस्प कहानी ही नहीं।
तेरी हस्ती भी है एक चीज, जवानी ही नहीं।
अपनी तारीख का उन्वान बदलना है तुझे।
उठ मेरी जान मेरे साथ ही चलना है तुझे।

कैफी आजमी की ये पंक्तिया उस पुरानी कहावत को चरितार्थ करती है, उस तरफ इशारा करती है। जिसमें कहा जाता है कि "Bhind Evary Successful man There is a woman" हर कामयाब मर्द के पीछे एक महिला होती है लेकिन उस महिला की मेहनत, त्याग व बलिदान की कहानियों पर कभी उतनी चर्चा नहीं होती जितनी कि उस कामयाब पुरुष की चर्चा होती है क्योंकि पर्दे के पीछे काम करने वाली महिला को उस प्रेरणास्त्रोत को समाज व हम बहुत जल्द भूल जाते हैं। उन्ही में से एक महान महिला है– कस्तूरबा गाँधी। गाँधी जी को महात्मा बनाने में कस्तूरबा गाँधी का बहुत बड़ा हाथ था। गाँधी जी जैसे कठोर, निरंकुश, अनुशासनप्रिय, हठी और असामान्य व्यक्ति के साथ कस्तूरबा ने कदम–कदम पर समझौता किया और उनकी प्रत्येक, अच्छी बुरी बात को शिरोधार्य किया। स्वयं गाँधी जी ने कहा था ''बा ही है, जो इतना सहन करती है। मेरे जैसे आदमी के साथ जीवन बिताना बड़ा कठिन काम है। इनके अलावा कोई और होता तो मेरा जीवन निर्वाह होना कठिन था।''

11 अप्रैल 1869 में पोरबंदर के व्यापारी ब्रजकुवर कपाड़िया के सम्पन्न परिवार में एक पुत्री का जन्म हुआ उसका नाम रखा

गया– कस्तूर वैन माकन कपाड़िया। उस जमाने में लड़कियों की शिक्षा पर उतना ध्यान नही दिया जाता था जितना कि आज। लड़कियो की पाठशाला उनका घर ही होता था। उस पाठशाला में किताब और तख्ती का काम नहीं था। उनको कई तरह से सिखाया पढ़ाया जाता था। बचपन में माँ कस्तूर को झाँसी की रानी की कहानी, सती अनुसूइया, सत्यवान सावित्री की कहानी, तारामती हरिश्चंद्र की कहानी सुनाती। कौन जाने कस्तूरबा के स्वभाव में निडरता, साहस, त्याग, सहिष्णुता आदि गुण वही से आये हो। कुल मिलाकर शिक्षा के नाम पर व्यावहारिक, धार्मिक और दुनियादारी वाली शिक्षा थी जिसका कस्तूरबा के मन पर गहरा प्रभाव पड़ा जो जीवन पर्यन्त चलता रहा।

तेरह वर्ष की उम्र में कस्तूरबा का बापू के साथ विवाह हो गया। शुरुआती दिनों नवदम्पत्ति में बहुत खटपट रहती थी। दोनों में कुट्टी हो जाती थी। कई दिनों तक दोनों बात नही करते थे। गाँधी जी को कस्तूरबा की निरक्षरता बहुत चुभती थी। धीरे–धीरे उन्होंने कस्तूरबा को कामचलाऊ पढ़ने–लिखने योग्य बनाया और कस्तूरबा भी बापू के रंग में रंगती चली गई। बापू सिद्धांत बनाते कस्तूरबा उन पर अमल करती। गाँधी जी के अनुसार ''बा का जर्बदस्त गुण था– सहज ही मुझमें समा जाना। मैं नहीं जानता या कि यह गुण उनमें छिपा हुआ है लेकिन जैसे–जैसे मेरा सार्वजनिक जीवन उज्जवल बनता गया, वैसे–वैसे कस्तूरबा खिलती गई और पुख्ता विचारों के साथ मुझमें यानी मेरे काम में समाती गई''।

कस्तूरबाई या कस्तूरबा उम्र में गाँधी जी से छह महीने बड़ी थी। तुलनात्मक अध्ययन किया जाए तो उनका व्यक्तित्व गाँधी जी को चुनौती देता प्रतीत होता है। स्वयं गांधी जी भी इस बात को स्वीकार करते हुए कहते हैं ''जो लोग मेरे और बा के निकट संपर्क में आए है, उनमें अधिक संख्या तो ऐसे लोगो की है, जो मेरी अपेक्षा बा पर अनेक गुनी अधिक श्रद्धा रखते हैं।'' वैसे भी वटवृक्ष को आकार देने वाला बीज प्रायः मिट्टी तले ही छिप जाता है।''

गाँधी जी जब बैरिस्टर की पढ़ाई के लिए लंदन जाने की तैयारी में थे और रुपये पैसे का इन्तजाम होने में दिक्कते आ रही थी क्योंकि पिता दीवान करमचंद की मृत्यु हो चुकी थी। इस वजह से भी घर की आर्थिक स्थिति उतनी अच्छी नहीं थी। माना जाता है कि स्त्रीधन पर किसी दूसरे का अधिकार नहीं होता लेकिन जब पत्नी के सामने उसके पति के सम्मान और भविष्य का सवाल आता है तो वह अपने अधिकार को पति पर न्योछावर कर देती है। पत्नी धर्म का पालन करते हुए कस्तूरबा ने गाँधी जी को पढ़ने हेतु अपने गहने तक बेच दिये थे और मन को यह सांत्वना दी कि गहना क्या चीज है? एक बार पति आत्मनिर्भर और वैरिस्टर बन जायेंगे तो गहना फिर से आ सकता है।

पति के लंदन जाने के बाद कस्तूरबा ने आर्थिक मुसीबतें झेली। मोध वैश्य समाज के द्वारा जाति बहिष्कृत हो जाने के दिनों में संघर्ष, घर में पति के न होने से पुत्र हरिलाल के साथ अकेलेपन की लड़ाई कस्तूरबा ने खुद लड़ी। पति के मुसीबत में त्याग की भावना की झलक हमें कस्तूरबा गाँधी में पहली बार दिखाई पड़ता है।

दक्षिण अफ्रीका प्रवास में जुनू विद्रोह (1906) के दौरान गाँधी जी ने एक ऐसा निर्णय लिया जो सीधे कस्तूरबा को प्रभावित करने वाला था– ''आगे जीवन में वे ब्रह्मचर्य का पालन करेंगे।'' चार बेटों को जन्म देने से कस्तूरबा का शरीर कमजोर हो गया था। इस बात को ध्यान में रखते हुए कस्तूरबा से कहा– हम जीवन पर्यन्त ब्रह्मचर्य पालन करेंगे यानी यौन जीवन का त्याग। कस्तूरबा ने पति की बात ध्यान से सुनी। एक पत्नी को पति के उचित फैसले में सहयोग की भावना का परिचय देते हुए कहा'' मुझे कोई आपत्ति नहीं इतना बड़ा फैसला सिर्फ कस्तूरबा जैसी नारी ही कर सकती है। लियो टाल्सटॉय ने जब ब्रहमचारी रहने की घोषणा की थी तो उनकी पत्नी अपने आपको मारने पर उतारू हो गई थी। वह हिस्टीरिकल हो गई थी। पति के त्याग और आदेशों का साथ नहीं दे पाई थी जबकि कस्तूरबा संस्कारों की दृष्टि से दूसरी मिट्टी की बनी थी।

गाँधी दम्पत्ति जब द. अफ्रीका में थे तो वहाँ की सरकार ने एक कानून पास किया (1913 ई) कि जिनका भी विवाह कानूनी स्वीकृत नहीं हुआ है उनके विवाह को वैधता नही प्रदान की जायेगी। एक दिन बा रसोई घर में भाखरी (गेहूं की मोटी और कड़ी रोटी) बेलने बैठी थी। गाँधी जी के फिनिक्स वाले साथी रावजीभाई मणिलाल पटेल भाखरी सेंक रहे थे। गाँधी जी सब्जी काटते हुए लगे कस्तूरबा को छेड़ने और बोलें ''तू तो मेरी व्याही हुई पत्नी थी लेकिन यहाँ पर इस बात को कोई नहीं मानेगा अब जब बा ने भोंहे चढ़ाकर पूछा आप तो रोज–रोज नई समस्याएँ खोज लाते हैं अब ये क्या किस्सा है? तब गाँधी जी ने बोला अंग्रेज जनरल स्मट्स ये कहता है कि,'' अगर हमारी शादी सरकारी अदालत के रजिस्टर में दर्ज नही हुई तो उसे गैर. कानूनी माना जायेगा इस कानून के अनुसार तू मेरी व्याही हुई पत्नी नही लेकिन रखैल स्त्री मानी जायेगी। ''अब ये सुनकर कस्तूरबा का चेहरा तमतमा उठा। वे बोली कहा उसका सिर? उस निठल्ले को ऐसी बातें कहाँ से सूझती हैं? गाँधी जी ने मुस्कुराते हुए कहा जिस तरह हम पुरुष सरकार से लड़ रहें है उस तरह अब तुम महिलाओं को भी अपने अधिकारों के लिए लड़ना होगा।'' आगे गाँधी जी ने कहा क्या स्त्रियों को पुरुषों के सुख दुःख में भागीदारी नहीं करनी चाहिए, सीता ने राम के संघर्ष में हिस्सा लिया। तारामती ने हरिश्चद के संघर्ष में बराबर की भागीदारी की। पति के साथ संघर्ष में बराबर की साझीदार थी। बस फिर क्या था? गाँधी जी की बात मान कर तैयार हो गई और इस आंदोलन में महिलाओं के मोर्चे का नेतृत्व देने के लिए और गई भी इस मसले पर जेल। संभवतः संसार की पहली महिला जो महिलाओं के सम्मान के लिए अपनी मर्जी से जेल गई। बाद में कस्तूरबा किसी काम से बाहर गई तो गाँधी जी ने रावजीभाई से कहा ''बा की खूबी यही है कि वह मन से या बेमन से मेरी इच्छा का अनुसरण करती है।''

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

गाँधी जी पत्नी कस्तूरबा के साथ जनवरी 1915 में भारत लौटे जनता ने बड़ी गर्मजोशी से उनका स्वागत किया। दक्षिण अफ्रीका में उनके संघर्षों और उनकी सफलताओं ने उन्हें भारत में बहुत लोकप्रिय बना दिया था। 1917 में किसानों के दुर्दशा के समाधान हेतु चंपारन गये चंपारन आने के कुछ ही महीनो के बाद महात्मा गाँधी को लगा कि देश के लोगों के लिए शिक्षा जरूरी है यह बात महिलाओं को समझानी होगी क्योंकि महिलाएँ ही बच्चों को सभालती हैं। महिलाओं तक पहुँचने के लिए किसी महिला को माध्यम बनाना होगा। उसके लिए मन, स्वभाव और अनुभव की दृष्टि से उन्हें कस्तूरबा ही सबसे उपयुक्त लगी। गाँधी जी ने कलकत्ता से उन्हें बुलवा लिया। कस्तूरबा एक समर्पित पत्नी की तरह जुट गई जिले की स्वास्थ्य और सामाजिक समस्याओं को सुधारने। स्थानीय महिलाओं की टोलियाँ बनाकर गाँव की सफाई कराती, झाड़ू बनाना सिखाया जाता था। धीरे–धीरे अन्य महिलाएं उनके साथ मिलकर गांव में परिवर्तन लाने का काम किया। वास्तव में कस्तूरबा महिला सशक्तीकरण की रोल मॉडल थी।

कस्तूरबा से एक बार पूछा गया कि बापू के सत्य के साथ मेरे प्रयोग में आप कहाँ है? बा ने हँसकर जवाब देते हुए कहा– चूंकि मैं अनपढ़ हूँ पढ़ नहीं सकती हूँ किंतु मैं यह जानती हूँ कि उन्होंने अनपढ़ होने का दायित्व दोनों के बीच बाँटा है। मैं सजाकर रखी गई एक मूर्ति की तरह उसमें शामिल हूँ। बापू ने उसमें मेरी सुन्दरता का बखान भी किया है और उपभोग का भी। बापू ने सत्य के साथ जो प्रयोग किए हैं, उन्हें मैने भोगा है। अर्थात् गाँधी के जीवन में सुख–दुःख में बराबर की साझेदार थी। पति का साथ निभाते–निभाते कस्तूरबाई सारे हिंदुस्तान की बा बन गई।

1937 के दिसम्बर में गाँधी जी कलकत्ता में बीमार हो गए थे। वहाँ से वे सेवाग्राम आश्रम में आए। आश्रम में कस्तूरबा ने तन–मन से उनकी सेवा ठीक होने के कुछ दिन बाद बापू ने कहा– ''मुझे जिस चीज की जरूरत होती है कस्तूरबा से ले लेता हूँ। मुझे भले ही दुःख हो पर बा को कभी शिकायत नही होती, भले ही उस पर बड़ी से बड़ी जिम्मेदारी लाद दूँ, चाहे कुछ भी करने को कहूँ बा ने प्रसन्न मन से मेरी बात को माना है''। बापू ने हँसकर कस्तूरबा से कहा होना भी यही चाहिए न? अगर मियाँ एक बात कहे और बीबी दूसरी तो दोनों का जीवन खट्टा हो जाए, लेकिन हमारे मामले में तो मियाँ ने जो कुछ कहा उसे बीबी ने हमेशा माना ही है।'' यह प्रसंग हमें कस्तूरबा गाँधी के अनुकरणीय नारी होने की ओर इंगित करता है।

बापू की इच्छा ही कस्तूरबा की इच्छा होती थी। गाँधी जी जो कहते कस्तूरबा पत्नी होने के नाते निश्चय उसका पालन करती? बात उस समय की है, जब भारत छोड़ो आंदोलन चल रहा था। सर्वत्र हडताल, जुलूस, धरना–प्रदर्शन इत्यादि होने की आशंका में 9 अगस्त 1942 तड़के गांधी जी को गिरफ्तार कर लिया गया। गाँधी जी ने कस्तूरबा की ओर देखकर कहा तू न रह सके तो चल लेकिन में तो यही कहता हूँ कि मेरे साथ चलने की अपेक्षा तू बाहर रहकर मेरा काम कर। इतना कहना कस्तूरबा के लिए बहुत था उन्होने बिना किसी विवाद के बापू का काम, देशहित का काम करने का निश्चय किया। लुई फिशर भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान रिपॉटिंग कर रहे थे. इस दौरान वो कस्तूरबा गाँधी से रात्रि के खाने के अवसर पर पहली बार मिले थे उन्होंने लिखा है ''उनके जितना सुंदर समर्पित और दयालु चेहरा में सोचता हूँ, पहली बार देखा था। सहजता और सहिष्णुता उनकी झुर्रियों में झिलमिला रही थी।'' गाँधी जी की गिरफ्तारी के बाद पत्नी धर्म का पालन करते हुए शिवाजी पार्क (बम्बई) में भरी जनसभा को संबोधित किया और बाद में गिरफ्तार होकर पूना के आगा खाँ महल में जेल भी गई।

गाँधी जी जब–जब धरना प्रदर्शन, आमरण अनशन, भूख हड़ताल उपवास आदि करते थे तो कस्तूरबा की भागीदारी कुछ ज्यादा ही बढ़ जाती थी। 1942 के जेल वास के समय कस्तूरबा का शरीर बहुत कमजोर हो गई थी लेकिन बापू के आँगा खाँ महल में उपवास शुरू करते ही उनमें नई चेतन, नयी शक्ति आ गई। जर्जर शरीर होने पर भी लगभग 21 दिनो तक खड़े पैर सती अनुसूइया की तरह बापू की सेवा की। कस्तूरबा गाँधी समर्पण भावना के साथ बापू के खान–पान के बारे में बहुत अधिक सावधानी रखती थी। इतना ही नहीं ठीक समय पर बापू को खाना खिलाना, फल, मेवा आदि की व्यवस्था करना, कभी–कभी समय मिलने पर उनकी मनपसंद व्यंजन भी बड़े चाव से बनाती। बापू के लिए जरूरी चीजें बहुत सफाई से तैयार करना या कराना, उनके खाने–पीने के वर्तन स्वच्छ रखना समय मिलता तो शाम को उनके शरीर की मालिश खुद करती। सिर पर तेल रखती, उनके खादी के वस्त्रों आदि कपड़ो की सफाई स्वयं करती। जीवन में कभी भी असावधानी नही होने दी जिंदगी के अंतिम पड़ाव तक पूरे समर्पण के साथ बापू की सेवा में लगी रहती थी। अपने मृत्यु से कुछ ही घंटे पहले कस्तूरबा ने मनु गाँधी से कहा ''मनु बापू जी की बोतल का गुड़ खत्म हो गया है तूने दूसरा तैयार किया? मनु ने जवाब दिया, हॉ, अभी तैयार हो जाता है।'' उस समय कस्तूरबा ने कहा देख मेरे पास तो कई लोग बैठे है। तू जा बापू जी को दूध और गुड़ देकर तू भी भोजन कर ले। ''अब ये सब काम तो उस समय की सभी समर्पित स्त्रियों जरूरी जरूर करती होगी लेकिन जिस तरह से कस्तूरबा ने स्वाधीनता संग्राम में और अलग–अलग आंदोलनों में आगे बढ़कर बापू के साथ हिस्सा लिया, उनकी भी हिम्मत बढ़ाई ये सब काम करना बड़ा मुश्किल है बड़ा दुष्कर है।''

कस्तूरबा गाँधी त्रिभुज के तीनो बिदुओं को केंद्र में रखकर साध रही थी एक पति के प्रति अपना पत्नी धर्म और दूसरी ओर परिवार के प्रति जिम्मेदारी तथा तीसरा समाज के प्रति सेवा धर्म निवाह रही थी। जैसा कि उनकी पोती तारा गाँधी भट्टाचार्य ने एक साक्षात्कार में कस्तूरबा गाँधी के पति प्रेम और परिवार को कैसे जोड़ कर रखती थी, इस बात का जो जिक्र किया है वह संक्षेप में इस प्रकार है'' बा के बिना बापू का कोई अस्तित्व ही नहीं था बल्कि यह कहूँ कि बापू बा के बिना राष्ट्रपिता नही बन पाते। बा भी बापू के बिना नही रह सकती। अक्सर जब हम भाई–बहनों में से कोई बीमार हो जाता था तब बा हमारा पूरा ध्यान रखती हमारे

साथ रहती और हमारे स्वस्थ होते ही बापू के पास चली जाती। दरअसल उनके मन में पति सेवा का जो भाव था वह प्रेम से और भी प्रबल हो गया था।''

सुप्रसिद्ध फिल्म निर्माता रिचर्ड एटनबरो ने गाँधी पर फिल्म बनाई कस्तूरबा गाँधी पर्दे पर एक बार फिर सजी। उन्होने उनके बारे में लिखा है। ''बा एक असाधारण स्त्री के रूप में प्रसिद्ध है। वे त्याग, साहस और अविश्वसनीय रूप से गाँधी जी की सबसे अधिक समर्पित शिष्या होने के साथ–साथ वे उनकी देखभाल करती थी और बहुत प्रभावी आलोचक थी।''

कस्तूरबा गाँधी का त्याग और बलिदान किसी भी वीरांगना से कम नहीं था, किसी भी बड़े स्वतंत्रता सेनानी के साथ उनका मुकाबला हो सकता है और जब ये मुकाबला और तुलना होगी कस्तूरबा किसी से उन्नीस नजर नही आयेगी इक्कीस भले ही दिख जाये। उन्होंने लक्ष्मीबाई की तरह कभी तलवार नही चलाई लेकिन पति के साथ पूरा जीवन राष्ट्रसेवा में खपा दिया। महात्मा गाँधी की धर्मपत्नी से अलग आजादी के दौरान महिलाओं की रोल मॉडल साबित हुई। उनके अंदर कूट–कूट कर भरा था त्याग और वात्सल्य का भाव जिससे बापू तक इतने प्रभावित थे कि वो कस्तूरबा को बा कह कर ही पुकारते थे। एक आदर्शनारी, अनुकरणीय पत्नी त्याग, बलिदान, सहृदयी, समर्पित पत्नी और प्रेरणादायी माँ के साथ–साथ एक जबरदस्त तेजस्वी स्वतंत्रता सेनानी और समाज सुधारक भी थी। कस्तूरबा गाँधी स्त्री शक्ति और स्त्री मुक्ति का प्रतीक हैं।

संदर्भ

1. विपिन, चंद्र., मुखर्जी, मृदुला महाजन सुचेता. (2009). 'भारत का स्वतंत्रता संघर्ष'. हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालयः दिल्ली. वि०, 29वाँ संस्करण।
2. गाँधी, करमचंद. (2010). 'सत्य के प्रयोग अथवा आत्मकथा'. नवजीवन प्रकाशन मंदिरः अहमदाबाद।
3. कलार्थी, मुकुलभाई. (2018). 'बा और बापू'. नवजीवन मुद्रणालयः अहमदाबाद।
4. मोहन, अरविंद. (2018). 'बा– बापू'. राष्ट्रीय पुस्तक न्यासः नई दिल्ली।
5. किशोर, गिरिराज. (2018). 'बा'. राजकमल प्रकाशनः नई दिल्ली।
6. (2015). आजकल, अक्टूबर।
7. (2022). आजकल, अक्टूबर।
8. दैनिक जागरण 22 फरवरी 2021।

7

छात्रों में मूल्यों के प्रति उदासीनता का अध्ययन

डॉ. मृत्युंजय मिश्रा
असिस्टेंट प्रोफेसर, स्कूल ऑफ एजुकेशन
संस्कृति विश्वविद्यालय, मथुरा (उ.प्र.)

प्रोफेसर (डॉ.) नन्दलाल मिश्र
अधिष्ठाता, कला संकाय
महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय,
चित्रकूट सतना (म.प्र.)

सारांश

आजकल मूल्यों में निरंतर ह्रास हो रहा है। दुनिया यूज एंड थ्रो के सिद्धांत पर चल पड़ी है। ऐसा इसलिए भी हो रहा है कि लोगों के क्रय शक्ति में वृद्धि हुई है। जब क्रय शक्ति में वृद्धि होती है तो लोग आसानी से सामग्री क्रय करते हैं लेकिन पुराने की तरफ लौटना नही चाहते। ऐसी स्थिति में लोग मूल्यों पर अडिग नहीं रहते। वे निरंतर अपने आप को बदलते हैं। बदलने से मूल्य भी बदल जाते है एवं उनमें अस्थायित्व घर कर जाता है। इसी को छात्रों में देखने का प्रयास किया गया है तथा उनमें मूल्यों की वरीयताओं को पहचानने का प्रयास किया गया है। इसी तथ्य को वर्तमान में शोध पत्र में अध्ययन करने का प्रयास किया गया है।

मुख्य बिन्दु

मूल्य, विश्वसनीयता, भाषा, मूल्य और भाषा, उदासीनता।

वर्तमान समय में छात्रों के नैतिक मूल्य सुबह कुछ होते और रात को पार्टी के समय कुछ और हो जाते है। जिस प्रकार हवा के झोकों से बादलों की दिशा बदल जाती है ठीक उसी प्रकार सामाजिक व्यवस्था की आधारशिला परिवार आज शहरी औद्योगीकरण एवं व्यक्तिवाद के आगे घुटने टेक दिये हैं। इस विडम्बना से माता–पिता घुटनभरी जीवन व्यतीत कर रहे हैं क्योंकि लड़के–लड़कियों की आस्थाओं, निष्ठा तथा मान्यताओं ने उन्हें व्यथित कर रखा है। अनेक जीवन–मूल्य है जिसका विकास परिवार में तथा कालान्तर में विद्यालयों एवं महाविद्यालयों में होता है। इन मूल्यों की प्राप्ति के लिए परिवार तथा विद्यालय एवं महाविद्यालयों में शिक्षण पद्धति का मूल्यपरक होना अनिवार्य प्रतीत होता है। प्रायः लोग बच्चों से यह कहते हैं कि यह ठीक नहीं इसे मत करो, लेकिन यह नहीं बताते क्या ठीक है और उन्हें क्या करना चाहिए। व्यक्ति मूल्यों के निशेधात्मक पक्ष पर अधिक जोर देते हैं और विधेयात्मक पक्ष पर कम। जिसके परिणाम में श्रेयस का मार्ग अपरिभाषित ही रह जाता है। अतः श्रेयस मार्ग को परिभाषित करने के लिए अध्यापक सबसे प्रभावशाली सिद्ध होते हैं।

शिक्षा मनुष्य की क्षमता तथा उसके व्यक्तित्व को समृद्ध करने की आंतरिक प्रक्रिया है। यह व्यक्ति को समाज में मुख्य भूमिका निभाने के लिए समाजीकृत करती है तथा एक उत्तरदायी नागरिक एवं समाज का सक्रिय सदस्य बनाने के लिए व्यक्ति को आवश्यक ज्ञान तथा कौशल प्रदान करती है। शिक्षा सामाजीकरण की प्रक्रिया के अंग के रूप में नए सदस्यों के मन में समाज की सांस्कृतिक विरासत मानकों एवं मूल्यों को ग्रहण कराती है। आधुनिक शिक्षा संस्थानों के कारण शिक्षा और भाषा में संघर्ष की स्थिति निर्मित हो गयी है। एक ओर अंगेजी शिक्षा संस्थाओं की संख्या बढ़ रही है तो दूसरी तरफ क्षेत्रीय भाषाओं की संख्या तेजी से घट रही हैं, जिसपर न ही सरकार का ध्यान तथा नियंत्रण है और न ही शिक्षा संस्थाओं का। यह निजीकरण की उपज है, जिसपर सरकार का ध्यान तथा नियंत्रण आवश्यक है। उच्च शिक्षा की तरफ ध्यान दिया जाए तो भारत सरकार विदेशी विश्वविद्यालयों को प्रोत्साहन दे रही है। इसमें भी भारत की शिक्षा नीति को समग्र दृष्टिकोण से देखने की आवश्यकता है। प्रश्न यह उठता है कि क्या विदेशी शिक्षा संस्थानों में प्रवेश लेने वाले बच्चों को विदेशी भाषा, समाज, संस्कृति तथा शिक्षा व्यवस्था के अनुसार ही अपने आप को ढ़ालना होगा? इस प्रश्न का उत्तर हाँ है तो ये विश्वविद्यालय केवल भारत की शिक्षा व्यवस्था में ही नहीं अपितु भाषा, समाज और संस्कृति में भी अंतर्विरोध का निमार्ण करेंगे।

उद्देश्य

अध्ययनों के आधार पर प्रस्तावित शोध के लिए निम्नलिखित उद्देश्य निर्मित किये गये हैं–

1. माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में विभिन्न मूल्यों की स्थिति का अध्ययन करना।
2. मूल्यों पर भाषा के प्रभाव का अध्ययन करना।

परिकल्पना

प्रस्तावित अध्ययन के लिए निम्नलिखित परिकल्पनायें बनायी गयी है–

1. माध्यमिक विद्यालयों में पढ़ने वाले छात्रों में मूल्य की स्थिति में कोई अन्तर नहीं होगा।
2. मूल्यों पर भाषा का प्रभाव नहीं पड़ेगा।

न्यादर्श

वर्तमान शोध हेतु अंग्रेजी एवं हिन्दी माध्यम से चलने वाले विद्यालयों के कुल 3240 विद्यार्थियों में से कुल 320 विद्यार्थियों का चयन यादृच्छिक पद्धति से किया गया है।

वर्तमान शोध की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए शोधकर्ता ने शोध की जनसंख्या के रूप में अंग्रेजी माध्यम एवं हिन्दी माध्यम के माध्यमिक विद्यालयों में पढ़ने वाले विद्यार्थियों को परिभाषित किया है।

हिन्दी माध्यम से पढ़ने वाले विद्यार्थियों में मूल्यों के प्रति लगाव एवं उनका वरीयता क्रम

हिन्दी	सैद्धान्तिक मूल्य	आर्थिक मूल्य	सौंदर्यात्मक मूल्य	सामाजिक मूल्य	राजनैतिक मूल्य	धार्मिक मूल्य
उत्तरदाताओं की संख्या	160	160	160	160	160	160
मध्यमान	45.13	36.34	31.56	44.38	42.31	40.35
मानक विचलन	5.29	4.67	5.43	6.19	5.77	5.06
रैंक	1	5	6	2	3	4

उपरोक्त तालिका से यह स्पष्ट होता है कि हिन्दी माध्यम से पढ़ने वाले विद्यार्थियों ने मूल्य के क्रम में सैद्धान्तिक मूल्य को प्रथम स्थान पर प्रदर्शित किया फिर सामाजिक मूल्य को प्रदर्शित किया। इसी तरह राजनैतिक मूल्य को तीसरे स्थान पर जगह दिया तो धार्मिक मूल्य को चौथे स्थान पर रखा, पाँचवे स्थान पर आर्थिक मूल्य और अन्त में सौन्दर्यात्मक मूल्य में अपनीरूचि दिखायी। मध्यमान मूल्यों को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि हिन्दी माध्यम से पढ़ने वाले विद्यार्थियों में आर्थिक और सौन्दर्यात्मक मूल्य सामान्य स्तर से भी कम पाया गया। सामान्य स्तर का मूल्य 40 है।

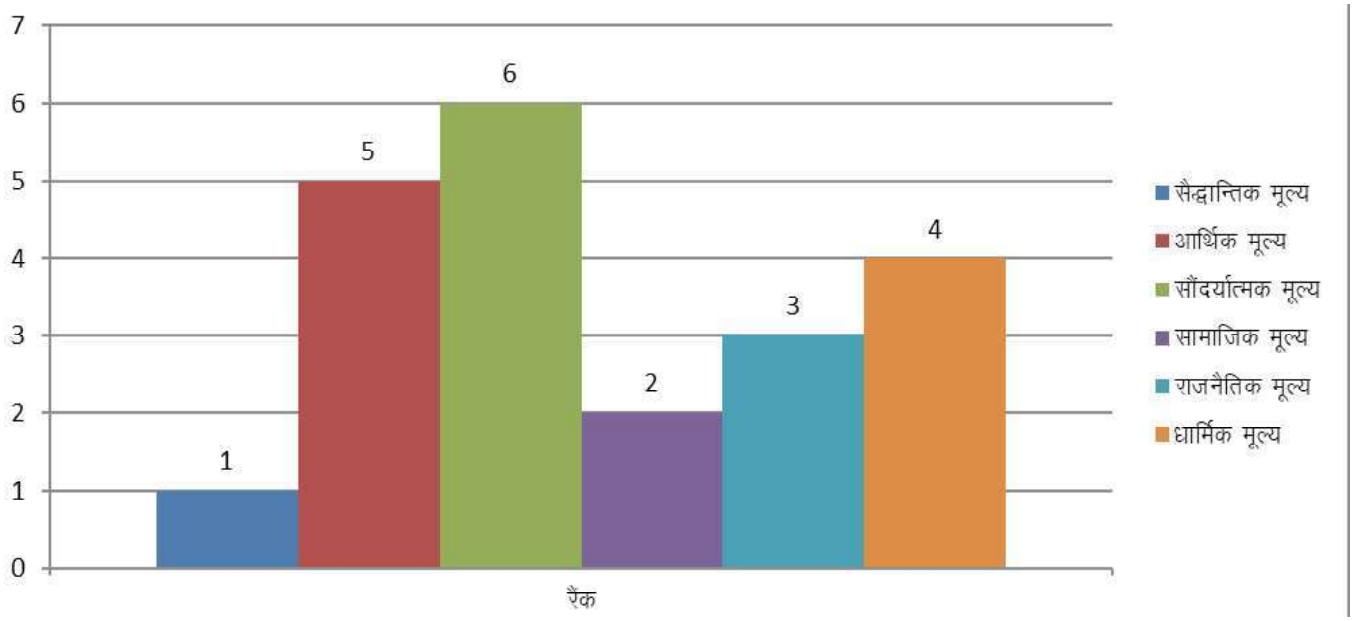

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

अंग्रेजी माध्यम से पढ़ने वाले विद्यार्थियों में मूल्यों के प्रति लगाव एवं वरीयता क्रम

अंग्रेजी	सैद्धान्तिक मूल्य	आर्थिक मूल्य	सौंदर्यात्मक मूल्य	सामाजिक मूल्य	राजनैतिक मूल्य	धार्मिक मूल्य
उत्तरदाताओं की संख्या	160	160	160	160	160	160
मध्यमान	46.79	42.02	27.96	46.51	41.61	39.94
मानक विचलन	4.76	4.98	6.19	4.93	4.87	5.70
रैंक	1	3	6	2	4	5

उपरोक्त तालिका से यह स्पष्ट होता है कि अंग्रेजी माध्यम से पढ़ने वाले विद्यार्थियों ने मूल्य के क्रम में सैद्धान्तिक मूल्य को प्रथम स्थान पर प्रदर्शित किया है, फिर सामाजिक मूल्य को प्रदर्शित किया। इसी तरह आर्थिक मूल्य को तीसरे स्थान पर जगह दिया तो राजनैतिक मूल्य को चौथे स्थान पर रखा, पाँचवे स्थान पर धार्मिक मूल्य और अन्त में सौन्दर्यात्मक मूल्य में अपनी रूचि दिखायी। मध्यमान मूल्यों को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि अंग्रेजी माध्यम से पढ़ने वाले विद्यार्थियों में सौन्दर्यात्मक मूल्य सामान्य स्तर से कम पाया गया। सामान्य स्तर का मूल्य 40 है।

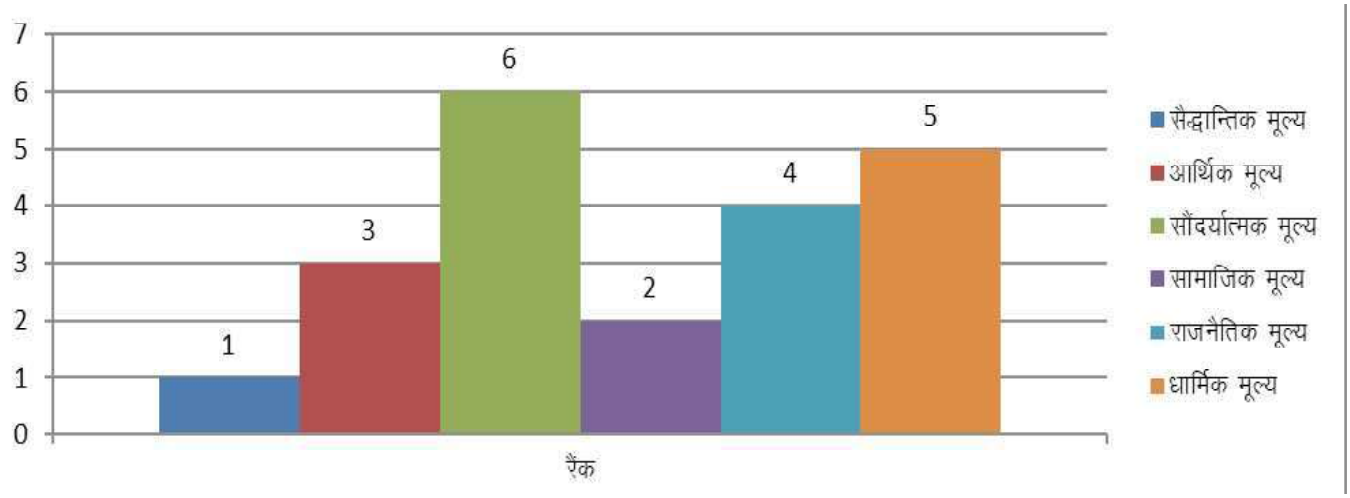

उपर्युक्त तथ्यों को ध्यान में रखकर शोधकर्ता ने शोध में परिणामों की व्याख्या करने का प्रयास किया है।

इस अध्ययन में प्रथम परिकल्पना यह निर्मित की गयी थी कि "माध्यमिक विद्यालयों में पढ़ने वाले छात्रों में मूल्य की स्थिति में कोई अन्तर नहीं होगा।" परिकल्पना की पुष्टि के लिये एस. पी. कुलश्रेष्ठ (1970) द्वारा निर्मित मूल्य अध्ययन मापनी का उपयोग किया गया, तथा पाया गया कि माध्यमिक स्तर पर पढ़ने वाले विद्यार्थियों में जहाँ एक तरफ सैद्धान्तिक मूल्य, सामाजिक मूल्य, राजनैतिक मूल्य, धार्मिक मूल्य अधिक थे, वहीं दूसरी तरफ हिन्दी माध्यम से पढ़ने वाले विद्यार्थियों में आर्थिक मूल्य, सौन्दर्यात्मक मूल्य कम स्तर के पाये गये जबकि अंग्रेजी माध्यम से पढ़ने वाले माध्यमिक विद्यार्थियों में सौन्दर्यात्मक मूल्य कम पाया गया। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि मूल्यों को लेकर माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में असमानतायें थी अतः निर्मित परिकल्पना अस्वीकृत होती है। क्योंकि मूल्यों की स्थिति अलग–अलग पायी गयी है।

डॉ. आर. के. मुकर्जी ने अपनी कृति ''द सोशल स्ट्रकचर ऑव वैल्यूज'' में मूल्यों के सन्दर्भ में लिखा है कि– समाज के नियंत्रण या अनुमोदन के माध्यम से मानवीय अभिप्रेरणाये मूल्यों में रूपान्तरित हो जाती है।

- आधारभूत मूल्यों की संतुष्टि हो जाने के पश्चात् उदासीनता जन्म लेती है। इस अवस्था में समाज और संस्कृति मानव के लिये नवीन इच्छायें, नवीन लक्ष्य, नवीन साधनों की पृष्ठभूमि तैयार करते है जिससे नये मूल्य पनपने लगते है। इसे मूल्यों के चक्र का नियम कहा जाता है।
- मूल्य आपस में घुलमिल जाते है, इसलिए व्यक्ति का व्यवहार बदला हुआ सा समझ में आता है। कभी मूल्य संतुलित रूप में दिखायी देते है तो कभी असंतुलित रूप में।
- आपसी प्रतिस्पर्धा के कारण मूल्यों में टकराव होता रहता है और संस्तरण का रूप ले लेते है।
- मूल्य आपस में संघर्ष करते रहते हैं, संघर्ष के फलस्वरूप व्यक्ति अपनी शिक्षा अनुभव, संस्थाओं एवं सामाजिक आदर्श नियमों द्वारा निर्देशित होकर सही मूल्यों का चुनाव करता है।

- समाज या संस्कृति मनुष्य को मूल्यों के आधारभूत मॉडल को प्रस्तुत करती है। मानवीय मूल्य मनुष्य के सामाजिक सम्बन्धों का द्योतक भी होती है। यह संस्कृति परम्परा व प्रशिक्षण ही है जो की आधारभूत मूल्य व्यवस्थाओं का सृजन करते है और इन्हें सामाजिक साध्य तथा साध्यों के साथ गूथते है।
- मानव का विवेक एवं निर्णय तथा समाज का अनुभव मूल्यों के लिए एक सोपान तैयार करते है जो कि मूल्यों के चुनाव की एक छलनी का काम करता है। इसी से व्यक्ति उत्तम, अधम, स्वतः व साधन मूल्यों के बीच भेद करता है।
- इनमें वैयक्तिकता, भिन्नता तथा अनोखापन भी देखने को मिलता है। व्यक्ति अपने रूचियों आदतों तथा विभिन्नता के कारण मूल्यों की सन्तुष्टि अपने–अपने तरीके से करता है।
- व्यक्ति के आदर्श मूल्यों, बौद्धिक, कलात्मक एवं धार्मिक की जड़ उसकी अर्न्तदृष्टि तथा परानुभूति में एवं सामाजिक सहयोग और संसर्ग में होती है। कला, संगीत, साहित्य तथा धर्म से सम्बन्धित महान व्यक्तियों में अर्न्तदृष्टि तथा परानुभूति या सहानुभूति के गुण कूट–कूट के भरे होते है जिसके कारण उनके लिए जीवन के आधारभूत नियमों तथा मूल्यों को पहचानना एवं उन्हें लोगो तक एक अत्यधिक प्रभावशाली ढ़ंग से पहुँचाना सरल होता है।
- मनुष्य का आदर्श मूल्य, सत्य के सम्बन्ध में उसकी अर्न्तदृष्टि सौन्दर्यविषयक व धार्मिक बोध उसका व्यावहारिक आविष्कार तथा प्रयोगवादी नियंत्रण व उत्साह इन सब की शक्ति व स्थायित्व का स्रोत निश्चय ही सामाजिक संस्कृति है। जो की वैयक्तिक जीवनों को अपने घेरे में ले लेती हैं।

अध्ययन की दूसरी परिकल्पना यह बनायी गयी थी कि "मूल्यों पर भाषा का प्रभाव नहीं पड़ेगा।" अर्थात् यह देखना था कि माध्यमिक स्तर पर पढ़ने वाले विद्यार्थियों के अध्ययन माध्यम का प्रभाव मूल्यों के विकास पर नहीं पड़ेगा। इसके परीक्षण के लिये दो प्रकार के प्रतिदर्श का चुनाव किया गया था। एक वह समूह जिसका माध्यम हिन्दी था तथा दूसरा वह समूह जिसका अध्ययन माध्यम अंग्रेजी था। दोनों प्रकार के प्रतिदर्श पर मूल्यों की स्थिति को जानने का प्रयास किया गया तथा पाया गया कि अंग्रेजी माध्यम से पढ़ने वाले विद्यार्थियों में सैद्धान्तिक मूल्य हिन्दी माध्यम से पढने वाले विद्यार्थियों की तुलना में उच्च था तथा उन दोनों के मध्य प्राप्त टी–मूल्य सार्थक था। इसी तरह अंग्रेजी माध्यम से पढ़ने वाले विद्यार्थियों में आर्थिक मूल्य भी हिन्दी माध्यम से पढ़ने वाले विद्यार्थियों की तुलना में अधिक था। दोनों के मध्य निकाले गये टी–परीक्षण से भी ज्ञात होता है कि इन दोनो के मध्य सार्थक अन्तर है।

अंग्रेजी माध्यम से पढ़ने वाले विद्यार्थियों में सामाजिक मूल्य भी अधिक पाये गये तथा इन दोनों के मध्य निकाले गये टी–परीक्षण से भी यह पता चलता है कि इनके मध्य सार्थक अन्तर पाया गया। वहीं सौन्दर्यात्मक मूल्य, राजनैतिक मूल्य और धार्मिक मूल्य हिन्दी माध्यम के विद्यार्थियों में अधिक पाये गये। इससे स्पष्ट होता है कि विभिन्न मूल्यों पर भाषा का प्रभाव पड़ता है। इस सन्दर्भ में बनायी गयी परिकल्पना अस्वीकृत होती है तथा यह सिद्ध होता है कि भाषा किसी न किसी रूप में बालकों के अन्दर अपने तरीके से मूल्यों को गढ़ती है।

प्रायः सभी बालक अपने परिवार और समाज के अधिकांश मूल्यों को ग्रहण कर लेते है और उनके द्वारा निर्दिष्ट आचरण करते है। परन्तु इससे यह नहीं समझना चाहिए कि सभी मानव समाजों व सांस्कृतियों में एक से मूल्य पाये जाते है। विभिन्न समुदाय, जातिय समूहों तथा धार्मिक समूहों में व्याप्त व्यक्तिगत मूल्यों, आदर्शों और नैतिक भावनाओं में बहुत अधिक अन्तर पाया जाता है।

लगभग 60 वर्ष पूर्व वैंजामिन ली ने "भाषा चिन्तन एवं वास्तविकता" पर एक पुस्तक लिखी थी जिस पर बताया था कि भाषा, प्रत्यक्षीकरण और चिन्तन के विभिन्न अंगों को प्रभावित करती है। इसके बाद विभिन्न भाषाविदों और व्यवहारवादियों ने इस पर गहन अध्ययन किया यद्यपि कि अभी तक ऐसा कोई स्पष्ट प्रभाव नहीं प्राप्त हुआ जिससे ये कहा जाये कि भाषा प्रत्यक्षीकरण और पश्चात प्रत्यक्षीकरण की प्रक्रियाओं से संबंधित मस्तिष्क की क्रिया को प्रभावित करती है।

नये संज्ञानात्मक शोध यह प्रदर्शित करते है कि भाषा निश्चित रूप से संसार को नये रूप से देखने की शक्ति देती है।

यह प्रश्न वर्षों पहले उठा था कि क्या भाषा हमें सोचने के लिये नई दिशा देती है। चॉर्ल मैगने न यह घोषणा की थी कि "यदि हमारे पास कोई दूसरी भाषा है तो निश्चित रूप से हमारे पास एक दूसरी आत्मा भी है।" लेकिन यह अन्य वैज्ञानिकों और नोम चॉम्सकी के भाषा सिद्धान्त के साथ महत्वहीन हो गया। डॉ. चॉम्सकी ने कहा था कि "सभी भाषाओं का एक शाश्वत ग्रामर होता है।" इसलिए इसका सवाल ही नहीं उठता कि भाषाई भिन्नता हमारे सोच को परिवर्तित कर सकती हैं।

प्रस्तुत अध्ययन में यह पाया गया है कि सैद्धान्तिक मूल्य, सामाजिक मूल्य, राजनैतिक मूल्य तथा धार्मिक मूल्य दोनों ही समूह के विद्यार्थियों में उच्च स्तर का पाया गया लेकिन इनके सैद्धान्तिक मूल्य, आर्थिक मूल्य, सौन्दर्यात्मक मूल्य और सामाजिक मूल्यों के मध्यमानों के बीच सार्थक अन्तर पाया गया है। इसका अर्थ हुआ कि भाषा कहीं न कहीं मूल्यों के स्तर को प्रभावित करती है। निष्कर्ष स्वरूप यह कहाँ जा सकता है कि अध्ययन क्षेत्र से चयनित प्रतिदर्श विभिन्न प्रकार की बोली एवं भाषाओं से प्रभावित थे।

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

सन्दर्भ

1. भारद्वाज, इ. (2017). मूल्य शिक्षा एवं नैतिक प्रवृत्तिया. राखी प्रकाशन प्रा.लि.: आगरा।
2. चाम्सकी, मेन्सन्ड बाई., लाल, जे.एन., श्रीवास्तवा, अनिता. (2007). आधुनिक विकासात्मक मनोविज्ञान. विनोद पुस्तक मन्दिरः आगरा।
3. गुप्ता, एन.एल. (2000). मूल्यपरक शिक्षा और समाज. नमन प्रकाशनः नई दिल्ली।
4. अनवारसु, एम0. (1992). वैल्यू ओरियेन्टेशन इन इंगलिस लैंग्वेज टेक्सट बूक ऑव अपर प्राइमरी स्कूल. एम–फिल., एजूकेशनः अलागप्पा विश्वविद्यालय।
5. कुमार, कृष्ण. (1986). द चाईल्ड लैंग्वेज एण्ड द टीचर. यूनाइटेड नेशन्स चिल्ड्रेनः हेंडबूक।
6. कुलश्रेष्ठ, एस.पी. (1970). मूल्य अध्ययन मापनी. रूपा साईकोलोजी सेन्टरः वाराणसी।
7. चोपड़ा, आर.एल., जॉगिड़ ओ.पी. मूल्य एवं नैतिक शिक्षा. स्वाती पब्लिकेशन्सः जयपुर।
8. आलपोर्ट, जी.डब्ल्यू. (1960). स्टडी ऑफ वैल्यूज. कैलीफोर्निया यूनिवर्सिटीः बोस्टन।
9. आलपोर्ट, वर्नन., लिण्डजे. (1960). मैनुअल फॉर द स्टडी ऑव वैल्यूज. बोस्टन. पृष्ठ **9.**
10. कुमार, कृष्ण. विचार का डर. राजकमल प्रकाशनः दिल्ली।
11. करपात्री जी. मार्क्सवाद एवं रामराज्य. गीता प्रेसः गोरखपुर।

8

पुरुषार्थ चतुष्ट्य में धर्म का विवेचन

घनश्याम शर्मा
सहायक आचार्य (साहित्य)
राजकीय शास्त्री संस्कृत महाविद्यालय
सावर, अजमेर

सारांश

भारतीय मनीषा में मानव कल्याण के निमित्त अनेक अवधारणाओं एवं सिद्धान्तों का विवेचन किया गया है। इसमें व्यक्ति और समाज के साथ राष्ट्र के उत्थान के मार्ग को प्रदर्शित किया गया है। पुरुषार्थ चतुष्ट्य की संकल्पना भी इसी मार्ग का पथ है। प्रस्तुत शोध लेख आज के संदर्भ में विचलित मानवीयता, और मनुष्यता के खतरे को भाँपकर पुनः भारतीय आचार्यो के बनाये गये पुरुषार्थ चतुष्ट्य के प्रथम सोपान धर्म का पुनर्पाठ है। इस लेख में युगों पूर्व मानव के मनोविज्ञान को समझने वाले इस धर्म तत्त्व की संकल्पना, उसकी आवश्यकता, धर्मसम्मत कर्म से कल्याण प्राप्ति, एवं समाज की प्रगति जैसे मूल्यों को संदर्भित किया गया है।

मुख्य बिन्दु

पुरुषार्थ चतुष्ट्य, धर्म, मूल्य, संस्कृति।

मनुष्य कर्मशील चेतनासम्पन्न प्राणी है। वह अपने समस्त ऐहिक एवं पारलौकिक कार्यो के प्रति सदैव से जाग्रत रहा है। उसे शास्त्रीय परम्परा में ऐसे निर्देश प्राप्त हुए है जिसके माध्यम से वह सांसारिक कार्यो को करते हुए मानव जीवन के मूल उद्देश्य परम तत्त्व की प्राप्ति कर सकता है। वह अपने कर्तव्यों और लक्ष्यों का निर्धारण करते हुए अपने जीवन में सुख, शांति, वैभव, और आध्यात्मिक लक्ष्यों की प्राप्ति सुगमता से कर सकता है। ये शास्त्रीय निर्देश भारतीय संस्कृति में पुरुषार्थ चतुष्ट्य के नाम से जाने जाते हैं। वैदिक साहित्य में कहा गया है कि मानव–जीवन की सम्पूर्ण इच्छाओं की प्राप्ति पुरुषार्थ पर ही आधारित है, इसीलिए उसको अपने उद्देश्यों की पूर्ति करने के लिए कर्म करना नितान्त आवश्यक माना गया है। धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष ये चारों भारतीय संस्कृति के मूल स्तम्भ हैं। जिसमें मनुष्य पुरुषार्थ रूपी मूल्यों के द्वारा अपनी जीवन–यात्रा को पूर्ण करता है। हमारी भारतीय संस्कृति मूल्यपरक होने के कारण समग्र विश्व के लिए प्रेरणा–स्रोत रही है। पुरुषार्थ उसी की विशेषता है। पुरुषार्थ दो शब्दों पुरुष और अर्थ का संयोग है। शरीर में निवास करने वाले जीवात्मा को पुरुष कहा जाता है, और उसके अभीष्ट लक्ष्य को पुरुषार्थ की संज्ञा से अभिहित किया गया है। पुरि देहे शेते इति पुरुषः पुरुषैरर्थ्यते प्रार्थ्यते इति पुरुषार्थः[1] यहाँ पुरुष वाचक शब्द का प्रयोग दो अर्थो में किया जा सकता है। पहला अर्थ परमपुरुष अर्थात् आदि पुरुष के रूप में है, जिसको ऋग्वेद के पुरुष–सूक्त में इस प्रकार कहा गया है–

पुरुष एवेद सर्व यद्भूतं यच्च भाव्यम्। [2]

अर्थात् यह सब जो हो गया है और जो होगा वह पुरुष (परमात्मा) के द्वारा ही है। दूसरा अर्थ जीवात्मा रूपी पुरुष (मनुष्य) से है। पुरुषार्थ में इस प्रकार की अवधारणा है कि जीवरूपी पुरुष अपने सम्पूर्ण जीवन को सद्कर्मों के माध्यम से व्यतीत करता है, जिसमें वह चारों पुरुषार्थों से सम्बद्ध मूल्यों का सुनियोजित ढंग से समन्वय करता हुआ, परमपद अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति कर सकता है। इस प्रकार यह कह सकते हैं कि दोनों पुरुष का सम्बन्ध अन्योन्याश्रित है।

पुरुषार्थ चतुष्ट्य की संकल्पना की आवश्यकता क्यों?

धर्म, अर्थ एवं काम ये त्रिवर्ग मानव जीवन के लिए साधन है एवं मोक्ष परम साध्य के रूप में विद्यमान है। मनुष्य सदैव कर्म के प्रति प्रयत्नशील रहता है, क्योंकि उसका त्रिवर्गरूपी साधन उसको उच्चतम मूल्यों के सोपान तक पहुँचाकर परमपद की प्राप्ति

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

करा सकता है। उन मूल्यों का उद्‌गम स्थल वेद, उपनिषद, स्मृति, पुराणादि को माना जाता है। उसमें विविध प्रकार के मूल्यों की भावना निहित है। ऋग्वेद में कहा गया है कि– पुरुषार्थी पुरुष निरन्तर चेष्टा करता है।[3] इस प्रकार जिज्ञासा एवं इच्छा के उत्पन्न होने और उसको पूर्ण करने में मनुष्य को कर्म की आवश्यकता पड़ती है। ऐसा माना जा सकता है कि प्राचीनकाल में उस कर्म को पुरुषार्थ कहा जाता रहा है। भारतीय मूल्य परम्परा में यह पुरुषार्थ एक आदर्श मूल्य भी माना गया है।[4] कर्म की पवित्रता ही मनुष्य के अन्तःकरण को सन्तुष्टि प्रदान कर सकती है। क्योंकि हमारे कर्मो का प्रतिबिम्ब ही हमारी चेतना का निर्माण करता है इसलिए हमें कर्म की पवित्रता का विशेष ध्यान रखना चाहिए। वैदिक साहित्य में कर्मठ व्यक्ति की प्रशंसा की गई है एवं सभी प्राणियों को प्रेरित किया गया है कि वे निरन्तर कर्म के प्रति आग्रह या जिज्ञासा रखें– अथातः क्रत्वर्थपुरुषार्थयोर्जिज्ञासा[5] (व्यक्ति को कर्मप्रधान पुरुषार्थ की जिज्ञासा करनी चाहिए)।

पुरुषार्थ का क्षेत्र अतिविस्तृत एवं व्यापक है। इसका जितना प्रभाव वैदिक साहित्य में है, उतना ही लौकिक साहित्य में भी मिलता है। लौकिक साहित्य में आदिकाव्य रामायण में पुरुषार्थ को महान फल प्रदान करने वाला बताया है।[6] महर्षि वाल्मीकि कहते हैं कि धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ये चारों पुरुषार्थ के साधन है एवं महान फल देने वाले है। इसी कथन की पुष्टि महाभारत भी करता है। इसमें कहा गया है, कि मनुष्य स्वयं कर्म करके जो कुछ फल प्राप्त करता है उसे पुरुषार्थ कहते हैं।[7] वामन पुराण में पुरुषार्थचतुष्ट्य से मनुष्य का पूर्ण विकास माना गया है। जिसकी उत्पत्ति सदाचाररूपी वृक्ष से मानी गयी है। धर्म को उसकी जड़, अर्थ को शाखा, कामना को पुष्प और मोक्ष को उसका फल माना गया है।[8] वहाँ अग्निपुराणकार ने त्रिवर्ग को वृक्ष के तुल्य मानते हुए कहा है कि– धर्ममूलोऽर्थविटपस्तथा कर्मफलो महान्।[9] अर्थात् धर्म उसकी जड़ है अर्थ उसकी शाखाएँ हैं एवं काम उसका फल है। आचार्य मनु ने भी त्रिवर्ग (धर्म, अर्थ और काम) को कल्याण रूप श्रेयस्कर बताया है।[10] मनुष्य के जीवन के विविध पक्षों का सूक्ष्म अध्ययन करते हुए हमारे मनीषियों ने तो पुरुषार्थ के चारों सोपानों पर पृथक–पृथक ग्रंथों का प्रणयन तक किया है। धर्मरूपी पुरुषार्थ को आधार बनाकर आचार्य मनु ने मनुस्मृति, अर्थ की प्रधानता पर आधारित कौटिल्य ने अर्थशास्त्र, कामरूपी पुरुषार्थ को आधार मानकर वात्स्यायन ने कामसूत्र और आचार्य कपिलादि ने (दर्शनादि) मोक्ष पर आधारित सांख्यदर्शन ग्रन्थों का प्रणयन किया।

यहाँ प्रश्न यह उठता है कि पुरूषार्थ का इतना विवेचन का कारण क्या है? उत्तर यह है कि आज मनुष्य का जीवन इतना जटिल हो चुका है कि उसे क्या करने योग्य है और क्या नहीं, इसका ज्ञान भी नहीं है। वह अपने स्व की कोटर में निरन्तर सीमित होता जा रहा है। स्थिति इतनी विकट है कि अब तो मोबाइल ही उसका जीवन हो गया है। मनुष्य जीवन के लक्ष्य को विस्मृत कर दिया गया है। वह केवल भोगयोनि का प्राणी बनकर रह गया है। उसे अपने मानव जीवन के कल्याणकारी साहित्यों के नाम तक स्मरण नहीं है। ऐसे में वह अपने जीवन की पूर्णता और परम लक्ष्य की प्राप्ति से वंचित होकर दुखी होता है। इस त्रिवर्ग की महत्ता इस तथ्य से भी प्रमाणित हो जाती है कि संस्कृत के काव्यशास्त्रियों ने भी चारों पुरुषार्थो को अपने काव्य के प्रयोजन के रूप में वर्णित किया है।[11]

इस विवेचनोपरांत यह स्पष्ट कहा जा सकता है कि पुरुषार्थ चतुष्ट्य मानव जीवन के आधार स्तम्भ हैं। यह व्यक्ति और समाज की परस्परता के पूरक हैं। मानव के मनोविज्ञान को दृष्टिगत रखते हुए वैदिक साहित्य को निर्मित किया गया था। जिससे मनुष्य अपना कल्याण कर सके। कालांतर में इस ज्ञान को कल्पना प्रसूत कहकर विस्मृत कर दिया गया। आज का परिवेश हमारे समक्ष है। मानव का जीवन अत्यंत कठिन है। जीवन के उन पक्षों के प्रति उसका चिन्तन है जो स्थायी नहीं है। अहंकार, क्रोध, काम, छल, अधर्म, लोभ, मोह आदि विकारों से आवृत्त होकर वह केवल स्वयं की सत्ता की स्थापना करना चाहता है। सत्य, अहिंसा, अस्तेय, अपरिग्रह जैसे शब्दों से वह अपरिचित होता जा रहा है। उपर्युक्त ग्रन्थों की महत्ता इस बात से लक्षित की जा सकती है कि हमे वास्तविक लक्ष्य पुरुषार्थ को जीवन का आधार बनाना चाहिए। हमें कर्मो की गुणवत्ता का ऐसा निर्धारण करना चाहिए जिससे भाग्य का निर्माण सम्यक्‌रूप से हो। इस सम्बन्ध में अग्निपुराण में उल्लेख है–

सर्वकर्मेदमायत्तं विधाने दैव पौरुषे।
तयोर्दैवमचिन्त्यं हि पौरुषे विद्यते क्रिया।[12]

अर्थात् यह सम्पूर्ण कर्म दैव और पुरुषार्थ के अधीन है। इसमें दैव तो अचिन्त्य है, किन्तु पुरुषार्थ में कर्म का स्थान है जिससे वह मनुष्य परम उन्नति को प्राप्त कर सकता है।

पुरुषार्थ चतुष्ट्य और धर्म

पुरुषार्थ चतुष्ट्य, परमात्मा द्वारा प्रदत्त वह नैसर्गिक गुण है, जिसके आधार पर जीव स्वयं का पोषण करता है। चारों पुरुषार्थ मानव जीवन के पोषक तत्व हैं। इसीलिए प्रत्येक पुरुषार्थ अनेक मूल्यों एवं कर्तव्यों से अनुस्यूत भी है। पुरुषार्थ का प्रथम सोपान धर्म है, जिसके धारण या पालन करने से मनुष्य अपने अभीष्ट लक्ष्य की प्राप्ति करता है। धर्म का सामान्य अर्थ मनुष्य या पदार्थ की प्रकृति, गुण, कर्म एवं स्वभाव है। शब्दकोश के अनुसार धर्म शब्द ध्रियते लोकोऽनेन, धरति लोकं वा धृ धातु से मन् प्रत्यय के संयोग से बना है, जिसका आशय कर्तव्य, जाति, सम्प्रदाय आदि के प्रचलित आचरण के पालन से है।[13] भारतीय संस्कृति कोश के अनुसार

– प्रत्येक पदार्थ का व्यक्तित्व जिस वषत्ति पर निर्भर है, वही उस पदार्थ का धर्म है। शास्त्र कहते है कि धर्म वह है जिससे इस जीवन का अभ्युदय हो और भावी जीवन में निःश्रेयस् की प्राप्ति हो।[14] पूर्वमीमांसा दर्शन का प्रथम सूत्र अथातोधर्मजिज्ञासा है।[15] इस लक्षण वाक्य से मनुष्य की सर्वप्रथम जिज्ञासा यही होगी कि धर्म क्या है? और अधर्म क्या है? मनुष्य का धर्मानुसार आचरण करना एवं उसके अनुसार पथ पर चलना ही धर्म है। इसके विपरीत आचरण को अधर्म कहा जाता है। महर्षि कणाद ने धर्म को परिभाषित करते हुए कहा है कि– यतो अभ्युदय निःश्रेयस् सिद्धि स धर्मः अर्थात् जिसके द्वारा अभ्युदय तथा निःश्रेयस् की प्राप्ति हो वही धर्म है।[16] अभ्युदय से आशय मनुष्य का लौकिक कल्याण लौकिक उन्नति एवं सुख– समृद्धि का होना है, वहीं वह निःश्रेयस् आध्यात्मिक कल्याण एवं मोक्ष का परिचायक है। मनुस्मृति में वेद, स्मृति, सदाचार तथा आत्मसन्तुष्टि यह चार अभीष्ट कर्म धर्म के लक्षण हैं।[17]

उपर्युक्त विषद् विवेचन से यह निष्कर्ष निकलता है कि पुरुषार्थ चतुष्ट्य के प्रथम सोपान धर्म के बारे में प्रत्येक मनीषी या चिन्तक का अनुभव अपना है। इस धर्म रूपी पुरुषार्थ को किसी एक लक्षण में सूत्रबद्ध नहीं किया जा सकता है। परन्तु लक्ष्य एक ही है– अभीष्ट (कल्याण) की प्राप्ति। प्रश्न यह है कि इस धर्म को और इसके मर्म को किस रीति से समझा जाए जिससे मानव का कल्याण हो। ऐसी किस भावना को आधार बनाया जाए तो हमारी जीवन को श्रेष्ठ एवं आनंददायक बना दे। शास्त्रीय अध्ययन और मनन के उपरांत किसी एक निर्णय पर पहुँच पाना थोड़ा कठिन प्रतीत होता है किन्तु कहीं कोई एक आधार बनाए जाने की चेष्टा की जावे तो कर्म ही धर्म का प्रमुख आधार माना जायेगा। कर्म के कारण ही धर्म, संसार में गतिमान है। मनुष्य कर्मशील प्राणी है। मनुष्य को धर्मानुसार कर्म करना चाहिए। धर्मसम्मत आचरण से मनुष्य श्रेयस् को प्राप्त करता है। इस धर्म सम्मत आचरण के लिए मनुष्य को क्या करना है। यह अग्निपुराणकार ने अपने ग्रन्थ में बताया है–

धृति क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।।[18]

अर्थात् धैर्य, क्षमा, मन का दमन, चोरी नहीं करना, पवित्रता, इन्द्रियों को वश में रखना, विवेकवान, विद्या, सत्य बोलना, और क्रोध न करना ये दस धर्म के लक्षण है। इन गुणों को आचरण में लाने से मनुष्य को आत्मसुख की अनुभूति एवं लोक कल्याण की भावनादि का विकास होगा। यह सभी गुण मानव जीवन के विकास के लिए शाश्वत एवं अनिवार्य है। धर्म आधारित इन गुणों का सम्बन्ध मनुष्य के कर्तव्यों से है। ये सभी गुण उसे लौकिक और पारलौकिक कल्याण में सहायता प्रदान करते है। अग्निपुराणकार ने सभी वर्ण एवं आश्रमों के सामान्य धर्म से सम्बन्धित किन–किन कर्तव्यों एवं कर्मो को करना चाहिए इसको बताते हुए कहा है कि–

अहिंसा सत्यवचनंदया भूतेश्वनुग्रहः
तीर्थानुसरणं दानं ब्रह्मचर्यममत्सरः।
देवद्विजातिशूश्रुशा गुरुणां च भृगुत्तम
श्रवणं सर्वधर्माणां पितृणां पूजनं तथा।
भक्तिष्च नृपतो नित्यं तथा सच्छास्त्रनेत्रता
आनृशंस्य तितिक्षा च तथा चाऽऽस्तिक्यमेव च।
वर्णाश्रमाणां सामान्यं धर्माधर्म समीरितम्।[19]

अर्थात् मनुष्य को अहिंसा, सत्य भाषण, दया, सम्पूर्ण जीवों पर कृपा, तीर्थो का सेवन, दान देना, ब्रह्मचर्य का पालन, मत्सरता का त्याग, देवता तथा ब्राह्मणों की सेवा, गुरुओं की सेवा, सभी धर्मो का श्रवण, पितरों का पूजन, मनुष्यों के स्वामी श्री भगवान में सदा भक्ति भाव, सत्शास्त्रों का अध्ययन, क्रूरता का त्याग, सहनशीलता बनाए रखना तथा आस्तिकता आदि धर्मो का पालन करना चाहिए। इन सबसे विपरीत कर्म को अधर्म कहा जाता है। यह सभी सामान्य धर्म प्रायः प्रत्येक मनुष्य के लिए आचरणीय एवं अनुकरणीय है। धर्महीन मनुष्य को पशु के समान कहा गया है। प्रत्येक वर्ण एवं आश्रम में मनुष्यों को इन सामान्य नियमों का पालन करते हुए धर्मरूपी कर्म को विधिपूर्वक अनिवार्यतः करना चाहिए। श्रीमद्भगवद्गीता में भी स्वयं भगवान अर्जुन के माध्यम से समस्त मानव समुदाय को कर्म की प्रेरणा देते है। कुरूक्षेत्र की संकल्पना से हम यह समझ सकते हैं कि हमें धर्मक्षेत्रे के मूल को भली प्रकार जान लेना चाहिए। गीता धर्म से प्रारंभ होकर कुरू (कर्म करो) की प्रेरणा देती है जिससे साधक श्री और विजय के पथ पर अग्रसर होकर स्वयं का कल्याण कर सकता है। इस प्रकार जो मनुष्य धर्माधारित कर्म के अनुसार आचरण करेगा या इन नियमों का पालन करेगा। वह स्वयं अपना और समाज का कल्याण करने में समर्थ हो सकेगा। इसे प्रत्येक मानव को उत्तरदायित्वपूर्वक पालन करना चाहिए।

अग्निपुराण में मनुष्य के धर्म सम्बद्ध कर्मो के विवेचन के साथ–साथ राजा का प्रजा के प्रति धर्म एवं कर्तव्यों का वर्णन भी प्राप्त होता है। यह विवेचन आज के परिप्रेक्ष्य में हमारे नेतागण या राजनीति को धर्मयुक्त बनाकर समाज का कल्याण करने में सहायक सिद्ध हो सकती है। आज के परिवेश में राजनीति को सेवाकार्य की दृष्टि से कम और मेवादृष्टि से अधिक देखा जाता

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

है। शास्त्रकार कहते है कि राजा के द्वारा प्रजा की रक्षा करना परम कर्तव्य की श्रेणी में आता है। यदि वह इसके विरूद्ध आचरण करता है तो वह स्वयं को अधेगति की ओर ले जाता है। विरूद्ध आचरण से वह प्रजा को, राज्य को, विनष्ट करता है। अग्निपुराणकार कहते है कि– धर्मागमो रक्षणाच्च पापमाप्नोत्यरक्षणात्[20] अर्थात् प्रजा की रक्षा करने से उसे धर्म की प्राप्ति होती है और उसकी रक्षा नहीं करने से उसको पाप भी मिलता है। उक्त मत आचार्य मनु के कथन से ही पुष्ट है एवं कहा गया है कि जो धर्म की रक्षा करता है धर्म भी उसी की रक्षा करता है और जो धर्म का विनाश करता है, धर्म उसे भी नष्ट कर देता है।[21] अतः जिनका प्रजापालन का कार्य है अथवा आज के परिप्रेक्ष्य में जो जनता की सेवा का दायित्व निर्वहन करते हैं उन्हें इस प्रकार का धर्मयुक्त आचरण करना चाहिए।

वस्तुतः धर्म एक जीवन्त शब्द है। धर्म कल्याण के समस्त रहस्य को अपने अंक में लिए हुए है। इसमें कृत्य एवं चिन्तन की कोई सीमा नहीं है। सांसारिक दृष्टि से जिन कार्यो मे हमें हानि प्रतीत होती है परमार्थ की दृष्टि या धर्म की दृष्टि से वही कार्य उत्तम माना जाता है। श्रीमद्भगवद्गीता में कहा गया है कि धर्मयुक्त आचरण करते हुए यदि मृत्यु भी हो जाए है तो वह श्रेष्ठ है–

श्रेयान् स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात्
स्वधर्मे निधनम् श्रेयः परधर्मो भयावहः।[22]

इस विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि धर्मरूपी पुरुषार्थ मानवता के कल्याण की कुंजी है, जिसमें उसकी पूर्णता विशेष रूप से विद्यमान है। प्रत्येक मनुष्य को धर्म सम्बन्धी नियमों के अनुरूप आचरण करना चाहिए, जिससे उसका शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक एवं आध्यात्मिक विकास हो सके। यही विकास स्वस्थ समाज और समृद्ध राष्ट्र का निर्माण करने में सक्षम होगा।

संदर्भ

1. प्रसाद, तिवारी दिनेश. (2008). भारतीय संस्कृति के प्रमुख सोपान. महाकाली प्रकाशनः कानपुर. पृष्ठ **33.**
2. त्रिपाठी, विश्वम्भरनाथ. (व्याख्याकार)., शास्त्री, गुरुप्रसाद. (सम्पादककार). (1984). वेदचयनम्. विश्वविद्यालय प्रकाशनः वाराणसी. 10 / 90 / 02.
3. द्विवेदी, कपिलदेव., द्विवेदी, भारतेन्दु. (2001). अधारयद् अररिन्दानि सुक्रतुः. ऋग्वेद–सुभाषितावली. विश्वभारती अनुसंधान परिषदः भदोही (उ0प्र0). पृष्ठ **94.**
4. प्रधान, त्रिलोचन. (सम्पादक). (2016). महाकवि कुमारदास का मूल्य चेतना. किशोर विद्या निकेतनः वाराणसी. पृष्ठ **15.**
5. शास्त्री, उदयवीर. (भाष्यकार). (2003). मीमांसा दर्शन. विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्दः दिल्ली. 4.1.1. पृष्ठ **713.**
6. धर्मार्थकाममोक्षाणां हेतुभूतं महाफलम्। अपूर्वं पुण्यफलदं श्रृणुध्वं सुसमाहिताः।।. वाल्मीकि, रामायण (बालकाण्ड). गीताप्रेसः गोरखपुर. सं. 2073. 1 / 21.
7. शास्त्री, पाण्डेय रामनारायणदत्त. (अनुवादक). यत् स्वयं कर्मणा किंचित् फलमाप्नोति पुरुषः। प्रत्यक्षमेतल्लोकषु तत् पौरुषमिति श्रुतम्।।. महाभारत (वनपर्व). गीताप्रेसः गोरखपुर. 2072. 32 / 18.
8. त्रिपाठी, श्यामसुन्दर लाल. (टीकाकार). (1998). धर्मोस्यमूलंधनमस्य शाखाः पुष्पंचकामः फलमस्यमोक्षः।।. वामनपुराण, खेमराज श्रीकृष्णदासः बम्बई. 14 / 19.
9. द्विवेदी, शिवप्रसाद. (व्याख्याकार). (2014). अग्निपुराण. चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठानः दिल्ली. 224 / 02.
10. भट्ट, रामेश्वर. (टीकाकार). (2011). मनुस्मृति. चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठानः दिल्ली. 2 / 224.
11. शास्त्री शालिग्राम. (व्याख्याकार). (2009). धर्मार्थकाममोक्षेशु वैचक्षण्यं कलासु च। करोति कीर्तिं प्रीतिं च साधुकाव्यनिशेवणम्।।. (भामह). साहित्यदर्पण. मोतीलाल बनारसीदासः दिल्ली. प्रथम परिच्छेद. पृष्ठ **10.**
12. द्विवेदी, शिवप्रसाद. (व्याख्याकार). (2014). अग्निपुराण. चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठानः दिल्ली. 225 / 33.
13. आप्टे, वामन शिवराम. (2007). संस्कष्त हिन्दी कोश. मोतीलाल बनारसीदासः बनारस. पृष्ठ **489.**
14. शर्मा, पर्वतीय लीलाधर. (2008). भारतीय संस्कृति कोश. राजपाल एण्ड सन्सः दिल्ली. पृश्ठ **453.**
15. मिश्र, कामेश्वरनाथ. (व्याख्याकार). (2008). अर्थसंग्रह. चौखम्बा सुरभारती प्रकाशनः वाराणसी. पृष्ठ **04.**
16. शास्त्री, ढुण्ढिराज. (व्याख्याकार)., मिश्र, श्रीनारायण. (वैशेशिकसूत्र व्याख्याकार). (संवत् 2068). वैशेषिक दर्शन चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठानः वाराणसी. 1 / 1 / 02.

17. भट्ट, रामेश्वर. (व्याख्याकार). (2011). वेदः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः एतच्चतुर्विधं प्राहुः साक्षाद्धर्मस्य लक्षणम्। मनुस्मृति. चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठानः दिल्ली. 2/2.
18. द्विवेदी, शिवप्रसाद. (व्याख्याकार). (2014). अग्निपुराण. चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठानः दिल्ली. 161/17.
19. वही. 151/3 से 5.
20. वही. 223/11.
21. भट्ट, रामेश्वर. (टीकाकार). (2011). धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षतः। तस्माद्धर्मो न हन्तव्यो मानो धर्मो हतोऽवधीत्।।. मनुस्मृति. चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठानः दिल्ली. 8/15.
22. श्रीमद्भगवद्गीता. गीताप्रेस गोरखपुर. सं. 2073. 3/35.

9

कविता का लोकपक्षीय चिंतन और विजेन्द्र की कविता

डॉ. हरिहरानंद शर्मा
सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग
राजकीय शास्त्री संस्कृत महाविद्यालय
सावर, अजमेर
इमेलः *anandharihar78@gmail.com*

सारांश

कविता की सृष्टि समाज के सापेक्ष होती है। वही कविता श्रेष्ठ होती है जो लोक से जुड़ी हो, लोक के सुख–दुख को अभिव्यक्ति दे, लोक की आवश्यकता को स्वर दे, लोक जागरण का कार्य करे, और लोकभाषा में संवाद करे। प्रस्तुत शोध लेख आज की कविता के परिप्रेक्ष्य में विजेन्द्र की कविता को लोकधर्म और लोकपक्ष की दृष्टि से मूल्यांकित करने का प्रयास है।

मूल बिन्दु

लोक, कविता, यथार्थ, समाज, सामान्यजन, विजेन्द्र।

जो कविता आम जनता के जुबान पर हो अथवा जिस कविता की पंक्तियाँ सामान्य जन को अपने मन की भावना से जुड़ी या आत्मीय प्रतीत होती हैं। जिस कविता में आज के मानव की सुख दुख की अभिव्यक्ति साधारणीकृत हो वही कविता सच्ची कविता होती है। वही कविता लोक की कविता होती है। इस संबंध में गजानन माधव मुक्तिबोध ने लिखा है– ''किसी भी साहित्य को तीन प्रकार से देखा जाना चाहिए। एक तो, वह किन स्रोतों से उद्धृत होता है अर्थात् किन वास्तविकताओं के परिणामस्वरूप वह साहित्य उत्पन्न हुआ है? दूसरा, उसका कलात्मक प्रभाव क्या है? और तीसरा, उसकी अन्तः प्रकृति–रूप रचना कैसी है? इस तीसरे प्रश्न को बिना पहले प्रश्न से मिलाये, हम दूसरे सवाल का जवाब ही नहीं दे सकते। अड़चन तो यह है कि जिन–जिन जीवन–पक्षों की वास्तविकता से साहित्य उत्पन्न होता है, उनका वास्तविक चित्रण कलाकार कर ही रहा हो, यह निश्चित नहीं होता।''[1]

कविता के स्वरूप और उसकी अन्तःप्रकृति को विवेचित करते हुए डॉ. मैनेजर पाण्डेय ने कविता की लोकसंपृक्ति के आभासी अनुभव को सूक्ष्मता से समझने के लिए कहा है– ''लोक साहित्य और लोकप्रिय कला रूप भी कई बार शासक–वर्ग की विचारधारा की अभिव्यक्ति के माध्यम बन जाते हैं। जब जनता की सांस्कृतिक चेतना शासक–वर्ग की विचारधरा के प्रभाव में होती है तो लोक–साहित्य और लोक–कलाओं में भी यह प्रभाव प्रकट होता है। शासक वर्ग अपने विचारों और जीवन–मूल्यों को शाश्वत और सार्वभौम विचारों और जीवन–मूल्यों के रूप में प्रचारित करता है और इस प्रचार का शिकार जनता भी होती है। लोक–साहित्य और लोक–कलाओं में व्यक्त अंतर्वस्तु का बिना विवेकपूर्ण मूल्यांकन किए उनके रूप को यथावत् स्वीकार करना उचित नहीं है।''[2] यदि इन्हें स्वीकार करने की स्थिति उत्पन्न हो तो उसकी अंतर्वस्तु, लोक–कथा और लोक प्रचलित कलारूपों आदि को कविता में विवेकपूर्ण मूल्यांकन करने के बाद ही स्वीकारना या अस्वीकार करना उपयोगी होगा। समाज में फैली विषमताओं के बावजूद जब कोई साहित्यकार अपनी रचना में केवल कोरी कलात्मक अभिव्यक्ति कर प्रतिष्ठित होना चाहे तो वह तात्कालिक प्रशंसा तो प्राप्त कर सकता है परन्तु लोक की संवेदना से शून्य हो जाता है। विजेन्द्र हिन्दी कविता के लोक जीवी कविताकार है। लोक से जुड़ाव इनकी कविता की विशेषता है। ये कवि जो अपने आसपास घटित होने वाली हर घटना की संवेदना से प्रभावित है। वे अपने आसपास की घटनाओं और जीवन को देखते हैं, भोगते हैं और अपने अनुभवों को अपनी बौद्धिक क्षमता, संवेदनशील चेतना और विचारों के माध्यम से अभिव्यक्त करते हैं। इस अनुभूति की कलात्मक अभिव्यक्ति के कारण वे लोक कवि

के रूप में जाने जा सकते है। शुक्ल जी कहते हैं कि ''साहित्य में अपने समय का चित्रण होने के कारण ही साहित्य जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिम्ब''[3] कहलाता है। यह साहित्य अपने समय के सामाजिक परिवेश के साथ सामाजिक यथार्थ, विभिन्न सामाजिक संबंध, द्वन्द्व, तनाव, और संघर्ष को शब्दांकित करता है। यह समाज को एक सही दिशा एवं दृष्टि प्रदान करने की अहम भूमिका भी निभाता है। यह समाज को अच्छे और बुरे की पहचान कराता है। समाज की खामियों और समस्याओं का चित्रण करता है तथा समाज में चेतना जाग्रत करने का महत्त्वपूर्ण कार्य भी करता हैं। इसी कारण पुरूषोत्तम प्रशांत ने साहित्य को सोद्देश्य कर्म प्रक्रिया[4] माना है। समाज को दिशा देने का कार्य साहित्य करता है इस कारण डॉ रत्नलाल शर्मा साहित्य को समाज के लिए प्रकाश स्तंभ[5] मानते हैं। साहित्य की इस सामाजिक दायित्व की भावभूमिका के चलते ही उसका महत्त्व है। रचनाकार की संवेदना समाज के प्रति कितने विश्वास और दायित्व से भरी है, इसका बोध भी साहित्य कराता है। इस संबंध में ओमप्रकाश वाल्मीकि का मत द्रष्टव्य है–सामाजिक दायित्व से विहीन साहित्य चाहे जितना कलात्मक हो, रसप्रधान हो, वह मृत होता है जो हारे हुए व्यक्ति को हौसला नहीं दे सकता। इसीलिए सच को सच और झूठ को झूठ कहनेवाला रचनाकार सैंकड़ों, हजारों वर्षो बाद भी जनमानस के हृदयों में विद्यमान रहता है।[6] साहित्यकार की यही दायित्व भावना उसकी रचना को लोकपक्षीय और कालजयी बनाती है।

हिन्दी के समकालीन कवि विजेन्द्र की कविता का लोकपक्ष का विवेचन इस दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। उनकी कविताओं में लोक के यथार्थ रूप का विवरण और विवेचन मिलता है। वे अपने समय और समाज से जुड़े कवि हैं। उनकी कविताओं में समाज में व्याप्त विकृति, विसंगति, विषमता, शोषण, श्रम, दशा, और मानव मनोविज्ञान के चित्र दिखाई पड़ते है। उनका लोक वास्तविक लोक है। उनकी कविता का नायक सामान्य जन है। अभावग्रस्त मेहनतकश जिन्दगी से जूझते हुए साधारण व्यक्तित्व एवं उसके भोगे यथार्थ को अपनी संपूर्णता में उद्घाटित करना ही इनकी कविता का उद्देश्य है। आम जीवन में मनुष्य की बेबसी को शब्द देते हुए कवि ने लिखा– पानी से निकलें गसा, कहाँ धरी है दाल।[7] विजेन्द्र अपने समय और समाज के संघर्ष के प्रति सचेत हैं। जिसके हाथों फावडा, वह है सिरजनहार[8] कहकर वे श्रम की प्रतिष्ठा करते हैं। वे श्रमशील मनुष्य की संवेदना से जुड़कर व्यथित होते हैं। श्रमशील और मजदूर वर्ग के जीवन की रोज भागदौड़ और काम नहीं मिल पाने की बेबसी उन्हें विचलित करती है। कल की चिन्ता में इस मेहनत मजदूरी करने वाले आदमी का जीवन इतना विपन्न और अवसाद से भरा है, कि दो जून की रोटी के लिए वह अपने छोटे बालकों के नन्हें कंधों पर फावड़ा रखने को मजबूर है। सरकार भले ही बाल मजदूरी का निषेध करे, परंतु भूख के आगे इसकी पालना कैसे की जाए। विजेन्द्र कल के भविष्य की इस हालात पर लिखते हैं–

कंधे पर है फावड़ा, आँखों में अवसाद
कच्चे कच्चे बालकॉ, दिखे देश बरबाद[9]

युगीन यथार्थ की अभिव्यक्ति को शब्द देने में विजेन्द्र की कलम उस सच्चाई को प्रकट करती है जिसे आज के नेतागण अपने चुनावी समर के लिए वर्षो से उपयोग करते दिखाई देते है। धार्मिक वैमनस्य ने हमें युगों पीछे धकेला है। इस वैमनस्य के कारण देश की शांति और सौहार्द्र को खतरा उत्पन्न हो गया है। देश की आजादी के साथ मिली इस समस्या ने संपूर्ण देश के माहौल को कलुषित किया है। परस्पर भाईचारा और अपनत्व की भावना का ह्रास हो रहा है। जातिगत असमानता देश को खोखला कर रही है। लोकतंत्र के लिए घातक इस दुर्भावना को व्यक्त करते हुए कवि कहता है–

क्या पावन क्या शुद्ध है
नहीं आंख नहिं भाव
जाति चरित्र ही बन रहा
भरिया फूटा घाव।[10]

कवि लोकतंत्र में जनता की दुर्गति को देख त्रस्त होता है। जिस जनता के द्वारा अपने प्राणों की बलि देकर लोकतंत्र की स्थापना की थी। जिस जनता ने स्वतंत्रता, समानता और विश्वबंधुत्व जैसे मूल्यों के स्वप्न देखे थे। वे केवल संवैधानिक शब्द मात्र बनकर सजाए जा रहे हैं। वे अवसरवादी राजनीति और देश में नेताओं के गिरते नैतिक आचरण से चिन्तित हैं। गाँधी के रामराज रूपी लोकतंत्र की दुर्दशा को दादी माई नामक कविता के माध्यम से कहते हैं–

कैसा तो रामराज है
गांधी बाबा आके तो देखें
सिर कटते हैं पैसे देकर..
कहने को आजाद बहुत हूं..
जन मन होता है विचलित
पसली दुखती है।[11]

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

वर्तमानकालिक न्याय व्यवस्था के प्रति भी कवि का मन विचलित होता है। अनेक दशकों में प्राप्त होने वाले न्याय सच में न्याय नहीं होते है। वे केवल निर्णय होते हैं। न्यायालयों में पनपे भ्रष्टाचार, न्याय में होने वाली शिथिलता, न्यायाधीशों की निष्क्रियता, झूठी बहसें आदि आज की न्याय व्यवस्था की सच्चाई है। अपराध क्षण भर में हो जाता है पर न्याय मिलने में पूरी उम्र गुजर जाती है–

न्याय नहीं जनतंत्र में, मिनख पिदै दिन रात
न्यायालय के द्वार पर, गरीब खाता मात।[12]

विजेन्द्र अपने समय और समाज से जुड़े हैं। वे दुनिया में फैलती बाजारवादी अपसंस्कृति को अपनी कविता में अभिव्यक्त करते हैं। प्राचीन भारतीय संस्कृति, सभ्यता, नैतिकता, आदर्श आदि महान मूल्यों को यह उपभोक्तावादी संस्कृति कुचलती जा रही है। प्रचार प्रसार की इस मोहक लुभावनी और विज्ञापित संस्कृति ने जनता के दिमाग में केवल वस्तु उपभोग को महिमामंडित किया है। खरीदारों को उकसाना, बनावटी आवश्यकता बनाना और इस सबके लिए नारी को इस्तेमाल करना इनका काम बन गया है। इस खेल में स्त्री की अस्मिता को चोट पहुँचने से विजेन्द्र ने लिखा– ''देह बेच साबुन बिके, सुलग रही है आँच।''[13] पुरातन काल से स्त्री के प्रति उपेक्षा भाव रखा जाता रहा है। सभी जातियों और धर्मो में इसकी स्वतंत्रता को बाधित किया गया। सामाजिक विकास में बराबर की हकदार इस आधी आबादी के प्रति सम्मान करने से ही हम सभ्यता के स्वर्णिम अध्याय लिख सकेंगे। कवि का मानना है कि स्त्री, पुरुष के कंधे से कंधा मिलाकर आज समाज को गति दे रही है। यह स्त्री अस्मिता लोक में सृजन का स्रोत है। इसके अभाव में प्रत्येक संकल्पना और संभावना केवल शून्य है।

नारी चित में बह रही, चट्टानों में धार,
मेरी सिरजन लोय है, धोती मैला खार
स्त्री बिन जीवन निरा, धूल झाड़ झंखाड़,
मरू की उड़ती रेत ज्यों, जलता भीतर भाड़[14]

स्त्री के प्रति संवेदना कवि को एक मानसिक स्फोट के लिए तैयार करती है। चुनौती के लिए तत्पर यह स्त्री किसी से भी लोहा लेने के लिए मानसिक रूप से दृढ़संकल्पित है। अनेक विचलनों के बावजूद वह आत्मविश्वास से भरी है–

भौत भरोसो है अपने ऊपर
मौत भी डर माने है मोसूं
आयेगी भी तो क्या लेगी मों सूं
जब तलक जीनौ है
ये आँच पिऊँगी
लेकिन सर नीचा कर
नहीं रहूँगी
नहीं रहूँगी[15]

विजेन्द्र आज के सामाजिक परिप्रेक्ष्य में कवि की भूमिका को भी संदिग्ध दृष्टि से देखते है। वे बुद्धिजीवी वर्ग की भूमिका पर भी सवाल खड़ा करते हैं। उनका मानना है कि समाज में इतना सब विकृत और असंतुलित है बावजूद इसके समाज को जाग्रत कर चेतना स्थापित करने वाले बुद्धिजीवी धन, मान, पद और पुरस्कार की सीमा में बन्द होकर अपनी सामाजिक प्रतिबद्धता को संकुचित कर समाप्त कर रहे हैं। शिथिल और निष्क्रिय लेखन को खेत में खड़े पुतले (बिजूका) का प्रतीक मानकर लिखते हैं–

तू बिजका है खेत का, भरम मिनख का होय,
कुलीनता का भेस धर, झूठे मनका पोय।[16]

लोककवि की कविता की भाषा भी लोकनिर्मित होती है। यह भाषा मानवीय संवेदना से जुड़ी है। यह लोक में अच्छे बुरे की पहचान कराती है। लोकभाषा, लोकजागरण और लोक में समन्वय का सेतुसम्मत कार्य करती है।

पहचान कविता की पहली शर्त है,
जो शब्द रचो वो तुम्हारा ही लगे।[17]

उपर्युक्त विवेचनोपरांत यह कहा जा सकता है कि विजेन्द्र की कविता उस लोक की कविता है जिसके केन्द्र में सामान्य जन है, जो आज भी अभावो में जीता है, खपता है और मर जाता है। कोई भी सत्ता और व्यवस्था उसके प्रति संवेदनशील नहीं है। कवि ने देश के इस सामान्य जन के जीवन यथार्थ, उसकी जिजीविशा, उसकी अभावग्रस्त जिन्दगी, सामाजिक विसंगतियों,

विद्रूपताओं, खोखली लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं, बुद्धिजीवियों और कवियों की अवसरवादी प्रवृतियों को प्रश्नांकित करते हुए सत्ता से जवाब मांगा है। वे परिवर्तनकामी हैं और उस परिवर्तन का आरंभ स्वयं से करने का आह्वान भी करते है। वे स्वयं को लोक को समर्पित करते हुए कहते हैं–

हम बदलें अपने को पहले, तभी और भी बदलेंगे
यह दुनिया बदलेगी, मैं हूँ सबसे आगे।[18]

संदर्भ

1. जैन, नेमीचन्द्र. (सं.) (2007). मुक्तिबोध रचनावली (भाग 4). राजकमल प्रकाशनः नई दिल्ली. पृष्ठ **226.**
2. पाण्डेय, डॉ. मैनेजर. (2006). साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका. हरियाणा साहित्य अकादमीः पंचकूला.
3. डॉ नगेन्द., हरदयाल. (सं.) (2011). हिन्दी साहित्य का इतिहास. मयूर पेपरबेक्सः नोएडा. पृष्ठ **28.**
4. केसर, डॉ कीर्ति. सं. (2002). हिन्दी साहित्य : इक्कीसवीं सदी की चुनौतियाँ पुरूषोत्तम प्रशांत का लेख. नवराज प्रकाशनः दिल्ली. पृष्ठ **67.**
5. डॉ. रत्नलाल., केसर, डॉ कीर्ति. सं. (2002). हिन्दी साहित्य : इक्कीसवीं सदी की चुनौतियाँ. नवराज प्रकाशनः दिल्ली. पृष्ठ **114.**
6. वाल्मीकि, ओमप्रकाश., केसर, डॉ कीर्ति. सं. (2002). हिन्दी साहित्य : इक्कीसवीं सदी की चुनौतियाँ. नवराज प्रकाशनः दिल्ली. पृष्ठ **16.**
7. विजेन्द्र. (2009). दूब के तिनके. पिल्ग्रिम्स पब्लिकेशनः वाराणसी. पृष्ठ **36.**
8. वही. पृष्ठ **37.**
9. वही. पृष्ठ **80.**
10. वही. पृष्ठ **36.**
11. विजेन्द्र. (2013). दादी माई कविता. बनते मिटते पॉव रेत में. (कविता संग्रह). वाड्मय प्रकाशनः जयपुर. पृष्ठ **115.**
12. विजेन्द्र. (2009). दूब के तिनके. पिल्ग्रिम्स पब्लिकेशनः वाराणसी. पृष्ठ **88.**
13. वही. पृष्ठ **43.**
14. वही. पृष्ठ **74.**
15. विजेन्द्र. (2013). दादी माई कविता से. बनते मिटते पॉव रेत में. (कविता संग्रह). वाड्मय प्रकाशनः जयपुर. पृष्ठ **120.**
16. विजेन्द्र. (2009). दूब के तिनके. पिल्ग्रिम्स पब्लिकेशनः वाराणसी. पृष्ठ **3.**
17. विजेन्द्र. (2013). किसानों की सभा कविता से. बनते मिटते पॉव रेत में. (कविता संग्रह). वाड्मय प्रकाशनः जयपुर. पृष्ठ **51–52.**
18. विजेन्द्र. (2013). लोग भूले नहीं हैं कविता से. बनते मिटते पॉव रेत में. (कविता संग्रह). वाड्मय प्रकाशनः जयपुर. पृष्ठ **86.**

10

वनों के अवैज्ञानिक और व्यावसायिक दोहन का समाज एवं पारिस्थितिक तंत्र पर प्रभाव (उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्र के संदर्भ में)

प्रो० किरन त्रिपाठी
इतिहास विभाग
गोकुलदास हिन्दू गर्ल्स कॉलेज, मुरादाबाद

जैव विविधता से परिपूर्ण उत्तराखंड के पर्वतीय क्षेत्र का पारस्थितिक तंत्र पर्वतों की तलहटी में स्थित तराई–भाबर से लेकर उच्च हिमालयी क्षेत्र तक चार प्रकार के वानस्पतिक क्षेत्रों में फैला है।[1]

1. उपोष्ण कटिबंधीय (सब ट्रापिकल जोन) 800 -4000 फीट

इन वनों में साल के वन सबसे अधिक और मूल्यवान हैं। इसके अलावा सैन, हल्दू, सेमल, जामुन, तुन, शीशम, खैर, बाँस आदि महत्वपूर्ण हैं। वर्तमान में टीक, युकेलिप्टस तथा पॉपलर के रोपित वृक्ष भी दिखाई देते हैं।

2. शीतोष्ण कटिबंधीय (टेम्परेट जोन) 4000 -6500 फीट

इनमें बाँस, चीड़, तुन, बुराँस, काफल, बाँज आदि प्रमुख हैं। चीड़ का व्यावसायिक उपयोग अधिक है। बाँज के वनों में बड़े वृक्षों के नीचे झाडियाँ और घास की पर्तें भी मिलती हैं।

3. सब अल्पाइन जोन 6500-10000 फीट

सब अल्पाइन जोन में देवदार, कैल, पद्म, बाँज, बुराँस, तिलोंज, खरसू, अखरोट, अंगू, मोडू, मोरिंडा और कहीं-कहीं सुरई के वृक्ष मिलते हैं। बाँज के समान ही मोडू और खर्सू भी ओक वर्ग के वृक्ष हैं।

4. अल्पाइन जोन 10,000 -15000 फीट और बर्फ रेखा तक

अल्पाइन जोन में हिमरेखा के निचले तथा वृक्ष रेखा (टिम्बरलाइन) के ऊपरी भाग में घास के बहुत सुन्दर मैदानों का अस्तित्व है, जिन्हें स्थानीय बोली में बुग्याल कहा जाता है। इस ऊँचाई पर पर्वतमालाओं के ऊपरी भाग में छोटी-छोटी घास, जड़ी-बूटियों के पौंधे और अनेक प्रकार के पुष्पों के अतिरिक्त कोई पेड़ नहीं दिखाई देते, किन्तु इनकी घाटियों वाले भागों में खरसू, फर और भोजपत्र के वृक्ष पाए जाते हैं।

उत्तराखण्ड राज्य का वन क्षेत्र इसके कुल भौगोलिक क्षेत्र का 64.8 प्रतिशत तथा वन आवरण 45.74 प्रतिशत है।[2] फॉरेस्ट सर्वे ऑफ इण्डिया की 2017 की रिपोर्ट के अनुसार उत्तराखण्ड में वन आवरण कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 46.86 प्रतिशत था[3] तो 2019 में 45.44 प्रतिशत था।[4]

निवासियों की दृष्टि से देखें तो उत्तराखण्ड के पर्वतीय इलाकों की जनसंख्या का सबसे बड़ा हिस्सा सवर्ण जातियों के रूप में है। ये जातियाँ मध्यकाल में भारतीय उपमहाद्वीप के अलग-अलग भागों से इस अंचल में आई। शिल्पकारों को यहां का मूल निवासी माना जाता है। जनजातियों में सबसे बड़ी जौनसारी है, जो कालसी-चकराता विकासखंड के लगभग 356 गांवों में निवास करती है। इसके अतिरिक्त थारू-बोक्सा जनजातियाँ मैदानी भाग में रहती हैं। बोक्सा जनजाति का एक छोटा हिस्सा नैनीताल जिले के रामनगर एवं गढ़वाल के दुगड्डा क्षेत्र में निवास करता है। सबसे छोटी और आदिम जनजाति– वनराजि या वनरौत लगभग 0.23 प्रतिशत पिथौरागढ़ जिले के धारचूला डीडीहाट, कनालीछीना तथा चंपावत जिले में छोटे-छोटे कबीलों के रूप में है। शौका (भोटिया) समुदाय, अपेक्षाकृत उच्च हिमालयी क्षेत्र में निवास करता है, को जनजातियों में 1967 में शामिल किया गया था।[5]

पर्वतीय क्षेत्र के निवासियों और वनों के बीच घनिष्ठ अन्तर्संबन्ध रहा है। प्रारंभ से ही लोग कृषि, पशुपालन, विभिन्न कुटीर उद्योगों, जड़ी-बूटी, भवन निर्माण, कृषि औजार तथा पशुओं के लिए चारा सहित विभिन्न सामग्री वनों से प्राप्त करते थे। औपनिवेशिक शासन के आगमन के साथ ही वनों का व्यावसायिक दोहन शुरू हुआ और इन पर स्थानीय निवासियों के पारंपरिक अधिकार कम होते चले गए तथा मुनाफा केन्द्रित विकास की अवधारणा के कारण रेलवे स्लीपर, लीसा, सड़क और विद्युत परियोजनाओं हेतु बड़े बांधों के निर्माण के कारण भारी मात्रा में वनों एवं जैव विविधता का ह्रास हुआ। साथ ही भूगर्भीय दृष्टि से अति संवेदनशील पर्वतीय क्षेत्र में भारी मात्रा में भू-स्खलन, एक स्थान पर केन्द्रित बारिश (बादल फटने) की बढ़ती घटनाओं के कारण जान-माल की भारी हानि, जंगलों में आग लगने की घटनाओं में बेतहाशा वृद्धि हुई। इन स्थितियों में जानवरों के भोजन चक्र प्रभावित हुआ और वह भोजन की तलाश में मानव बस्तियों की ओर आए जिससे खेती को भी बहुत हानि हुई। इस सबसे पारिस्थितिक असंतुलन बढ़ा। परिणामतः रोजगार की तलाश में पहले से ही पलायन कर रहे नागरिकों के परिवारों के सामने भी अस्तित्व का संकट आ खड़ा हुआ। राज्य गठन के बाद इस स्थिति की ओर सरकार का ध्यान गया तो पलायन की वास्तविक स्थिति जानने के लिए पलायन आयोग का गठन किया गया। उत्तराखण्ड सरकार की ग्राम्य विकास और पलायन आयोग की सितंबर 2019 में जारी रिपोर्ट[6] के अनुसार पिछले दस वर्षों में पहाड़ की 6338 ग्राम पंचायतों से 3,83,726 लोग पलायन कर गए। इनमें से 3946 ग्राम पंचायतों के 1,18,981 ऐसे लोग हैं जो रोजगार की तलाश में पूरी तरह पर्वतीय क्षेत्र से बाहर चले गए।

पर्वतीय क्षेत्र के निवासियों और वनों के बीच गहन अन्तर्संबन्ध के ऐतिहासिक स्वरूप का अध्ययन करने पर हम देखते हैं कि उत्तराखंड में वनों की व्यवस्था पारंपरिक प्रबंध के अंतर्गत ग्रामीण समुदाय के हाथ में थी। ग्रामीणों द्वारा अपने उपयोग के लिए वनों के दोहन के साथ-साथ उनका संरक्षण भी किया जाता था। स्थानीय निवासी अपनी आर्थिकी और आजीविका के लिए वनों पर निर्भर होने के कारण अपने जीवन में उनका महत्व जानते हुए उसे बचाए और सहेजे रखते थे। वनों के साथ चला आ रहा उनका यह अंर्तसंबंध स्थानीय सामाजिक-आर्थिक-सांस्कृतिक गतिविधियों, लोक उत्सवों-पर्वों-लोकगीतों के साथ ही समग्र जीवन शैली में आज भी दिखाई देता है।

''गाँवों के आस-पास के वन गाँवों की सीमाएँ भी निर्धारित करते थे। 1823 के बंदोबस्त में भी ये सीमाएँ मानी गई थी। इन सीमाओं के भीतर से प्रत्येक गांव का निवासी ईधन, चारा, कृषि उपकरण परंपरागत कुटीर उद्योगों, घरों के निर्माण आदि के लिए वनों की लकड़ी, सूखी बिछावन, पत्तियां आदि का अपने लिए अधिकारों के रूप में उपभोग करता था। आवश्यकता पड़ने पर चारा-पत्ती-कृषि यंत्र आदि के लिए भी लकड़ी काटने का प्रावधान था। इस प्रकार पर्वतीय जनजीवन में वनों के महत्व ने अनेक रूपों में संरक्षण की एक प्राकृतिक प्रक्रिया को जन्म दिया। अनेक शिखर स्थानीय देवताओं को समर्पित थे और उसके आस-पास के वन सुरक्षित रखे जाते थे। विभिन्न वन क्षेत्र स्वतः विकास के परिणाम नहीं बल्कि वहां वृक्षारोपण और संरक्षण के चिन्ह भी मिलते हैं।''[7]

''पूर्वी कुमाऊँ में मंदिरों के आस–पास देवदार का रोपण प्राकृतिक वनों में रूपांतरित हो चुका था। गांव के चरागाह और ईधन तथा चारे के काफी बड़े क्षेत्र को घेराबंदी और अच्छी देखभाल के साथ रखा जाता था। पारंपरिक रूप से अनेक गांवों की संजायती (सामूहिक) जमीन पर भी पेड़ लगे हुए थे। इन्हें ग्रामीण क्रम से ईधन के लिए काटते थे। गढ़वाल का चौंदकोट परगना अपने गांवों की सीमाओं के भीतर स्थित वनों के लिए प्रसिद्ध था। इन्हें वनी कहा जाता था। यहां से पेड़ या टहनियां पूरे ग्रामीणों की आज्ञा से एक निश्चित समय में काटी जाती थी।''[8] यही सहयोग मानव और पारस्थितिकीय तंत्र के बीच एक दूसरे की देख-रेख का मजबूत आधार था।

औपनिवेशिक शासकों ने जंगल एवं प्राकृतिक संसाधनों को मुनाफे का आधार बनाना शुरू किया। ''1840 में किसानों एवं पशुचारकों को वनों से दूर करने के लिए पहला हस्तक्षेप चाय बागानों के आगमन के रूप में हुआ। समाज के बहुत से चरागाह, पनघट, गौचर और जंगल क्षेत्र निजी चाय बागानों को दे दिए गए। जैव विविधता को भी इस काल में भारी नुकसान पहुंचाया गया। जंगली जानवरों का शिकार करके उससे मुनाफा कमाने की प्रवृति बढ़ती गई। सन् 1848 में फ्रेड्रिक विल्सन नामक घुमक्कड़ शिकारी द्वारा पहली बार कस्तूरा मृग, दुर्लभ सफेद बाघ, काले-भूरे भालू, हिरन, मोनाल, भरल, थार, का बहुत बड़ी मात्रा में शिकार किया गया।''[9] इसी प्रकार विल्सन को 1840 में लीज पर वन उत्पादों के दोहन का अधिकार मिला। उसने देवदार, चीड़ आदि के स्लीपरों को मैदानों में नदियों द्वारा भेजने की शुरुआत की। 1885 तक भागीरथी घाटी के वनों का पर्याप्त दोहन हुआ।''[10] 1865 में वनों के प्रबंध में राज्य का नियंत्रण बढ़ता गया। 1874 में ग्रामीणों के परंपरागत वन अधिकारों को समाप्त किया गया और 1878 के वन अधिनियम के द्वारा वनों को आरक्षित घोषित किया गया। 1890 के बाद चीड़ के पेड़ों से लीसा तथा तारपीन तेल का उत्पादन किए जाने के साथ वनों के वाणिज्यीकरण में वृद्धि हुई। कुछ ही वर्षों में औपनिवेशिक शासकों के लिए वन आर्थिक लाभ प्राप्त करने के बड़े साधन बन गए। 1864 में स्थापित वन विभाग का प्रमुख कार्य रेलवे स्लीपर बनाने के लिए मजबूत और टिकाऊ लकड़ी- साल, टीक तथा देवदार के क्षेत्रों का पता लगाना था। 1865 से 1878 के बीच 13 लाख स्लीपर यमुना घाटी से निर्यात किए गए। 1878 में आरक्षित वनों का प्रावधान करते हुए ग्रामीणों के लिए लगातार वन उत्पाद प्राप्त करने के अधिकार को समाप्त कर दिया गया। 1890 से चीड़ के पेड़ों से परीक्षण के तौर पर लीसा टिपान शुरू किया गया। जब 1896 से 1911 के 15 वर्ष के अनुभव के बाद यह पता चला कि चीड़ के पेड़ों से लीसा निकालने पर पेड़ पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता और लीसे के लिए उसका उपयोग कई बार किया जा सकता

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

है तो मुनाफे के लिए औपनिवेशिक शासन ने जंगलों की प्रकृति में बदलाव करते हुए बड़ी संख्या में स्थानीय वनों/वनस्पतियों को नष्ट कर बड़े क्षेत्र में चीड़ का रोपण शुरू कर दिया। 1910 से 1920 के बीच लीसा निकालने के लिए प्रयुक्त पेड़ों की संख्या 26000 से बढ़कर 21,35000 हो गई। 1920 में बरेली में 64000 क्विंटल लीसा तथा 24000 गैलन तारपीन की उत्पादन क्षमता वाली फैक्ट्री का निर्माण कार्य पूरा हुआ तो उत्पादन आवश्यकता से अधिक होने लगा। लीसे तथा तारपीन को इंग्लैंड तथा सुदूर उत्तर पूर्व को निर्यात करने पर गंभीरता से विचार किया जाने लगा। 1916-1918 के बीच लगभग 4 लाख स्लीपरों की आपूर्ति की गई। हर साल 5000 से अधिक चीड़ के पेड़ काटे और चीरे गए। 1893 में नाप भूमि के अतिरिक्त समस्त भूमि को सरकारी घोषित करते हुए वनों को तीन भागों में विभक्त कर दिया गया। 1917 तक राज्य द्वारा वनों का अधिग्रहण कर लिया गया।''[11] इस तरह से यह स्पष्ट हो जाता है कि धीरे-धीरे स्थानीय नागरिकों को उनके वनाधिकारों से वंचित कर दिया गया।

राम चंद्र गुहा ने ग्रामीणों के वनाधिकारों में निरंतर कमी को चार अवस्थाओं में अभिव्यक्त किया है[12]

1. 1815 से 1878 के बीच सरकार ने पहाड़ की तलहटी पर स्थित भाबर क्षेत्र के साल वनों का दोहन किया और पहाड़ी क्षेत्र के वन सुरक्षित रहे।
2. 1878 से 1893 के बीच उक्त वनों को 1878 के वन अधिनियम के अंतर्गत आरक्षित घोषित किया गया। साथ ही लौह कंपनियों को कुछ वन उपयोग के लिए दिए गए। अल्मोड़ा तथा गढ़वाल के अनेक क्षेत्रों को आरक्षित या संरक्षित वन घोषित किया गया।
3. 1893 के अधिनियम के अनुसार समस्त रिक्त भूमि जो ग्रामीणों की नाप भूमि के अंतर्गत थी या पहले से आरक्षित, रिजर्व/संरक्षित, प्रोटेक्टेड वन घोषित किया गया। इस प्रकार उच्च हिमालयी क्षेत्र में रहने वाले ग्रामीणों/जनजातियों से लेकर मध्य हिमालयी क्षेत्र के इलाकों के शिखर-घाटियां-तालाब-मंदिरों की भूमि-चरागाह-सड़कों इमारतों तथा दुकानों तक इसका प्रभाव पड़ा। ग्रामीणों द्वारा किसी भी प्रकार के वन उत्पादों का व्यापार निषिद्ध कर दिया गया।''

इस प्रकार स्पष्ट है कि वैश्विक स्तर पर जलवायु में आ रहे बदलावों को देखते हुए जंगलों के संरक्षण के तर्क के साथ आम लोगों के पंचायत-वन-गौचर-पनघट आदि को भी संरक्षित वनों की श्रेणी में शामिल कर दिया गया। वनों पर राज्य के नियंत्रण की स्वीकृति तथा ग्रामीणों के पारंपरिक अधिकारों में कमी का एक अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण परिणाम यह हुआ कि वन और जन के बीच अलगाव की स्थिति बढ़ती चली गई। आरक्षित वनों के सीमांकन के कारण आम जनता में व्याप्त इस भय ने कि राज्य अन्य वन क्षेत्रों को भी अपने नियंत्रण में ले लेगा, अनेक स्थान पर ग्रामीणों को पेड़ काटने पर विवश कर दिया। लेकिन जहां भी वनों का स्वामित्व समुदाय के हाथों में रहा, वहां वनों की अच्छी देखभाल होती रही। जैसे अलकनंदा की घाटी में रूद्रप्रयाग से कर्णप्रयाग के बीच का क्षेत्र, जहां सरकार ने वनों को स्थानीय गांवों को सौंप दिया था।

आजादी के बाद भी इस प्रवृति में कोई बदलाव नहीं आया। व्यावसायिक लाभ प्रदान करने वाले वृक्षों की प्रजातियों का रोपण कर स्थानीय वृक्ष प्रजातियों को धीरे-धीरे हतोत्साहित करते हुए वनों की प्रकृति में बदलाव किया गया। ये प्रजातियां बाँज की तरह न तो भू-संरक्षण के लिए प्रभावी थीं और न ही जल संचय या जैव विविधता की कोई अच्छी स्थिति उत्पन्न होने में सहायक थीं। पर्यावरण के नाम पर स्थानीय निवासियों को जंगलों पर उनके अधिकारों से बेदखल किया गया, वहीं विकास और मुनाफे के नाम पर बड़े बाँधों, नाजुक पारिस्थितिकीय तंत्र पर खड़े पहाड़ों को अवैज्ञानिक तरीके से काटकर, डाइनामाइट का उपयोग कर सड़कों का निर्माण, पर्यटन के विकास के लिए कोलोनाइजर्स को पहाड़ में जमीनों को खरीद कर भारी निर्माण के लिए प्रोत्साहित किया गया। परिणामतः पर्वतीय क्षेत्र का हर मौसम आपदा लेकर आने लगा है। भारी हिमपात तथा ग्लेशियरों के टूटने से अचानक आ रही बाढ़ों से मानव और प्रकृति की भारी हानि, भारी बारिश से सड़कों का टूटना, कमजोर पहाड़ों का दरकना, जंगलों में भारी मात्रा में आग से होने वाली हानि आदि घटनाएँ हमारे सामने जलवायु में बदलाव और उसके विघ्वंसकारी परिणागों के रूप में दिखाई दे रही हैं।

''1970 में अलकनंदा नदी में आई बाढ़ से लेकर अगस्त 1998 में उखीमठ का भू–स्खलन जिसमें 109 लोगों ने अपनी जान गंवाई, 1998 में ही मालपा और 2013 में केदारनाथ जैसी आपदाएं हर मौसम में लगातार बढ़ती जा रही हैं। अलकनंदा की बाढ़ इस क्षेत्र में वनों के अंधाधुध कटान और पारिस्थितिकीय तंत्र से भारी छेड़छाड़ का जीता जागता नतीजा थी। इसकी विभीषिका का प्रत्यक्ष असर 320 किमी. नीचे मैदानी भाग हरिद्वार और पथरी तक रहा। इसमें 55 मनुष्य, 142 जानवर, 6 मोटर पुल तथा 16 पैदल पुल बह गए। 3 पुल और 10 किमी सडक मार्ग अनुपयोगी हो गया। बाढ़ में 25 बसें 5 टैक्सियां, 10 ट्रक 101 गांवों के 604 घर 513. 10 एकड़ खड़ी फसल, 47 घराट, 27 गौशालाएँ, 4 लिफ्ट सिंचाई की मशीनें भी बह गई। बेलाकूंची कस्बा तथा श्यामनगर, झाड़कुला, कणमीदाणमी, मार्छा आदि गांव सदा के लिए नष्ट हो गए। 100 किमी नीचे स्थित श्रीनगर का आईटीआइ भवन 6 फीट उंचे मलबे से घिर गया। ऋषि गंगा का बरीताल, पातालगंगा का चीना ताल और 1894 से शेष गौना ताल मलबे से भर गए।''[13]

बाढ़ भूस्खलन और प्राकृतिक आपदाओं का सिलसिला लगातर ही चलता आ रहा है। ''22 जुलाई 1970 को काली नदी में आई बाढ़ ने भारी तबाही मचाई। 12 अगस्त 1970 को हरसिल के तेलगाड़ में 10 लोग, 13 सितंबर 1970 को उत्तरकाशी के गेवला

में भूस्खलन से 6 लोगों को जान से हाथ धोना पड़ा। इसी तरह 12 अगस्त 1972 को टिहरी गढ़वाल के पिल्खी गांव में भूस्खलन के कारण आठ लोगों की मृत्यु हो गई।''[14] केदारनाथ की भीषण आपदा, फरवरी 2021 में ऋषि गंगा में अचानक आया जल प्रलय इसके उदाहरण हैं। यह क्रम लगातार जारी है।

भूस्खलनों और बाढ़ ने हिमालय की भूगर्भिक नाजुकता को उजागर किया और जंगलों के अंधाधुंध कटान से इसके रिश्ते की पड़ताल हुई। 70 के दशक में तवाघाट के उपरी क्षेत्र के जंगल, गैवला, उत्तरकाशी के आसपास के चीड़ के जंगल एवं यहीं पर डुण्डा क्षेत्र में जंगलों के अलावा खेतों पर खड़े पेड़ ठेकेदार कटवा रहे थे। अलकनंदा, पिंडर, सरयू, रामगंगा, गोरी नयार जमुना, टौंस आदि के जलग्रहण क्षेत्रों में अनेक जंगल कटे थे या कट रहे थे।

हिमालय की नदियों में बाढ़ों का सिलसिला नया नहीं था। लेकिन जुलाई 1970 जैसी बाढ़ बीसवीं शताब्दी में कभी नहीं आई। इसके पीछे अत्यधिक वर्षा या वर्षा का क्षेत्र विशेष में केन्द्रित होना ही नहीं था बल्कि जंगलों का कटना भी था। प्रसिद्ध पर्यावरणविद चंडी प्रसाद भट्ट के अनुसार ''दशौली तथा मन्दाकिनी ब्लॉक के कुल 16000 एकड़ में फैले जंगलों का वन विभाग ने दस वर्षीय कार्य योजना के अन्तर्गत 1960 से 1969 तक फर, स्प्रस, कैल आदि के पेड़ों को बिना भेदभाव के व्यापक पैमाने पर नीलाम करके कटान करवाया। मोटर मार्गों के आस पास चीड़ एवं बाँज प्रजाति के वृक्षों का विनाश किया गया। पेड़ों के कटान व सघन चराई से संवेदनशील क्षेत्रों में धरती की हरित परत के छिलने से मूसलाधार वर्षा को झेलने की धरती की शक्ति समाप्त हुई और भू-स्खलन में वृद्धि हुई।[15]

प्रसिद्ध भूगर्भवेत्ता के. एस. वाल्दिया के एक आकलन के अनुसार –''भारत में प्रतिदिन पाँच सौ हैक्टेयर वनों का सफाया हो रहा है। पहाड़ों में वन नहीं रहेंगे तो जल के स्रोत सूख जाएंगे। पीने और सिंचाई के लिए पानी उपलब्ध नहीं होगा। नदी नालों का जल कम हो जाएगा और मैदान के निवासियों को सिंचाई तथा विद्युत उत्पादन के लिए यथेष्ठ जल नहीं मिल सकेगा। परंतु इन नदियों में वर्षा जल विपुल मात्रा में बहा करेगा और प्रायः बाढ़ों के रूप में विनाश ढाएगा। बाढ़ों के साथ आएगी मिट्टी की अपरिमेय राशि जो उर्वर खेतों पर बिछकर उन्हें पोषक तत्वों से रहित कर देगी। पश्चिमी घाट के वनों के अकल्पनीय ह्रास से कुछ ऐसी ही अकल्पनीय परिस्थितियां यद्यपि मंद रूप में कृष्णा–गोदावरी के मैदानों में पैदा हो चुकी है।''[16]

पर्वतीय जनता को वनों से दूर करने की सरकारी नीतियों के चलते सत्ता के प्रति असंतोष के बीज उत्तराखंड के पर्वतीय क्षेत्र के गर्भ में शुरूआत से ही मौजूद थे। 1970 में अलकनंदा की प्रलयंकारी बाढ़ ने चिपको आंदोलन के रूप में प्रस्फुटित होने में निर्णायक भूमिका निभाई। गोपेश्वर, रामपुर, फाटा, रैणी सहित विभिन्न स्थानों पर सरकार द्वारा वनों की कटाई के खिलाफ आंदोलन चल रहे थे। अप्रैल 1973 में चमोली जिले में चंडी प्रसाद भट्ट तथा उनके द्वारा स्थापित दशौली ग्राम स्वराज्य मंडल के नेतृत्व में इलाहाबाद की खेल का सामान बनाने वाली कंपनी साइमंड्स को अंगू के नए वृक्ष गिराने से रोका गया।

''अगस्त 1973 में प्रधानमंत्री इन्दिरा गांधी के गढ़वाल आगमन पर सर्वोदयी नेता चंडी प्रसाद भट्ट, आनंद सिंह, धनंनजय भट्ट एवं योगेश बहुगुणा मुलाकात कर फाटा में वनों का कटान रोकने, सरकार की वन नीति में आवश्यक सुधार, नया वन बंदोबस्त करने, स्थानीय सहकारी समितियों को कच्चा माल दिए जाने, नीलामी ठेकेदारी प्रथा समाप्त करने, वनाधारित कुटीर उद्योगों को कच्चा माल, पूंजी और तकनीकी सहायता देने हेतु ज्ञापन दिया। श्रीनगर की सभा में श्रीमती गांधी ने जंगल मौसम और बाढ़ के रिश्ते का जिक्र किया था।''[17] वन्य जीवन के नष्ट होने के कारण होने वाले पर्यावरणीय असंतुलन की चर्चा इससे पहले उन्होंने 14 जून 1972 के स्टॉकहोम के व्याख्यान में भी की थी।[18]

इस सबका भी विशेष प्रभाव जंगलों को बचाने के संघर्ष में नहीं पड़ा। साइमण्ड कंपनी, जंगलात और ग्रामीणों के बीच पेड़ों को काटने और उसे रोकने की जद्दोजहद लगातार चलती रही। इस बीच महिलाएं भी आंदोलन में आ चुकी थीं। ''30 दिसंबर 1973 को गोपेश्वर की श्यामादेवी, इंद्रा देवी, जेठुली देवी, जयंती देवी तथा पार्वती देवी के नेतृत्व में रामपुर में ग्रामीण महिलाओं का जलूस निकला और श्यामा देवी की अध्यक्षता में सभा हुई। सभा में महिलाओं ने वनों को न कटने देने का प्रण दोहराया।''[19] रेणी में भी बंदूक लिए फारेस्ट रेंजर, ठेकेदार के कारिंदो और महिलाओं के बीच लंबी रस्साकशी चली, अंततः जब गौरादेवी ने चेतावनी देकर जंगल को बचाने के लिए बंदूक के आगे स्वयं को खड़ा कर दिया तो जंगलात के कर्मचारी और मजदूर लौटकर अपने कैंप में आ गए। महिलाएँ भी रात भर वहीं पर बैठी रही। सुबह आंदोलन के नेता गोविंद सिंह रावत और चंडी प्रसाद भटट व अन्य लोग आ गए तो गौरा देवी ने कहा, ''हमने जो किया ठीक किया। हमें पछतावा नहीं है और ना ही डर है। हमने आदमी को नहीं मारा। प्रेम से बात की अब पुलिस पकड़ भी ले जाए तो चिंता नहीं। हमने अपना मायका बचा लिया, हमने अपने खेत और बगड़ बचा लिए।''[20] सर्वोदयी नेता सुन्दरलाल बहुगुणा ने आन्दोलन को आगे बढ़ाने के लिए लगातार वनों और पर्यावरण के प्रति चेतना जगाने का कार्य किया और पदयात्राएँ कीं।

जंगलों को बचाने का यह संघर्ष 'चिपको आंदोलन' के रूप में राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय मंच पर चर्चित हुआ। जिस समय सरकारों द्वारा जंगलों को मुनाफे के लिए काटा जा रहा था और प्रकृति एवं नागरिकों के हिस्से तबाही आ रही थी, तब आम ग्रामीण ही थे जो जंगल और उसके पारिस्थितिकीय महत्व को समझते थे। वनों और पर्यावरण के साथ अपने अन्तर्संबंध तथा पारिस्थितिकीय

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

संतुलन को बनाए रखने के लिए आज भी स्थानीय जनता का एक बड़ा हिस्सा लगातार सजग है। वह इसके साथ होने वाली छेड़. छाड़ के कारण स्थानीय स्तर पर होने वाले नकारात्मक परिणामों को भी महसूस कर रहा है। अतः आज जब इस विनाश के व्यापक प्रभाव सामने आने लगे हैं और प्रकृति तथा मानव के अस्तित्व के लिए ही खतरा पैदा हो गया है तो जरूरी है कि हमें इनके अतर्संबंधों को गंभीरता से समझते हुए जलवायु परिवर्तन के लिए प्रभावी पहल में जंगल-नदी-जीव-खनिज आदि को कॉरपोरेट मुनाफे के लालच से मुक्त करना होगा। साथ ही इसे सहेजने और संरक्षण के लिए ऐसी नीतियां विकसित की जानी चाहिए जिसके केन्द्र में वनों पर निर्भर स्थानीय निवासियों का संरक्षण और उनके द्वारा प्रकृति का रक्षण हो सके। यह अध्ययन बताता है कि मानव और प्रकृति के बीच यही अटूट संबंध हमेशा से रहा है।

संदर्भ

1. विस्तार के लिए देखें– पाठक, शेखर. (2019). हरी भरी उम्मीद. वाणी प्रकाशनः पृष्ठ. **27–29.**
2. https://forest.uk.gov.in/ecotourism.
3. http:///www.frienvis.nic.in. फॉरेस्ट सर्वे ऑफ इण्डिया, देहरादून, इण्डिया स्टेट ऑफ फॉरेस्ट रिपोर्ट 2017.
4. http:///www.frienvis.nic.in. वही. 2019. वॉल्यूम 2.
5. विस्तार के लिए देखें हरी भरी उम्मीद. वही. पृष्ठ **29-30.**
6. https://www.gaonconnection.com/gaon-connection-tvvideos/migration-in-uttarakhand-biggest-problem of state, उत्तराखण्ड में पलायन. 23 October 2019.
7. गुहा, राम चंद्र. (1986). ब्रिटिश कुमाऊँ में वन व्यवस्था और वनान्दोलन. पहाड़, नैनीताल 2. पृष्ठ **115.**
8. उद्धृत. गुहा. राम चंद्र. फाइल 83. 1909 में स्टोवेल तथा धर्मानंद जोशी की टिप्पणी. वही. पहाड़ 2. पृष्ठ **115.**
9. पाठक, शेखर. वही. पृष्ठ **48-49.**
10. रावत, अजय. (1998). रियासती वन व्यवस्था. पहाड नैनीताल. भाग 9. पृष्ठ **162.**
11. गुहा, राम चंद्र. वही. पहाड 2. पृष्ठ **118.**
12. गुहा. वही. पृष्ठ **116.**
13. पाठक, शेखर. वही. पृष्ठ **156.**
14. वही. पृष्ठ **157.**
15. भट्ट, चण्डी प्रसाद. (1983). उत्तराखण्ड में बड़े जलाशयों व विद्युत परियोजनाओं का भविष्य. पहाड–1. नैनीताल. पृष्ठ **127.**
16. वाल्दिया, के.एस. (1983). 'हम लोगों ने ही छीन लिया हरा दुपट्टा धरती का'. पहाड भाग 1. नैनीताल. पृष्ठ **133.**
17. पाठक, शेखर. वही. चिपको की पहली लहर. पृष्ठ **194.**
18. https://www.downtoearth.org.in/hindistory. 31 May 2022.
19. पाठक, शेखर. वही. पृष्ठ **199.**
20. विस्तार के लिए देखें – भट्ट, चण्डी प्रसाद. (1992). 'गौरा देवी– चिपको का एक पृष्ठ'. पहाड़ भाग 5/6. पृष्ठ **245.** तथा पाठक, शेखर. हरी-भरी उम्मीद. वही. पृष्ठ **206–210.**

11

जनजाति उपयोजना क्षेत्र में महिला विकास का स्तर

डॉ. प्राची शास्त्री
सहायक आचार्य, भूगोल विभाग
सेठ आर एल सहरिया राजकीय महाविद्यालय, कालाडेरा (जयपुर)

सारांश

समानता प्रत्येक समाज का ध्येय है। यद्यपि प्रकृति में सर्वत्र असमानताएँ निहित हैं चाहे वह प्राकृतिक लक्षणों की दृष्टि से हों अथवा संसाधन वितरण की दृष्टि से हों। इन्हीं असमानताओं की परिणति है कि समाज में जनसंख्या अधिक होने पर संसाधनों के उपभोग में भी समानता नहीं पाई जाती। इस कारण सामाजिक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। समाज को सुदृढ़ बनाने के लिए प्रत्येक स्तर पर निहित असमानताओं को समाप्त करते हुए समरूप ढॉचा तैयार करने की महती आवश्यकता है। प्रस्तुत शोध पत्र इस समानता की दिशा में लिंग आधारित असमानता को प्रस्तुत करने का प्रयास है।

मुख्य बिन्दु

संयुक्त सूची मान, महिला विकास स्तर, असमानताएँ, समन्वित विकास।

प्रस्तावना

समानता के बिना विकास अपूर्ण है। वह समाज जिसमें मानवमात्र के साथ समान व्यवहार किया जाए एवं विकास के समान अवसर दिए जाए वही समाज उन्नत समाज कहलाता है। दूसरे शब्दों में विकास समग्र एवं समन्वित होना चाहिए, किन्तु दुर्भाग्यवश वास्तविकता इससे इतर है। महिला समाज का अभिन्न अंग है। वह परिवार एवं समाज के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करती है। महिला ही सामाजिक संरचना की नींव है। जब तक महिला सुरक्षित नहीं होगी तब तक समाज भी पंगु रहेगा। वंशवाद की बढती अवधारणा से महिला समाज का कमजोर पक्ष बनती जा रही है। देश के लगभग प्रत्येक राज्य में वंशवाद एवं पितृसत्तात्मकता के कारण कन्या भ्रूण हत्या एवं महिलाओं के प्रति अन्य अपराध भी निरन्तर बढते जा रहे हैं। जनगणना 2001 के अनुसार लिंगानुपात की दृष्टि से भी भारतवर्ष का लिंगानुपात 933 महिलाएँ प्रति हजार पुरुष जबकि राजस्थान में 921 महिलाएँ प्रति हजार पुरुष हैं। जनगणना 2011 के अनुसार यह क्रमशः 940 एवं 928 रहा।

प्रस्तुत शोध पत्र महिला सशक्तीकरण की वास्तविक स्थिति का विश्लेषण के प्रयास की दिशा में एक कदम है।

अध्ययन क्षेत्र

प्रस्तुत शोध पत्र का अध्ययन क्षेत्र जनजाति उपयोजना क्षेत्र है जो कि राजस्थान के दक्षिणतम भाग में अवस्थित है । यह प्रदेश राजस्थान के पॉच दक्षिणी जिलों– बॉसवाडा, डूंगरपुर, उदयपुर, प्रतापगढ एवं सिरोही की 19 तहसीलों को सम्मिलित कर 1973–74 में सरकार द्वारा जनजाति विकास के लिए चिह्नित किया गया। इस प्रदेश में बॉसवाडा एवं डूंगरपुर जिलों की समस्त तहसीलें, उदयपुर की सलूम्बर, सराडा, खैरवाडा, कोटडा, झाडोल, आंशिक गिर्वा, प्रतापगढ जिले की धरिवावाद, प्रतापगढ, अरनोद तथा सिरोही जिले के आबू ब्लॉक के 81 गॉवों को सम्मिलित किया गया है।

जनगणना 2011 के अनुसार प्रदेश की कुल जनसंख्या 53.23 लाख है जिसमें से 71.30 प्रतिशत जनजातीय जनसंख्या है। प्रमुख जनजातियॉ भील, गरासिया एवं डामोर हैं। जनघनत्त्व 279 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर हैं। दशकीय वृद्धि दर 22.35 प्रतिशत रही है। साक्षरता दर 45.13 प्रतिशत हैं। लिंगानुपात 984 महिलाएँ प्रति हजार पुरुष है जो कि अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। (मानचित्र1)

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

अध्ययन के उद्देश्य

1. सम्पूर्ण राज्य की तुलना में जनजाति उपयोजना क्षेत्र में महिलाओं के विकास स्तर का आकलन करना।
2. तहसील स्तर पर विषमताओं का परिकलन करना।
3. असमानताओं के कारणों का विश्लेषण करना।

परिकल्पना

1. जनजाति क्षेत्र होने के कारण यह क्षेत्र महिला विकास की दृष्टि से अविकसित है।
2. महिला साक्षरता दर निम्न है।

शोध विधि तंत्र

महिला विकास का स्तर परिकलित करने के लिए 10 सूचक लिए गए। जनगणना 2011 के अनुसार विभिन्न ऑकडों का संग्रहण किया गया। ये सूचक निम्नलिखित हैं–

1. कुल साक्षरों में महिला साक्षरों का प्रतिशत
2. कुल महिला जनसंख्या में महिला साक्षरों का प्रतिशत
3. कुल कार्यकारी जनसंख्या में महिला कार्यकारी जनसंख्या का प्रतिशत
4. कुल महिला जनसंख्या में महिला कार्यकारी जनसंख्या का प्रतिशत
5. कुल अन्य कार्यकारी जनसंख्या में महिला अन्य कार्यकारी जनसंख्या का प्रतिशत
6. कुल महिला जनसंख्या में महिला अन्य कार्यकारी जनसंख्या का प्रतिशत
7. लिंगानुपात (प्रति हजार पुरुषों पर महिलाओं की जनसंख्या)
8. महिला वृद्धि दर (1991.2001) एवं (2001–2011)
9. महिला कार्यकारी जनसंख्या की दशकीय वृद्धि दर (1991–2001)
10. तृतीयक महिला कार्यकारी जनसंख्या की दशकीय वृद्धि दर (1991–2001)

महिला विकास का स्तर : राजस्थान एवं जनजाति उपयोजना क्षेत्र

उपर्युक्त सूचकों में राजस्थान एवं जनजाति उपयोजना क्षेत्र की तुलनात्मक स्थिति निम्नानुसार है–

सारणी 1

राजस्थान एवं जनजाति उपयोजना क्षेत्र का तुलनात्मक स्वरूप

क्रम संख्या	सूचक	राजस्थान 2001	जनजाति उपयोजना क्षेत्र 2001
1.	कुल साक्षरों में महिला साक्षरों का प्रतिशत	34.85	32.86
2.	कुल महिला जनसंख्या में महिला साक्षरों का प्रतिशत	43.85	31.67
3.	कुल कार्यकारी जनसंख्या में महिला कार्यकारी जनसंख्या का प्रतिशत	38.17	45.08
4.	कुल महिला जनसंख्या में महिला कार्यकारी जनसंख्या का प्रतिशत	33.49	42.50
5.	कुल अन्य कार्यकारी जनसंख्या में महिला अन्य कार्यकारी जनसंख्या का प्रतिशत	27.06	21.84
6.	कुल महिला जनसंख्या में महिला अन्य कार्यकारी जनसंख्या का प्रतिशत	4.68	3.53
7.	लिंगानुपात (प्रति हजार पुरुषों पर महिलाओं की जनसंख्या)	921	989
8.	महिला वृद्धि दर (1991.2001) एवं (2001–2011)	29.22	31.39
9.	महिला कार्यकारी जनसंख्या की दषकीय वृद्धि दर (1991–2001)	182.36	241.23
10.	तृतीयक महिला कार्यकारी जनसंख्या की दशकीय वृद्धि दर (1991–2001)	57.92	333.86

प्रस्तुत सारणी से स्पष्ट है कि जनजाति उपयोजना क्षेत्र लिंगानुपात, महिला कार्यकारी जनसंख्या, महिला दशकीय वृद्धि दर, दशकीय महिला साक्षरता वृद्धि दर एवं महिला कुल कार्यकारी जनसंख्या की दशकीय वृद्धि के संदर्भ में सम्पूर्ण राज्य की तुलना में बेहतर स्थिति में है। जबकि राज्य की स्थिति साक्षरता की दृष्टि से तुलनात्मक रूप से बेहतर है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि महिला विकास स्तर की दृष्टि से इस प्रदेश में कन्या भ्रूण हत्या की कुरीतियॉ नहीं पाई जाती एवं दहेज प्रथा न होने के कारण लिंगानुपात बेहतर है किन्तु सशक्तीकरण की दृष्टि से साक्षरता दर कम पाई जाती है।

जनजाति उपयोजना क्षेत्र में महिला विकास का स्तर परिगणन हेतु निम्नलिखित ऑकडे एकत्रित किए गए (सारणी 2)

सारणी 2

जनजाति उपयोजना क्षेत्र में महिला विकास का स्तर

तहसील	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
आबू रोड	29.16	26.12	39.29	35.17	26.80	8.76	935	42.00	386.77	476.48	721.28
घाटोल	27.54	20.86	48.19	48.39	17.14	1.01	984	32.33	317.52	303.15	211.62
गढी	34.33	37.19	40.10	32.73	21.34	3.58	977	25.34	153.90	168.36	377.12
बॉसवाडा	34.51	36.83	42.82	39.64	16.74	3.69	959	29.72	114.31	408.51	143.97
बागीदौरा	29.32	24.27	48.51	49.43	17.63	1.12	975	30.10	239.55	312.09	112.63
कुशलगढ	28.75	21.75	48.31	48.70	23.02	1.51	978	33.46	264.64	391.35	239.55
डूंगरपुर	33.40	34.42	45.36	41.25	22.67	5.33	997	25.05	331.29	420.03	752.65
आसपुर	33.50	28.48	47.37	42.16	20.73	3.85	1071	26.99	180.00	470.40	393.56
सागवाडा	35.81	36.24	46.34	39.38	22.34	4.54	1048	81.23	299.50	440.99	1141.90
सीमलवाडा	29.29	24.33	49.63	58.55	38.05	7.08	997	26.51	167.05	597.74	1368.26
प्रतापगढ	35.49	41.65	45.40	49.21	15.51	2.00	952	25.57	176.00	179.42	139.67
अरनोद	31.24	29.63	47.81	53.19	16.48	0.94	970	31.22	203.50	122.74	10.40
कोटडा	22.63	11.11	44.10	39.19	33.61	2.61	979	42.48	497.49	236.67	719.38
झाडोल	36.22	43.08	42.74	39.69	23.12	2.55	978	33.43	679.92	304.78	285.20
धरियावाद	28.29	21.22	45.90	45.54	26.76	3.72	993	32.23	267.15	473.86	715.43
सलूम्बर	37.79	43.68	43.36	39.75	29.39	6.59	1020	32.64	595.35	394.34	653.84
सराडा	34.52	38.26	38.66	31.08	20.23	5.37	1011	21.32	203.14	406.43	636.67
खेरवाडा	33.57	38.16	44.65	38.23	11.32	1.60	998	29.02	233.85	448.02	182.92
गिर्वा आंषिक	33.21	37.78	35.50	29.67	10.19	2.54	956	9.70	300.83	195.34	111.52
जनजाति उपयोजना क्षेत्र	32.86	31.67	45.08	42.50	21.84	3.53	989	31.39	241.23	333.86	413.52

जनजागरण (2001)

इसके पश्चात् संयुक्त सूची मान विधि (Composite Index Value Method) के द्वारा महिला विकास का स्तर ज्ञात किया गया। इस हेतु सर्वप्रथम माध्य एवं मानक विचलन ज्ञात किए गए।

सारणी 3

मान–माध्य

मानक विचलन

जनजाति उपयोजना क्षेत्र में संयुक्त सूची मान

तहसील	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	कुल मान	संयुक्त सूची मान
आबू रोड	−0.77	−0.59	−1.37	−0.938	0.74	2.39	−1.67	0.73	0.62	0.97	0.69	0.80	0.073
घाटोल	−1.21	−1.18	1.01	0.838	−0.67	−1.20	−0.13	0.02	0.15	−0.42	−0.71	−3.51	−0.319
गढी	0.62	0.67	−1.15	−1.264	−0.06	−0.01	−0.35	−0.50	−0.96	−1.50	−0.25	−4.76	−0.433

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

बॉसवाडा	0.67	0.62	−0.43	−0.337	−0.73	0.04	−0.91	−0.18	−1.23	0.43	−0.89	−2.94	−0.267
बागीदौरा	−0.73	−0.80	1.09	0.977	−0.60	−1.15	−0.41	−0.15	−0.38	−0.35	−0.98	−3.47	−0.315
कुशलगढ	−0.89	−1.08	1.04	0.879	0.19	−0.97	−0.31	0.10	−0.21	0.29	−0.63	−1.60	−0.146
डूंगरपुर	0.37	0.35	0.25	−0.120	0.13	0.80	0.28	−0.52	0.24	0.52	0.78	3.09	0.281
आसपुर	0.40	−0.32	0.79	0.001	−0.15	0.12	2.61	−0.38	−0.78	0.92	−0.21	3.00	0.272
सागवाडा	1.02	0.56	0.51	−0.371	0.09	0.43	1.89	3.64	0.03	0.69	1.85	10.33	0.939
सीमलवाडा	−0.74	−0.79	1.39	2.202	2.37	1.61	0.28	−0.42	−0.87	1.94	2.47	9.45	0.859
प्रतापगढ	0.93	1.17	0.26	0.947	−0.91	−0.74	−1.13	−0.49	−0.81	−1.41	−0.91	−3.08	−0.280
अरनोद	−0.21	−0.19	0.91	1.481	−0.77	−1.23	−0.57	−0.07	−0.62	−1.86	−1.26	−4.40	−0.400
कोटडा	−2.54	−2.29	−0.08	−0.398	1.73	−0.46	−0.28	0.77	1.37	−0.95	0.69	−2.45	−0.223
झाडोल	1.13	1.33	−0.45	−0.330	0.20	−0.48	−0.31	0.10	2.61	−0.40	−0.51	2.89	0.263
धरियावाद	−1.01	−1.14	0.39	0.455	0.73	0.05	0.16	0.01	−0.19	0.95	0.68	1.08	0.098
सलूम्बर	1.56	1.40	−0.28	−0.322	1.11	1.38	1.01	0.04	2.04	0.31	0.51	8.75	0.796
सराडा	0.67	0.79	−1.54	−1.486	−0.22	0.82	0.72	−0.80	−0.63	0.41	0.46	−0.80	−0.073
खेरवाडा	0.42	0.78	0.06	−0.527	−1.52	−0.92	0.31	−0.23	−0.42	0.74	−0.79	−2.09	−0.190
गिर्वा आंशिक	0.32	0.73	−2.38	−1.675	−1.68	−0.49	−1.01	−1.66	0.04	−1.28	−0.98	−10.08	−0.916

इस गणना के आधार पर समस्त तहसीलों के संयुक्त सूची मान को तीन श्रेणियों में विभाजित किया गया –(मानचित्र 2)

	संयुक्त सूची मान	महिला विकास का स्तर	तहसीलों की संख्या
1.	−0.5 से 0.00	अति निम्न	11
2.	0.00 से 0.500	निम्न	5
3.	0.500 से 1.00	औसत	3

1. महिला विकास का अति निम्न स्तर

इस श्रेणी में सर्वाधिक 11 तहसीलें सम्मिलित हैं। इनका संयुक्त सूची मान −0.5 से 0 के मध्य है। ये तहसीलें गिर्वा, गढी, अरनोद, घाटोल, बागीदौरा, प्रतापगढ, बॉसवाडा, कोटडा, खैरवाडा, कुषलगढ एवं सराडा हैं। निम्न विकास स्तर के पीछे जनजाति जनसंख्या की बहुलता तथा महिला साक्षरता की कमी है। कोटडा एवं गिर्वा जैसी तहसीलों में भौतिक व्यवधानों के कारण भी शिक्षा सुविधाएँ कम हैं जिसके परिणामस्वरूप साक्षरता का स्तर निम्न पाया जाता है। अतः विकास का स्तर भी निम्न है।

2. महिला विकास का निम्न स्तर

इस श्रेणी में पॉच तहसीलें सम्मिलित हैं– आबूरोड, धरियावाद, झाडोल, आसपुर एवं डूंगरपुर। इनका संयुक्त सूची मान 0.00 से 0.5 के मध्य है। इन तहसीलों में भी भौतिक व्यवधानों के कारण महिला विकास का स्तर निम्न है। शिक्षा सुविधाओं की सीमितता एवं संकीर्ण मानसिकता के कारण उन्हें विद्यालय में अध्ययन हेतु नहीं भेजा जाता। अतः साक्षरता का स्तर निम्न ही है। शिक्षा सुविधाएँ मुहैया करवाने पर ये औसत स्तर तक पहुँच सकते हैं।

3. महिला विकास का स्तर

इस श्रेणी में तीन तहसीलें सम्मिलित हैं– सलूम्बर, सीमलवाडा एवं सागवाडा। इन तहसीलों का संयुक्त विकास सूची मान 0.5 से 1.00 के मध्य है। यद्यपि महिला विकास का स्तर संतोषजनक नहीं कहा जा सकता तथापि अन्य तहसीलों की तुलना में सर्वोत्तम है। ये तहसीलें कुल साक्षर जनसंख्या एवं कुल महिला जनसंख्या में सर्वाधिक साक्षरता दर प्रदर्शित करते हैं। इसके अतिरिक्त कुल कार्यकारी जनसंख्या में सर्वाधिक महिला कार्यकारी जनसंख्या का प्रतिशत भी प्रदर्शित करते हैं।

अधिक बेहतर शिक्षा सुविधा देकर महिलाओं का विकास स्तर उत्तम किया जा सकता है।

निष्कर्ष

समस्त तहसीलों के अध्ययन के आधार पर निम्नलिखित निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं–

1. लिंगानुपात की दृष्टि से महिला राजस्थान की तुलना में जनजाति उपयोजना क्षेत्र में बेहतर स्थिति में हैं ।
2. जनजाति उपयोजना क्षेत्र में कन्या भ्रूण हत्या जैसी कुरीतियॉ नहीं पाई जाती जिसके कारण महिलाएँ बेहतर स्थिति में हैं किन्तु कृषिकार्य एवं अन्य कार्यो में लगे होने के कारण साक्षरता दर कम पाई जाती है।
3. कम उम्र में विवाह भी महिलाओं के निम्न विकास का कारण है।
4. भौगोलिक व्यवधानों का प्रभाव शिक्षा सुविधाओं पर पडा है जो साक्षरता गुणवत्ता में भी बाधक है।
5. परिवहन सुविधाओं की अभाव भी निम्न विकास स्तर का कारण है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि जनजाति उपयोजना क्षेत्र में महिलाओं का जीवन स्तर विचारणीय है। मात्र संख्यात्मक वृद्धि ही पर्याप्त नहीं है अपितु गुणवत्ता में भी सुधार होना चाहिए। जब तक शिक्षा का स्तर नहीं सुधारा जाएगा तब तक जीवन स्तर में सुधार संभव नहीं है। यद्यपि सरकार द्वारा हर संभव प्रयास किए जा रहे हैं किन्तु राजस्थान का दक्षिणतम भाग होने तथा भौतिक अवरोधों के कारण परिवहन एवं अन्य अन्तर्संरचनात्मक सुविधाएँ कम पाई जाती हैं। इस हेतु महिला शिक्षा के प्रति जागरूकता की महती आवश्यकता है। महिला विकास ही समाज के विकास की नींव है। तभी कहा भी गया है– यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।

संदर्भ

1. Bhalla, L.R. (2004). "Geography of Rajasthan" Kuldeep Publication: Jaipur.
2. Census Report. (2001). Deptt. Of Census. Jaipur.
3. Gupta, G.P. Dr. (Edt.). "Studies in Tribal Development". Arihant Publishing House: Jaipur.
4. Krishan, Gopan., Madhav, Shyam. (1973). "Spatial Perspective on Progress of Female Literacy in India 1907-1971: Pacific View Points.
5. Mishra, R.N. "Tribal Life and Habitat (Economy & Society)". Ritu Pub: Jaipur.
6. Sharma, Dr. H.S., Sharma, Dr. M.L. (2005). "Geography of Rajasthan". Panchsheel Publication: Jaipur.

Fig. 1

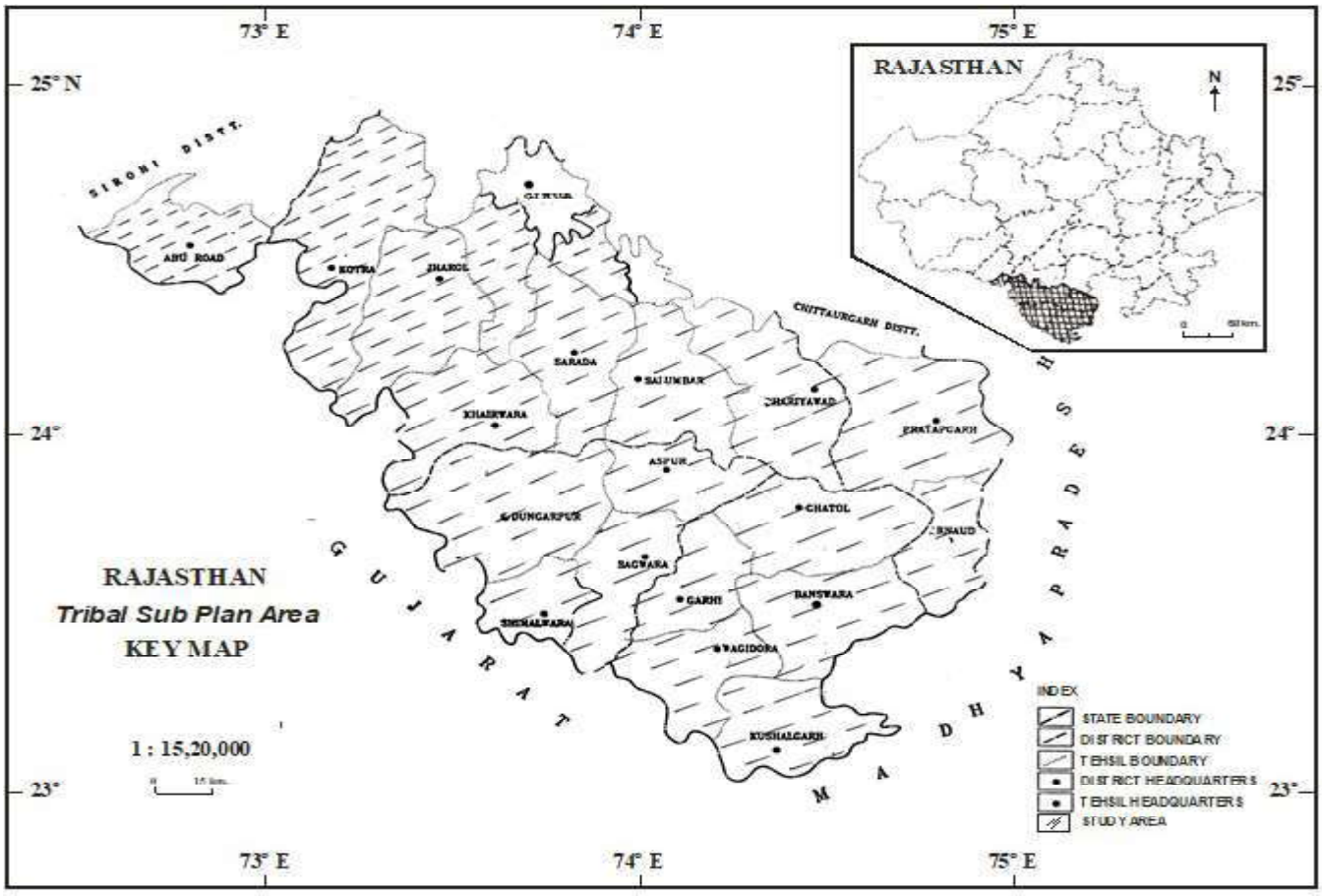

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

Fig. 2

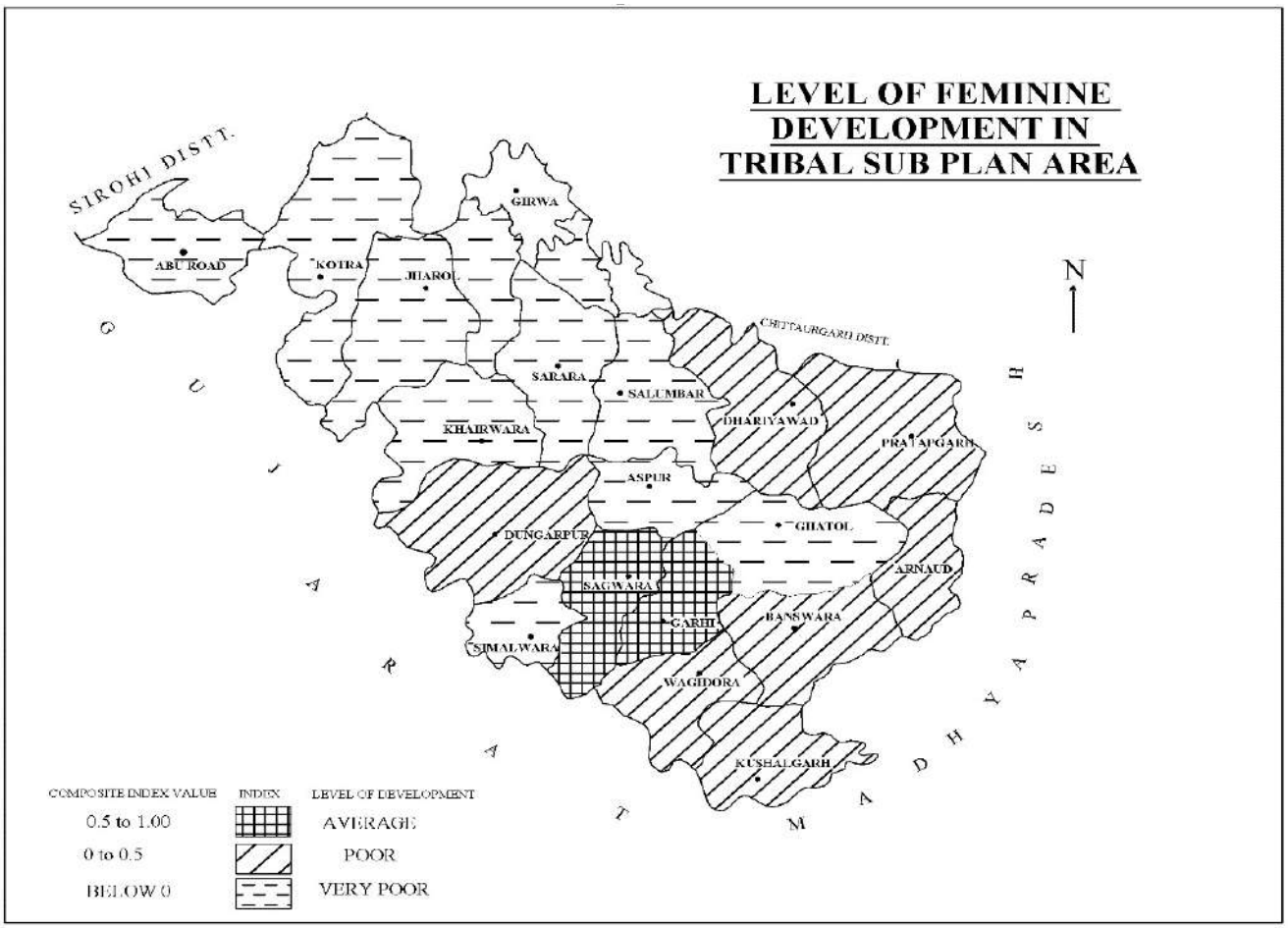

12

नैतिक अन्तर्द्वन्द्व एवं विकास

प्रो० नन्दलाल मिश्र
आचार्य एवं अधिष्ठाता, कला संकाय
म० गां० चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय चित्रकूट

मेधा मिश्रा
शोधार्थी
म० गां० चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट, सतना (म.प्र.)

सारांश

विकास एक गतिशील सम्प्रत्यय है। व्यक्ति, समाज और देश सभी अपनी उन्नति का मार्ग खोजते हैं तथा तनुदसार अपने विकास की योजना बनाते हैं। विकास या तो स्वतः जनित जिसे नवाचार या नवोन्मेश भी कहा जाता है, हो सकता है या किसी प्रादर्श का अनुसरण भी हो सकता है। नई आर्थिक नीति ने विश्व के सामने एक सुनहरी तस्वीर पेश करने की कोशिश की है, जिसने हमें नैतिक अन्तर्द्वन्द्व में उलझा दिया है।

भूमंडलीकरण के दौर में भारत एक ऐसा देश रहा है जिसका विकास धर्म एवं सहिष्णुता के बल पर होता आया है, अचानक उस झुण्ड में जा फँसा है जहाँ धर्म एवं आध्यात्मिक मूल्यों का कोई विशेष मतलब नहीं है। ऐसे परिवेश में हम न तो अपने मूल्य छोड़ सकते हैं न वहाँ से पलायन कर सकते हैं। ऐसी स्थिति हमें नैतिक अन्तर्द्वन्द्व के तरफ ले जाती है। फिर भी हम अपने सनातनी पराम्परा पर विश्वास करते हुए विश्व में अपना स्थान बनाने के लिए संघर्ष कर रहे हैं।

मुख्य बिन्दु

नैतिक, अन्तर्द्वन्द्व, उपनिवेश, भूमण्डलीकरण, बाजारवाद, संस्कृति।

प्रस्तावना

देश में चारों तरफ यही चर्चा होती चली आ रही है कि–

- युग बदल गया।
- लोग बदल गये, अब वे लोग नहीं रहे, भाषा पर नियन्त्रण नहीं है।
- किसी की बात अब विश्वसनीय नहीं रही।
- शरीर में घाव हो जाने पर घरेलू दवाइयाँ काम करती थीं, अब तो उनके प्रयोग से टिटनेस होता जा रहा है।
- शील–संकोच भी समाप्त हो गया, छोटे–बड़े का लिहाज नहीं रहा।
- अब वे आदर्श, मूल्य नहीं रहे यहाँ तक कि वह समय भी नहीं रहा।
- मौसम भी बदल गया, बिना समय के बारिस अब होती है।

ये चर्चायें आम होती चली जा रही हैं। गाँव से लेकर महानगरों तक, छोटे से लेकर बड़े लोगों तक, अशिक्षित से लेकर शिक्षित तक सभी के मुँह से यह बात सुनने को मिलती है। ये बातें निराधार भी नहीं हैं। मुझे तो लगता है कि ये चर्चायें शत–प्रतिशत सही हैं। मेरे मस्तिष्क में ये प्रश्न उपस्थित करती हैं कि परिवर्तन तो एक सामान्य प्रक्रिया है, इसे होना चाहिये अन्यथा इससे सड़ान्ध पैदा हो जायगी ठीक वैसे ही जैसे किसी तालाब के जल को बदला न जाय और रोज–रोज उसमें गन्दगी डाली जाय तो उसमें स्नान करने से त्वचा सम्बन्धी बीमारियाँ हो सकती हैं लेकिन जब इसमें परिवर्तन का वेग तेज हो जाय, कम समय में आश्चर्यजनक परिवर्तन हो जाय तो कभी–कभी यह उस तालाब के सड़े जल से भी अधिक भयंकर परिणाम देने वाला हो सकता है। आज भारत में परिवर्तन की गति पूर्व के दशकों की अपेक्षा काफी तेज हो गयी है जो विशेषकर सामाजिक, शैक्षिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में परिलक्षित होती है। सामाजिक क्षेत्र में अनियन्त्रित सामाजिक परिवर्तन, शैक्षिक क्षेत्र में मूल्यहीन शिक्षा और

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

सांस्कृतिक क्षेत्र में सांस्कृतिक अपकर्ष अपना प्रभाव जमाते जा रहे हैं। सम्पूर्ण रूप में यदि विकास का मूल्यांकन किया जाय तो संक्षेप में यही कहा जा सकता है कि हम आर्थिक और औद्योगिक जगत में धीर–धीरे आगे बढ़ रहे हैं किन्तु सामाजिक, शैक्षिक और सांस्कृतिक तत्वों की कुर्बानी की कीमत पर।

यह मूल्यांकन आधारहीन नहीं है। यह कड़वा सच है। प्रसिद्ध पत्रकार और स्वतन्त्र टिप्पणीकार रामसुजान अमर एक टिप्पणी लिखते हैं–

''धरती और आकाश को नापता भू–मण्डलीकरण का रथ अवाध गति से आगे बढ़ रहा है। कोई चीज इसकी पहुँच से बाहर नहीं है। इसकी सीमा में केवल आर्थिक पहलू ही नहीं आ गये हैं, बल्कि भाषा, साहित्य, कला, संस्कृति आदि को भी इसने अपनी चपेट में ले लिया है। औपनिवेशिक युग की तरह अब पश्चिमी साम्राज्यवाद हमारी सोच को विकृत एवं अस्मिता को विखण्डित करके अपना शासन चलाना चाहता है। भू–मण्डलीकरण के नाम पर जिस विश्वग्राम की गुलाबी तस्वीर पेश की जा रही है, वास्तव में वह पश्चिम की शर्तों पर शेष दुनिया के व्यक्तित्वहरण की धूर्ततापूर्ण साजिश है। इसके तहत एक व्यापक एवं सुचिंतित रणनीत के जरिये हमारी भाषा, साहित्य, कला एवं संस्कृति को भी पश्चिमी बाजार की जरूरतों के अनुरूप ढालने की कोशिश हो रही है, ताकि अपने आइने से वंचित होकर हम अपनी राष्ट्रीय पहचान को भूल जायें एवं पश्चिम के भौतिक–सांस्कृतिक बाजार से आ रहे कचरे को ही अपनी समृद्धि एवं विकास का प्रमाण मान लें'' आगे वह कहते हैं–

भू–मण्डलीकरण सिर्फ एक आर्थिक प्रक्रिया नहीं है, बल्कि राष्ट्रीय अस्मिता एवं संस्कृत को गहराई से प्रभावित करने वाला एक भूचाल भी है। पर डर इस बात का है कि पश्चिम अपने मीडिया विस्फोट के सहारे भारत में एक ऐसा वर्ग तैयार करने में सफल हो चुका है, जो पूरी तरह से पश्चिमोन्मुखी है और नकल की जीवन–शैली उसके लिये गौरव की बात है। अधिक चिन्ता की बात यह है कि इस उपभोक्तावादी पश्चिमोन्मुखी वर्ग का तेजी से विस्तार हो रहा है। इसलिये अगर हम सचमुच तेजी से फैल रहे इस सांस्कृतिक भू–मण्डलीकरण का मुकाबला करना चाहते हैं तो हमें बाजार के उन्माद से बचना होगा।''

उपरोक्त टिप्पणी मात्र आंकलन भर नहीं है, यह यथार्थ है आज के परिवर्तन का। चिंतनीय पक्ष यह है कि इसकी विवशता क्या है? इसके पीछे दर्शन का कौन स्त्रोत है? हम पश्चिमीकरण को रोक तो नहीं सकते किन्तु इस 'करण' नामक प्रत्यय की क्या समानान्तर पृष्ठभूमि भी नहीं बना सकते? हम विश्व को बर्बाद करने की प्रौद्योगिकी हासिल कर सकते हैं, हम किसी भी विनाशकारी धारा को मोड़ने में यदि सक्षम हो सकते हैं तो हम क्यों नहीं भारतीय भवन की ऐसी नींव बनाने में सफलता हासिल कर सकते हैं जो किसी भी झंझावात को सहने में सक्षम सिद्ध हो सके। दरअसल आज भारत में एक नया द्वन्द्व काम कर रहा है वह है 'नैतिक द्वन्द्ववाद'। समूची भारतीय जनता इस द्वन्द्व का षिकार है। तब तक हम इससे उबरेंगे नहीं। किसी लक्ष्य की तरफ नहीं बढ़ सकते। क्या है इसकी पृष्ठभूमि इसको समझना आवश्यक है।

वैकासिक प्रवृत्तियाँः

आधुनिक समय में भारत में तीन मुख्य प्रवृत्तियाँ काम कर रहीं हैं– हिन्दुस्तानी सांस्कृतिक प्रवृत्ति, मार्क्सवादी समाजवादी प्रवृत्ति और पूँजीवादी प्रवृत्ति। ये तीन प्रवृत्तियाँ ही नहीं बल्कि ये प्रबल स्तम्भ भी हैं। फिर भी अत्यन्त संक्षेप में इन प्रवृत्तियों को एक बार फिर याद करने में कोई बुराई नहीं है।

प्रथम प्रवृत्ति हिन्दुस्तान की स्वयं की सांस्कृतिक प्रवृत्ति है, जो उदारवादी है। विश्व–बन्धुता का भाव भरने वाली, लौकिक और पारलौकिक बन्धनों से मुक्ति दिलाने वाली, कर्म की प्रधानता बताने वाली तथा परोपकार करने वाली यह प्रवृत्ति अद्वितीय तथा विशिष्ट है। इसी परिवेश में भारत पलता और परिपक्व होता आया है।

दूसरी प्रवृत्ति पूँजीवादी है, जो शक्ति में विश्वास रखती है, शक्तिमान को ही इस दुनिया में जीने का अधिकार देती है। पूँजीवादी–व्यवस्था में मनुष्य–मनुष्य का शोषण करता है। यह चिरस्थायी नहीं होती है। यह अपने पतन को स्वयं ही आमन्त्रित करती है। श्रमिक अपनी मेहनत से जितना मूल्य उत्पन्न करता है उसका उचित भाग उस श्रमिक को प्राप्त नहीं होता बल्कि उसका एक छोटा अंश पूँजीपति देकर स्वयं ले लेता है। इस प्रकार श्रमिक के श्रम की उपयुक्त कीमत नहीं मिलती, उसका शोषण किया जाता है। यह प्रवृत्ति तेजी के साथ उभरी है और विशेषकर स्वतन्त्र भारत में। समग्र आर्थिक–तन्त्र में इसकी भूमिका अत्यधिक प्रभावी है तथा भारत में यह किसी भी संरचना की अपेक्षा प्रथम सोपान पर खड़ा है। सामान्य आदमी के लिये यह सामान्य, विशिष्ट के लिये विशिष्ट तथा चौंकाने वाला नहीं लगता, किन्तु थोड़ी–सी नजर घुमाने पर इसके प्रभाव को समझा जा सकता है और भारत के उच्च आर्थिक वर्ग को अपनी तरफ पूर्ण रूप से खींच चुका है।

तीसरी प्रवृत्ति साम्यवादी प्रवृत्ति है जो आँधी की तरह विश्व को झकझोरना शुरू कर दी थी। कुछ राष्ट्रों को इसने पूँजीवाद के विरोध के बल पर चोटी पर पहुँचाने का कार्य किया तो इन्हीं राष्ट्रों को कुछ ही समय में धूल–धूसरित भी कर दिया, इसका आधार पूँजीवाद का विरोध है वह भी क्रान्ति के बल पर। वर्गहीन समाज में विश्वास करने वाली, भौतिकवाद का समर्थन करने वाली, सर्वहारा के लिये रामबाण जैसा विश्वास दिलाने वाली, सबको एक जैसे वितरण की व्यवस्था बनाने वाली, यह प्रवृत्ति भारत में अपना पाँव जमा चुकी है।

उपरोक्त तीनों प्रवृत्तियों के सार–संक्षेप को समझ लेने के बाद इसके क्रियाकलाप के तौर–तरीकों को भारतीय परिप्रेक्ष्य में समझना समीचीन है। इन तीनों में दूसरी तथा तीसरी प्रवृत्ति मानव के लिये सिर्फ अर्थ अर्थात् धन की महत्ता, उपलब्धि, व्यापार और बँटवारे की व्यवस्था करती है। इनके लिये मानव के जीवन का लक्ष्य सिर्फ उपभोग और अर्थ संग्रह है लेकिन पहली प्रवृत्ति मानव को उन चार लक्ष्यों की प्राप्ति की तरफ अग्रसर करती है जो उसे लौकिक तथा पारलौकिक शान्ति देते हैं– धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष। सिर्फ अर्थ ही मानव का लक्ष्य है, सम्भवतः यह बिल्कुल अधूरी प्रवृत्ति है। इसके पीछे मानव कभी नहीं भाग सकता, इसके पीछे भागने वाला भोगवादी होता है। भोगवादी ही दो बातों पर विशेष बल देता है– अर्थ और शक्ति। धन भोगविलास के लिये और शक्ति नियन्त्रण के लिये। हमारे देश में भी ऐसे लोग हो गये हैं जो पूँजीवाद और साम्यवादी व्यवस्था का गुणगान करते हैं और अपनी व्यवस्था का परिहार करते हैं। परेशानी का कारण सिर्फ यही नहीं है कि वे हिन्दुस्तानी सांस्कृतिक प्रवृत्ति का परिहार और पूँजीवादी और साम्यवादी व्यवस्था को अंगीकृत करते हैं। परेशानी उस समय अधिक बढ़ती है जब उपभोग, उत्पादकता, शोषण और शक्ति के बल पर उगाहे हुये धन का उपयोग हम भारतीय पुरुषार्थ को प्राप्त करने के लिये करते हैं। परेशानी उस समय अधिक होती है जब भारतीय संस्कृति में पल–बढ़कर हम पुरुषार्थ को प्राप्त करना चाहते हैं किन्तु किसी भी प्रकार से आते हुये अर्थ पर विचार नहीं करते हैं। उस समय हम अधिक चिन्ता में पड़ जाते हैं जब हम देखते हैं कि एक रिक्शाचालक (कर्मवादी) रात्रि में सड़क किनारे सुनसान वीरान जगह पर निशंक भाव से सिर के नीचे ईंट की तकिया बनाकर गहरी निद्रा ले रहा होता है और हमें वातानुकूल महल में निद्रा की गोली काम नहीं करती। कैसी है यह पहेली? छिने हुये, शोषित किये गये, बेइमानी से कमाये गये धन के जाने की आशंका हमेशा बनी रहती है लेकिन रिक्शाचालक का धन कोई नहीं छीन सकता क्योंकि उसके पास जो पूँजी है उसे कोई चुरा नहीं सकता उसका धन उसका श्रम है। ऐसे लोग "धनात् धर्मः'' के सिद्धान्त का पालन तो करते हैं क्योंकि मैंने कई तीर्थस्थलों पर इनके दान की गतिविधियों को देखा है। कहीं ये लंगर चलाते हैं, तो कहीं कम्बल बाँटते हैं, कहीं अस्पताल चलाते हैं किन्तु उनका वह धन जो उसमें लगा होता है उसका स्त्रोत बहुत निराला है। ये दान क्यों करते हैं? क्योंकि वे उसी में फँसे होते हैं जिस द्वन्द्व की चर्चा में यहाँ कर रहा हूँ। यह वह वर्ग है जो परोक्ष रूप से और प्रत्यक्ष रूप से इस संस्कृति को बढ़ावा दे रहा है।

दूसरा वर्ग, जो किसी का शोषण नहीं करता है किन्तु अप्रत्यक्षतः शोषित है उसके सामने जटिल समस्यायें हैं। वह प्रथम वर्ग के दहलीज के ठीक नीचे भी है और तीसरे वर्ग के दहलीज के ठीक ऊपर भी है। एक क्षण अपनी चाहत को प्रथम वर्ग के रूप में देखता है तो दूसरे क्षण वह अपने को गिरा हुआ समझता है। यह समाज मध्यमवर्गीय मुख्य समाज है जिसके इधर या उधर हो जाने से कोई भी सभ्यता, कोई भी संस्कृति, कोई भी मूल्य और परम्परा हिल उठती है। भारतवर्ष में यह स्थिति उभड़ने लगी है। सन्तोष है इस बात का कि कुछ लोगों ने अपनी आशायें छोड़ी नहीं है और ऐसी स्थिति में भी 'सामान्य जन चिन्तन' को ही वे अपनी आशा मान रहे हैं तथा रास्ता खोजने में सन्नद्ध हैं। यह वर्ग भी अपनी करवटें ले रहा है। इसके ऊपर भी उपभोक्तावाद मँडरा रहा है, इनके आदर्श भी अब बदल रहे हैं। कृषि कार्य से इनको अब ऊबन होने लगी है, ये अब निष्कर्ष की तरफ बढ़ रहे हैं कि इससे कोई लाभ नहीं है। इनका खर्च इससे नहीं चल पा रहा है, इनके श्रम की उचित व्यवस्था नहीं हो रही है। भण्डारण सिर्फ दिखावे के लिये है। इनका आलू सड़ता है, टमाटर सड़ जाता है, इनकी प्याज सड़ जाती है, उसके भण्डारण की उचित व्यवस्था नहीं है, इनके श्रम की कीमत नहीं मिलती। इन्हें ज्ञात होने लगा है कि इनका प्याज और टमाटर सड़ जायेगा और सरकारी प्याज का मूल्य आसमान छूयेगा। इन्हीं के फसल (जो इनके जीवन का आधार है) पर ओले गिरते हैं, इन्हीं की फसल सूखा पड़ने पर सूख जाती है, इन्हीं की फसलों को बाढ़ बहा ले जाती है। मगर पूँजीपति ऐसी स्थिति में भी लाभ कमाते हैं। पूंजीपतियों का सीधा प्रहार अव इनकी अस्मिता को झकझोरने लगा है, ये अब टूटने लगे हैं, इनके परिवार का विखण्डन शुरू हो गया है, इनके आपसी सम्बन्ध बिखरने लगे हैं, इनके आपसी सहयोग, समाप्त हो रहे हैं। यह अचानक नहीं हो रहा है। ये आधुनिक मूल्यों से टकरा रहे हैं, इनके टकराहट से इनका विकास रुक रहा है। न तो ये उस पार जा पा रहे हैं तथा न इस पार ही रह पा रहे हैं, ये नैतिकता के नाम पर मिट रहे हैं। यदि इस ऊहापोह से ये निकल जायें तो बाजार की सभ्यता में पहुँच सकते हैं। यदि बाजारू व्यवस्था से इनका मोह भंग हो जाय तो ये मानवता की स्थापना कर सकते हैं। लेकिन ऐसा कब होगा? कुछ कहा नहीं जा सकता।

आइये, तीसरे वर्ग की बात करें जिनके पास कुछ नहीं है। उनके पास हाथ पाँव ही उनकी पूँजी है। श्रम इनके ललाट पर लिख दिया गया है। इनके ही श्रम से लोगों का पेट भरता है मगर इनका पेट भूखे रहता है। ये सामान्य ज्वर से भी मर जाते हैं। हल्के सिर दर्द से भी इनकी मौत हो जाती है। अस्पतालों में इनका नम्बर नहीं आता है, इनकी इज्जत लूट ली जाती है। दोषी भी यही सिद्ध हो जाते हैं। कर्ज लेने तथा चुकाने में पीढ़ियाँ खप जाती हैं, मगर कर्जदार ये बने ही रहते हैं। यह है तीसरे वर्ग का स्वरूप, आधुनिक भोग विलास इन्हें भी महसूस होता है। ये भागते हैं उन्हें प्राप्त करने के लिये और धर्म परिवर्तन का सहारा लेते हैं मगर कुछ दिन के बाद ये चर्च, गुरुद्वारों तथा मस्जिदों से निराश लौट आते हैं। इनके अन्दर सत्यनारायण भगवान की कथा सुनने की कितनी व्याकुलता है, शायद आप महसूस नहीं करते। ये पण्डित महाराज को अपने श्रम की कमाई से कुछ पैसा सत्यनारायण भगवान की कथा के लिये दे देते हैं और पण्डित सभी व्यवस्था करके कथा सुनाते हैं। ये भी अपने पुरुषार्थ को पाना चाहते हैं, मगर आज की दुनिया इन्हें भी नहीं छोड़ती। ये भी पोशाकों में, मनोरंजन में, मदिरापान में, नैतिक विहीन आचरण में किसी से पीछे नहीं रहना चाहते। इनका मनोविज्ञान भी इन्हें परेशान करता है।

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

नैतिक अन्तर्द्वन्द्व

जातीय व्यवस्था को इस सन्दर्भ में मैं, गौड़ मानता हूँ क्योंकि अब जाति, विकास के सन्दर्भ में स्वतन्त्र है। अव वह भेद तथा अस्पृश्यता नहीं रही जिसके आधार पर किसी की स्वतन्त्रता में बाधा उत्पन्न होती हो। अव जाति सिर्फ एक ही कार्य कर रही है, वह चुनाव में अपनी जाति के प्रतिनिधि को वोट देना। जाति अपना सिर फोड़वाती है, जाति हिंसा करती है अपने प्रतिनिधि को चुनने के लिये। लेकिन वे प्रतिनिधि अपनी जाति का काम नहीं करते। वे अपनी जाति के सबसे बड़े शत्रु सावित होते हैं। ये सभी जानते हैं।

हम अपने को एक विकासशील देश का नागरिक मानते हैं क्योंकि आप विकसित राष्ट्रों के नाम भी जानते हैं तथा अविकसित राष्ट्रों के भी। हम अपने को मानसिक और शारीरिक दोनों तरह से विकासशील राष्ट्र का नागरिक मानते हैं, लेकिन यह कभी नहीं सोचते कि यह कितना सही है। क्या वास्तव में हम इस स्थिति में हैं? इस निष्कर्ष पर पहुँचने के पूर्व मैं स्पष्ट करना चाहूँगा कि क्या अर्थ ही विमा है जिसके आधार पर विष्व की स्थिति परिभाषित की गयी है? यदि अर्थ ही वह विमा है तो भारतीय पुरुषार्थ की परिभाषा बदल देनी होगी और भारतीयों को नये पुरुषार्थ (अर्थ) की जानकारी अविलम्ब दे देनी होगी ताकि वे नैतिक द्वन्द्व से उबरकर इस लक्ष्य को प्राप्त कर सकें। मेरा मानना है जिस दिन यह परिभाषा बदल जायेगी भारत को विकसित राष्ट्र में सम्मिलित होने में ज्यादा समय नहीं लगेगा।

नैतिक द्वन्द्ववाद, द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद के सम्प्रत्यय से मेल नहीं खाता क्योंकि इसका आधार स्वयं भारतीय दर्शन की द्वन्द्वात्मकता से ही उपजता है, जो द्वैत–अद्वैत, देववाद–अदेववाद, ईश्वरवाद–निरीश्वरवाद के बीच उलझा है।

पं. जवाहर लाल नेहरू ने एक जगह लिखा है कि, ''एक ओर तो विचारों और सिद्धान्तों में हमने अधिक से अधिक उदार और सहिष्णु होने का दावा किया दूसरी ओर, हमारे सामाजिक आचार अत्यन्त संकीर्ण होते गये। यह फटा हुआ व्यक्तित्व, सिद्धान्त और आचरण का यह विरोध, आज तक हमारे साथ है और आज भी हम उसके विरुद्ध संघर्ष कर रहे हैं। कितनी विचित्र बात है कि अपनी दृष्टि की संकीर्णता, आदतों और रिवाजों की कमजोरियों को हम यह कहकर नजर–अंदाज कर देना चाहते हैं कि हमारे पूर्वज तुलनात्मक रूप से बड़े लोग थे और उनके बड़े–बड़े विचार हमें विरासत में मिले हैं। हमारे आचरण, हमारे विचार और उदगार इतने ऊँचे हैं कि उन्हें देखकर आश्चर्य होता है। बातें तो हम शान्ति और अहिंसा की करते हैं, मगर, काम हमारे कुछ और होते हैं। सिद्धान्त तो हम सहिष्णुता का बघारते हैं, लेकिन भाव हमारा यह है कि सब लोग वैसे ही सोचें जैसे हम सोचते हैं और जब कोई हमसे भिन्न सोचता है तब हम उसे बर्दाश्त नहीं कर सकते। घोषणा तो हमारी यह है कि स्थितिप्रज्ञ बनना अर्थात् कर्मों के प्रति अनासक्त रहना हमारा आदर्श है लेकिन काम हमारे बहुत नीचे के धरातल पर चलते हैं और बढ़ती हुई अनुशासनहीनता हमें वैयक्तिक और सामाजिक दोनों ही क्षेत्रों में नीचे ले जाती है। पाश्चात्य विचारों में भारत का जो विश्वास जगा था, अब तो वह भी हिल रहा है। नतीजा यह है कि हमारे पास न तो पुराने आदर्श हैं न नवीन और हम विना यह जाने हुये बहते जा रहे हैं कि हम किधर को या कहाँ जा रहे हैं। नयी पीढ़ी के पास न तो कोई मापदण्ड है, न कोई ऐसी चीज, जिससे चिन्तन या कर्म को नियन्त्रित कर सके।''

समाधान के मार्ग

हमारी संस्कृति समाधान भी प्रस्तुत करती है, जैसे– गीता में कर्म–ज्ञान और भक्ति के माध्यम से लक्ष्य तक पहुँचने की बात बतायी गयी है और ज्ञान का स्वरूप आन्तरिक है तथा कर्म वाह्य उपागम है. इन दोनों का स्वरूप अलग है किन्तु इन दोनों में सामंजस्य स्थापित कर व्यक्ति अपने लक्ष्य तक पहुँचता है। भारतीय दर्शन सामंजस्य के महत्व को प्रमुख मानता है। यह सामंजस्य शान्तिमय पृष्ठभूमि की माँग करता है। आज स्थिति बिल्कुल भिन्न हो गयी है। पूँजीवाद और समाजवाद ने हिन्दुस्तानी सांस्कृतिक प्रवृत्ति पर सीधा प्रहार कर दिया है जहाँ सामंजस्य के प्रयास की उपलब्धता सीमित हो गयी है, लोग भ्रमित हो गये हैं, भ्रष्टाचार, हिंसा, शोषण ही सुख का प्रतीक बन गया है। आध्यात्मवाद का मार्ग टेढ़ा लगने लगा है। इसे विदेशी दकियानूसी का नाम तो देते ही हैं, हम भी वही राग अलापने लगे हैं। हमें शंकराचार्य की आवश्यकता नहीं रही, मण्डन मिश्र बेकार लगने लगे हैं। तुलसीदास, वाल्मीकि, व्यास अप्रासंगिक हो गये हैं, कुमारिल भट्ट, जोमेनी पुस्तक की विषय–वस्तु बन गये हैं, लेकिन शोषित धन का कुछ अंश मन्दिरों, मस्जिदों, गरीबों को देने की अभिलाषा हमें त्रिशंकु स्थिति से निकालने में सक्षम नहीं हो रही है। जब तक यह उलझन बनी रहेगी भारत को आधुनिक विकसित राष्ट्रों में स्थान मिलना मुश्किल है।

आप सभी मिलकर भारतीय लोगों के आत्मबल को बढ़ाने में सहयोग कीजिये। बदल दीजिये विकास की परिभाषा को, जहाँ मानवता का गला घोंटा जा रहा हो, जहाँ लोग मृगतृष्णा में भाग रहे हों, जहाँ शान्ति नसीब नहीं हो रही हो उसको विकसित कहकर अपने को अपमानित मत कीजिये। आज भारतीयों के मन में से इस द्वन्द्व को निकालने की आवश्यकता है। बाजार का तर्क, नव उपनिवेशवाद और उपभोक्तावाद, विकास का सूचकांक निर्धारित नहीं कर सकते, वह विनाश का सूचकांक अवश्य दे सकते हैं।

सन्दर्भ

1. मिश्रा, एन.एल. (2000). विकास की चुनौतियाँ एवं अन्तर्द्वन्द्व. मधुकर प्रकाशनः आगरा।
2. मिश्रा, एन.एल. (2007). सामाजिक अभियांत्रिकी. शर्मा प्रकाशनः आगरा।
3. दुबे, एस.सी. (1998). विकास का समाजशास्त्र. वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।

13

भारत मे नगरीकरण की गत्यात्मक्ता : एक भोगौलिक विवेचन

डॉ० जे० पी० शर्मा
विभागाध्यक्ष तथा सह आचार्य, भूगोल सामाजिक विज्ञान विभाग
कोटा विश्वविद्यालय, कोटा।

सारांश

नगरीकरण एक सामाजिक–आर्थिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा किसी क्षेत्र की जनसंख्या का एक बड़ा भाग कस्बो ओर नगरो मे संकेन्द्रित हो जाता है। भारत में सिन्धु घाटी सम्यता के अन्तर्गत विकसित मोहनजोदड़ो ओर हड़प्पा ऐसे बड़े ओर नियोजित नगर है।

'नगर' के मुख्यतः दो लक्षण होते है – पहला, एक सीमित स्थान पर जनसंख्या का उच्च घनत्व और दूसरा जनसंख्या का मुख्यतः गैर–कृषक विशेषकर गैर–खेतिहर स्वरुप। शहर की परिभाषा जनसंख्या और अधिकांश निवासियों के गैर–कषशि व्यवसाय के आधार पर देना सम्भव हो गया है। नगर आर्थिक क्रियाकलापों के केन्द्र होते हैं, जो विकास को गति प्रदान करते हैं। नगर पुरातन काल से आधुनिक काल तक मानवीय सभ्यता एवं संस्कृति के प्रमुख स्थल रहें हैं। नगर किसी भी देश की बड़ी आबादी को सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, औद्योगिक, व्यापारिक एवं पारिस्थितिकी विकास के आधार स्तम्भ माने जाते हैं। अतः नगर किसी देश के विकसित व अविकसित होने का ज्ञान कराते हैं। वास्तव में नगरीय जनसंख्या व उसके अनुपात में वृद्धि होना नगरीकरण कहलाता है।

नगरीकरण का स्तर किसी भी देंश के विकास स्तर का सूचक माना जाता है इसलिए जिस देश में नगरीकरण का प्रतिशत अधिक होता है उसे अधिक विकसित माना जाता रहा है इसलिए नगरीकरण तथा इससे सम्बन्धित अध्ययनों का अपना महत्वपूर्ण स्थान है। प्रत्येक नगर एक–सा नहीं होता वह उत्पति, स्थिति, आकार, कार्यो, आकारिकी आदि की दृष्टि से कुछ न कुछ परस्पर भिन्नता रखता है।

विश्व में चीन के बाद दूसरा बड़ा जनसंकुल क्षेत्र होने के नाते भारत के इस तेजी से बढ़ते नगरीकरण का क्षेत्रीय और विश्व व्यापी असर देखा जा सकता है। भारत की नगरीय जनसंख्या द्वारा विश्व के नगरीय जनसंख्या के एक बड़े भाग का निर्माण किया जाता है।

परिचय

नगरीकरण एक सामाजिक–आर्थिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा किसी क्षेत्र की जनसंख्या का एक बड़ा भाग कस्बों और नगरों में संकेन्द्रित हो जाता है। भारत ऐसे विकासशील देश मे नगरीकरण वर्तमान शताब्दी की सबसे महत्वपूर्ण घटना हैं जिसने राष्ट्रीय जीवन के सभी पहलुओं को प्रभावित किया है। विश्व में चीन के बाद दूसरा बड़ा जनसंकुल क्षेत्र होने के नाते भारत के इस तेजी से बढ़ते नगरीकरण का क्षेत्रीय और विश्व व्यापी असर देखा जा सकता है। भारत की नगरीय जनसंख्या द्वारा विश्व के नगरीय जनसंख्या के एक बड़े भाग का निर्माण किया जाता है। इसका अंदाजा इस तथ्य से लगया जा सकता है कि विश्व का हर बारहवाँ एवं विकासशील देशों का हर सातवां नगरीय क्षेत्रों में रहने वाला व्यक्ति भारतीय है। इसी प्रकार भारत में उतने छोटे कस्बे (20,000–49,999 आबादी के) हैं जितने कि संयुक्त राज्य अमेरिका में, उतने मध्यम आकार (50,000–99,999) के नगर हैं जितने कि पूर्व सोवियत संघ में और उतने महानगर (+500,000) हैं जिनते कि आस्ट्रेलया, फ्रांस एवं ब्राजील में मिलाकर पाये जाते है।

उद्देश्य

इस शोध पत्र के प्रमुख उद्देश्य इस प्रकार है–

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

- नगरीकरण को समझना।
- व्यापक रूप से भारत के नगरीकरण का मूल्यांकन।
- नगरीकरण प्रक्रिया को समझना।

शोध विधि

यह शोध पत्र मूलतः द्वितीयक आंकड़ो पर आधारित है जो कि भारतीय जनगणना से प्राप्त आँकड़े है। जिनका गहनता से मूल्याकन किया गया है तथा विभिन्न तथ्यों को टेबल, ग्रॉफ/मानचित्र की सहायता से प्रदर्शित करने का प्रयास किया गया है। आँकड़ों का दशकीय मूल्याकंन किया गया है साथ ही भारत के विभिन्न नगरों का भ्रमण कर वस्तु स्थिति को जानने का भी प्रयास किया गया है।

भारत मे नगरीकरण की स्थिति

भारत में नगरीकरण का एक प्राचीन इतिहास है जिसके तहत सिन्धु घाटी सभ्यता के समय से लेकर आज तक नगरों के विकास की एक अविच्छिन्न परम्परा चलती आ रही है। यही कारण है कि देश में अनेक ऐसे नगर हैं जो सैकड़ों वर्ष पुराने हैं एक अनुमान के अनुसार देश की कुल जनसंख्या में नगरीय जनसंख्या का प्रतिशत सत्रहवीं सदी के अन्त में उन्नीसवीं सदी के अन्तिम काल की अपेक्षा अधिक था। मध्य युग में सन् 1586 के आस–पास हस्तकारी उद्योगों और तृतीयक क्रियाओं के विकसित होने के कारण 3200 कस्बे एवं 120 नगर अस्तित्व में थे। औपनिवेशिक काल में देशी औद्योगिक ढांचे के क्षत–विक्षत होने के कारण नगरीकरण की इस प्रक्रिया को गंभीर आघात लगा। देश का वर्तमान नगरीकरण पाश्चात्य पद्वति पर कारखाना उद्योगों के विकास से प्रभावित नगरीकरण है जिसकी शुरूआत बीसवीं सदी से मानी जा सकती है।

भारत के आधुनिक नगरीकरण के अध्ययन हेतु भारतीय जनगणना विभाग द्वारा सन् 1881 से 10 वर्ष के नियमित अंतराल पर उपलब्ध कराये गये आँकड़ों का उपयोग किया जा सकता है। तालिका–1 में इन्हीं आँकड़ों द्वारा बीसवीं शताब्दी में नगरीय जनसंख्या, नगरीय जनसंख्या में दशकीय वृद्वि, प्रतिशत नगरीकरण और नगरों की संख्या की विकासात्सक प्रवृत्ति को प्रदर्शित किया गया है। सन् 1881 में प्रथम जनगणना के समय भारत की नगरीय जनसंख्या 9.3 प्रतिशत थी जो 1931 की जनगणना तक बढ़कर केवल 12.2 प्रतिशत ही पहुँच पायी थी। 1931–41 दशक के बीच नगरीकरण की गति में कुछ तीव्रता आई, जिसके कारण नगरीय जनसंख्या में लगभग 32 प्रतिशत की वृद्वि देखी गयी। परिणामस्वरूप नगरीकरण–अनुपात बढ़कर 14.1 पहुँच गया। 1941–51 दशक के दौरान नगरीय जनसंख्या में उल्लेखनीय वृद्वि 41.42% देखी गयी जिसमें देश के विभाजन के उपरान्त शरणार्थियों का नगरों मे बसाव एक प्रमुख कारक रहा। इसके कारण 1951–61 में न केवल नगरीय जनसंख्या की वृद्वि दर कुछ धीमी 26.41% पड़ गयी, बल्कि नगरीकरण–अनुपात में भी अल्प 0.7% उत्थान ही देखा गया। इसका प्रमुख कारण परिभाषा में परिवर्तन के कारण 803 नगरों के 1961 जनगणना में वर्गावनत किये जाने से नगरों की संख्या में भारी कमी (360) का होना था। 1961 से आगे भारत की नगरीय जनसंख्या और नगरीकरण अनुपात में तीव्रता से वृद्वि हुई तथा 1971–1981 दशक में तो नगरीय जनसंख्या 46.02% और नगरों की संख्या 900 में बीसवीं सदी का सर्वाधिक नगरीय विकास देखा गया है।

तालिका –1

भारत–नगरीकरण की प्रवृति

(जनसंख्या 10 लाख में)

जनगणना वर्ष	कुल जनसंख्या	दशकीय वृद्वि (प्रतिशत)	नगरीय जनसंख्या (प्रतिशत)	दशकीय वृद्वि (प्रतिशत)	नगरीय (प्रतिशत)	नगरों की संख्या
1901	238–39	–	25–85	–	10–8	1917
1911	252–09	5.75	25–94	0–35	10–3	1909
1921	251–32	–0–31	28–18	8–22	11–2	2047
1931	278–97	11–00	33–45	19–14	11–9	2219
1941	318–66	14–22	44–15	31–97	13–9	2424
1951	361–08	13–31	62–44	41–38	17–9	3059
1961	439–23	21–51	78–93	26–41	18–0	2699
1971	548–15	24–80	109–09	38–23	19–9	3119
1981	683–32	24–66	159–70	46–02	23–2	4019
1991	846–30	23–85	217–18	36–19	25–7	4689
2001	1027–01	21–34	285–53	31–33	27–78	5167
2011	1210–02	17–64	377–11	31–80	31–16	7935

स्त्रोत– भारतीय राष्ट्रीय जनगणना, 2011.

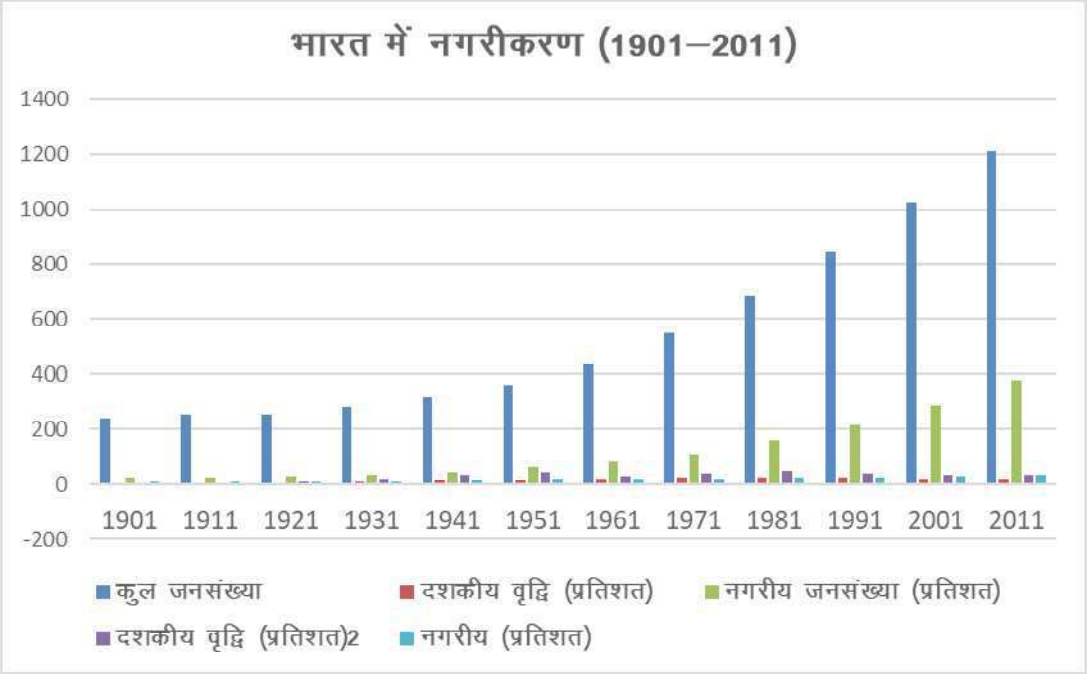

देश मे नगरीकरण की प्रवृत्ति की दृष्टि से विगत 100 वर्षो के जनगणना काल (1901–2011) को अध्ययन की सुविधा हेतु निम्न 3 अवस्थाओं में विभाजित किया जा सकता है–

- **मन्द नगरीकरण–** इसके अन्तर्गत 1901–31 तक के समय को सम्मलित किया जाता है। जिस दौरान अकाल, माहामारी आदि के कारण नगरीकरण की दशकीय वृद्वि दर या तो एक प्रतिशत से कम रही या इसमे हास देखा गया। इस तीस वर्षों में नगरीय जनसंख्या में प्रति वर्ष 0.98 प्रतिशत और नगरीकरण प्रतिशतांक में 0.36 प्रतिशत की बढ़ोतरी देखी गयी है।
- **मध्यम नगरीकरण–** इसके अन्तर्गत 1931–61 तक के समय को सम्मिलित करते है, जिस बीच नगरीय संख्या में 45.46 मिलियन (135.86 प्रतिशत) की वृद्वि हुई जबकि नगरीकरण का प्रतिशत 12.2 से बढ़कर 18.3 (50 प्रतिशत) पहुँच गया। देश में यह पंचवर्षीय योजनाओं के जरीये नियोजित विकास के शुरूआत का समय था। जिससे आधुनिक पद्वति के बड़े उद्योगों की स्थापना शुरू हुई। इससे नगरीय विकास के लिये सुदृढ़ आधार प्राप्त हुआ।
- **तीव्र नगरीकरण–** 1961 के बाद आर्थिक विकास की गति में दृढ़ता आने के साथ–साथ नगरीय विकास की गति भी तीव्र होने लगी। परिणामस्वरूप 1961–2011 के बीच देश की नगरीय जनसंख्या 78.93 मिलियन से बढ़कर 377.11 मिलियन पहुँच गई (वृद्वि 377.8%)। इसी बीच नगरों की संख्या में 5236 (194%) और नगरीकरण अनुपात में 12.9 प्रतिशत (70. 5%) की बढ़ोतरी देखी गई। इसी वृद्वि का महत्व इस दृष्टि से और भी बढ़ जाता है की देश में ग्रामीण जनसंख्या की वृद्वि, जन्मदर के अधिक होने और मृत्यु दर के घटाव के कारण, तेजी से हो रही है। वास्तव में देश आज तीव्र नगरीकरण के उशःकाल से गुजर रहा है, जिसके द्वारा उद्योगों एवं व्यापार में वृद्वि के कारण नगरों की और लोंगो के आकर्षण में बढ़ोतरी हुई है। राज्यस्तरीय विश्लेषण से ज्ञात होता है कि पिछले 40 वर्षों (1961–2001) के दौरान नगरीकरण अनुपात में सर्वाधिक वृद्वि (17.17%) तमिलनाडु राज्य में प्राप्त हुई जिसके बाद क्रमशः मणिपुर (15.20%), महाराष्ट्र (14.18%), नागालैण्ड (12.55%) एवं मध्य प्रदेश (12.38%) राज्यों का स्थान है। इसके विपरीत न्यूनतम नगरीय विकास वाले राज्यों में बिहार (2.05%), हिमाचल प्रदेश (3.45%), पश्चिम बंगाल (3.58%) एवं असम (5.35%) आदि का उल्लेख किया जा सकता है। देश के 11 राज्यों (हिमाचल प्रदेश, प. बंगाल, असम, बिहार, सिक्किम, मेघालय, राजस्थान, त्रिपुरा, उत्तर प्रदेश, उड़ीसा एवं जम्मू कश्मीर) में नगरीकरण अनुपात की वृद्वि की दर राष्ट्रीय औसत (9.48%) से कम प्राप्त हुई है। पश्चिम बंगाल को छोड़कर इनमें से अधिकांश राज्य औधोगिक और आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए है। इससे भिन्न वर्ष 1961–2001 के दौरान नगरीय जनसंख्या में सर्वाधिक वृद्वि हुई (298 लाख) देश के सबसे नगरीकृत राज्य महाराष्ट्र में देखी जाती है। जिसके बाद जनसकुंल राज्यों–उत्तर प्रदेश (250 लाख), तमिलनाडु (182 लाख), आन्द्र प्रदेश (142 लाख), पंश्चिम बंगाल (140 लाख) एवं गुजरात (136 लाख) आदि का स्थान है। न्यूनतम नगरीय जनसंख्या वृद्वि वर्ग के अन्तर्गत देश के छोटे राज्यों को सम्मिलित किया जाता है। जिसमें नागालैण्ड (3.3 लाख), मेघालय (3.5 लाख), हिमाचल प्रदेश (4 लाख), त्रिपुरा (4 लाख) एवं मणिपुर (5 लाख) आदि प्रमुख है।

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

भारतीय नगरीकरण का स्थानिक प्रतिरूप

देश में नगरीकरण के स्थानिक प्रतिरूप में पर्याप्त भिन्नता है (तालिका –2), नगरीय वर्चस्व के कारण दिल्ली, चण्डीगढ़ और लक्ष्यद्वीप केन्द्र शासित प्रदेशों में नगरीकरण का प्रतिशत 78 से अधिक पाया जाता है। गोवा देश का सर्वाधिक नगरीकृत राज्य है। देश के 5 राज्यों (गोवा, मिजोरम, तमिलनाडु, महाराष्ट्र एवं गुजरात) और अण्डमान निकोबार को छोडकर सभी 6 केन्द्र शासित प्रदेशों में नगरीकरण का प्रतिशत 40 से अधिक पाया जाता है। इसी प्रकार भौगोलिक और आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न हरियाणा, कर्नाटक, आन्द्र प्रदेश, पंश्चिम बंगाल, उत्तराखण्ड़ और पंजाब राज्यों तथा अण्डमान एवं निकोबार द्वीप समूह के केन्द्र शासित प्रदेशों में नगरीकरण क्ा प्रतिशत 30 से 40 के बीच पाया जाता है। इसके विपरीत आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हिमाचल प्रदेश, बिहार, असम एवं उड़ीसा मे नगरीकरण की मात्रा 20 प्रतिशत से भी कम पाई जाती है। देश के शेष भाग में नगरीकरण का अनुपात औसत स्तर (20 – 30 प्रतिशत) का पाया जाता है।

भारत में नगरीय जनसंख्या का सर्वाधिक संकेन्द्रण महाराष्ट्र (13.48 प्रतिशत) पाया जाता है। जिसके बाद क्रमशः उत्तर प्रदेश, तमिलनाडु, पश्चिम बंगाल और आन्ध प्रदेश का स्थान है। इन 5 राज्यों में देश की 50 प्रतिशत नगरीय जनसंख्या संकेन्द्रित है। इसी प्रकार मध्य प्रदेश, गुजरात, कर्नाटक, दिल्ली, केरल एवं राजस्थान (प्रत्येक में देश की 4–7 प्रतिशत नगरीय जनसंख्या) में देश की लगभग 32 प्रतिशत नगरीय जनसंख्या का संकेन्द्र पाया जाता है। इसके विपरीत सिक्किम, अरूणाचल प्रदेश, नागालैण्ड, मिजोरम, त्रिपुरा, हिमाचल प्रदेश, गोवा, मणिपुर एवं मेघालय मे देश की केवल 1.5 प्रतिशत नगरीय जनसंख्या निवास करती है। (तालिका –2)।

तालिका –2

भारत–नगरीकरण का स्थानिक प्रतिरूप, 2011

राज्य/के. शा0 प्र0	नगरीय जनसंख्या (हजार में)	भारत की नगरीय जनसंख्या का प्रतिशत	राज्य की जनसंख्या का प्रतिशत
आन्ध्र प्रदेश	28,219	7.48	33.36
अरूणाचल प्रदेश	317	0.08	22.94
असम	4,399	1.17	14.10
बिहार	11,758	3.12	11.29
छत्तीसगढ़	5,937	1.57	23.24
गोवा	907	0.24	62.17
गुजरात	25,745	6.83	42.60
हरियाणा	8,842	2.34	34.88
हिमाचल प्रदेश	689	0.18	10.03
जम्मू एवं कश्मीर	3,433	0.91	27.38
झारखण्ड	7,933	2.10	24.05
कर्नाटक	23,626	6.26	38.67
केरल	15,935	4.22	47.70
मध्य प्रदेश	20,069	5.32	27.63
महाराश्ट्र	50,818	13.48	45.22
मणिपुर	834	0.22	29.21
मेघालय	595	0.16	20.07
मिजोरम	572	0.15	52.11
नागालैण्ड	571	0.15	28.86
ओडिशा	7,004	1.86	16.69
पंजाब	10,319	2.76	37.48
राजस्थान	17,048	4.52	24.87
सिक्किम	154	0.04	25.15
तमिलनाडु	34,917	9.26	48.40
त्रिपुरा	961	0.25	26.17
उत्तर प्रदेश	44,495	11.80	22.27
उतराखंड	3,049	0.81	30.23
पश्चिम बंगाल	29,093	7.71	31.87

अण्डमान निकोबार द्वीप समूह	143	0.04	37.70
चण्डीगंढ	1,026	0.27	97.25
दादरा नगर हवेली	161	0.04	46.72
दमण एवं दीव	183	0.05	75.17
दिल्ली	16,369	4.34	97.50
लक्षद्वीप	50	0.01	78.07
पुडुचेरी	853	0.23	68.33
भारत	377,106	100.00	31.14

स्त्रोत– भारतीय राष्ट्रीय जनगणना 2011

भारत में नगरीय जनसंख्या का औसत घनत्व 87 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. पाया जाता है। राज्य स्तर पर सर्वाधिक घनत्व (>200 व्यक्ति/किमी.) पश्चिम बंगाल, केरल, तमिलनाडु एवं केन्द्र शासित प्रदेश दिल्ली, चण्डीगढ़ आदि में पाया जाता हैं। द्वितीय वर्ग (101–200 व्यक्ति/किमी.) के अन्तर्गत गोवा, पंजाब, उत्तर प्रदेश, हरियाणा एवं महाराष्ट्र का स्थान है जो देश के विकसित और जनसंकुल क्षेत्र का निर्माण करते है। तृतीय वर्ग (51–100 व्यक्ति/किमी.) के अन्तर्गत क्रमशः गुजरात, कर्नाटक, आन्ध प्रदेश, झारखण्ड, मध्य प्रदेश, त्रिपुरा एवं बिहार का स्थान का है जो देश के प्रमुख कृषि क्षेत्र, सघन बसाव के साथ–साथ औधोगिक दृष्टि से महत्वपूर्ण भाग है। देश के शेष राज्यों में नगरीय जनसंख्या का घनत्व 50 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. से भी कम पाया जाता है।

निष्कर्ष

भारत में नगरीय जनसंख्या 1901 में 25.85 (दस लाख) से बढकर 377 11(दस लाख) तक लगातार बढ रहा है। भारत में नगरीय दशकीय वृद्धि 1901 से 1951 तक निरन्तर बढी 1901 में 0 35 प्रतिशत से 1951 में 41 42 प्रतिशत हो गई। 1961 में 26 41 प्रतिशत रह गयी और फिर 1971 से 1981 में बढ गयी 1971 में 38 22 प्रतिशत व 1981 में 46 02 प्रतिशत और 1991 में 39 32 प्रतिशत व 2001 में 31 48 प्रतिशत और 2011 में भारत की नगरीय दशकीय वृद्धि 31 80 प्रतिशत रह गयी है। भारत के विभिन्न राज्यों व केन्द्र शासित प्रदेशों में भी नगरीयकरण की दर में भी विभिन्नतायें दिखाई देती है। संयुक्त राष्ट्र संध के जनसंख्या प्रक्षेपो के अनुसार 2021–2031 के दशक में भारत मे नगरीय वृद्वि दर 2.5 प्रतिशत वार्षिक रहेगी। किन्तु तब भी यह दर विश्व की नगरीय जनसंख्या की औसत वृद्वि दर विश्व की नगरीय जनसंख्या की औसत वृद्वि दर 1.7 प्रतिशत से काफी अधिक होगी।

संदर्भ

1. सक्सेना, हरिमोहन. (2019). राजस्थान का भूगोल. राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।
2. शर्मा., शर्मा. (2015). राजस्थान का भूगोल. पंचशील का प्रकाशन।
3. सिंह., मौर्य. (2014). नगरीय भूगोल. शारदा पुस्तक भवनः इलाहाबाद।
4. खत्री, हरिश कुमार. नगरीय भूगोल. कैलाश पुस्तक सदनः भौपाल।
5. बंसल, सुरेश चन्द. नगरीय भूगोल. मीनाक्षी प्रकाशन।
6. जोशी, रतन. नगरीय भूगोल. राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर।
7. भल्ला, एल.आर. राजस्थान का भूगोल।
8. तिवारी, आर.सी. (2014). भारत का भूगोल. प्रवालिका पब्लिकेशन्सः इलाहाबाद।
9. भारतीय राष्ट्रीय जनगणना वर्ष 2001 2011, अंतिम आकड़ें।
10. विभिन्न वेब–साइट वर्ष 2021-22।
11. Amitabh, K. et al. (2005). "A Handbook of Urbanization in Indai." Oxford University Press: Washington.
12. Bala, Raj. (1986). Urbanisation in India. Rawat Publishers: Jaipur.
13. Bansal, S.C. (2010). Urban Geography. Meenakshi Prakash: Begam Bridge, Meerut.
14. Bose, A. (1991). Demographic Diversity of India.1991Census. B.R. Pub. Corp.: Delhi.
15. Khullar, D.R. (2010). Bharat ka Bhugol avm Prayogic Bhugol. Kalyani Publishers: New-Delhi.
16. Know, Paul L. (1994). Urbanization: An Introduction to Urban Geography. Prentice Hall: New Jersey.
17. Prabha, K. (1979). Towns : A Structural analysis. Inter-India Publications: Delhi – 35.
18. Ramachandran, R. (1989). Urbanisation and Urban Systems in India. Oxford: New Delhi.

14

पर्यावरण : वर्तमान में सामाजिक एवं सांस्कृतिक विरासत

डॉ० ओम प्रकाश चौधरी
प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, मनोविज्ञान विभाग
श्री अग्रसेन कन्या पी०जी० कॉलेज, वाराणसी
ईमेलः *opcbns@gmail.com*

मानसी चौधरी
शोधार्थी, मनोविज्ञान विभाग
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ
ईमेलः *emailmanasi17@gmail.com*

सारांश

पर्यावरण प्राणियों के अस्तित्व का आधार है, जीवन का मूल आधार है। पर्यावरण का तात्पर्य पृथ्वी के जीव जगत को आवृत्त करने वाले भौतिक परिवेश से है, जो मुख्य रूप से पंचतत्व–पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश एवं वायु से निर्मित है। जो मानव एवं अन्य प्राणियों के जीवन और विकास को प्रभावित करते हैं। इन्हीं कारकों एवं प्रभावों के संयोग को पर्यावरण कहते हैं। वायु, जल, जंगल, भूमि, वनस्पति तथा जीव–जन्तु प्राकृतिक संसाधन के अवयव हैं। मानव अपनी विकासोन्मुखी आकांक्षाओं की पूर्ति हेतु इन प्राकृतिक सम्पदाओं पर निर्भर करता है। इन संसाधनों के कुशल प्रबंधन के अन्तर्गत सकारात्मक तथा यथार्थपरक योजनाओं को स्वीकार करते हुए मानव की आवश्यकताओं एवं उनकी पूर्ति करने की पर्यावरण की क्षमताओं के बीच सन्तुलन कायम करना पड़ता है। पर्यावरण का इतिहास समाज और प्रकृति के सम्बन्धों का इतिहास है। प्रारम्भ से ही मानव एवं प्रकृति का अटूट सम्बन्ध रहा है। सभ्यता के विकास में प्रकृति की महत्वपूर्ण भूमिका है। आज के औद्योगिक एवं भौतिकवादी विकास ने पर्यावरण को काफी प्रभावित किया है। हमारे पूर्वजों ने हमेशा प्रकृति के सान्निध्य में रहते हुए उसे स्वच्छ एवं स्वस्थ बनाये रखने का प्रयास किया। प्रकृति के महत्व और उसके संरक्षण व सुरक्षा की जिम्मेदारी को समझकर सभी साधनों का उपयोग किया। आज के समय में हमारी सबसे बड़ी जरूरत है कि हम अपनी इस विरासत को संरक्षित और सुरक्षित करने हेतु आगे आयें और अपने सामाजिक उत्तरदायित्व का निर्वहन करें। स्वस्थ तथा अनुकूल पर्यावरण में ही सुखद जीवन निर्वाह की आशा की जा सकती है।

मुख्य बिन्दु

पर्यावरण, प्रदूषण, पारिस्थितिकी, पंचतत्व, संस्कृति, संरक्षण, वनस्पति।

मानव और अन्य जीवों की उत्पत्ति, विकास एवं जीवन को प्रभावित करने वाले समस्त कारकों एवं प्रभावों के संयोग को पर्यावरण कहते हैं। इसके अन्तर्गत वायु, जल, जंगल एवं भूमि तथा इन तत्वों तथा मानव सहित सभी जीव–जन्तु और वनस्पतियों के अंतःसम्बन्ध तथा गुण समाहित हैं। पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986 के अनुसार, पर्यावरण के अन्तर्गत किसी जीव को चारों ओर से घेरने वाली भौतिक एवं जैविक दशाएँ तथा उनके साथ अंतःक्रियाएँ शामिल की जाती हैं। पर्यावरण उन समस्त भौतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों एवं दशाओं को प्रदर्शित करता है जो किसी एकाकी जीव या जीव समूह को चारों ओर से आवृत्त करता है तथा उसे प्रभावित करता है। टांसले का कहना है कि, प्रभावकारी दशाओं का वह सम्पूर्ण योग जिसमें जीव रहते हैं, पर्यावरण कहलाता है। हम कह सकते हैं कि पर्यावरण के अन्तर्गत वे सभी तत्व आते हैं जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में उसमें रहने वाले मनुष्य व समस्त प्राणियों की क्रियाओं को प्रभावित करते हैं। इसमें वायु, जल, भूमि, मानव, जीव–जन्तु, पेड़–पौधे आदि और इनके पारस्परिक सम्बन्ध इसमें निहित हैं। पर्यावरण को भौतिक एवं जैविक दो श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है। भौतिक पर्यावरण में जल, वायु और भूमि आते हैं तथा जैविक पर्यावरण में वनस्पति एवं जीव–जन्तु सम्मिलित हैं।

मानव का पर्यावरण से बहुउद्देशीय सम्बन्ध है। समय के साथ इस निर्भरता में परिवर्तन आया है। मनुष्य ने अपनी आवश्यकतानुसार पर्यावरण को प्रभावित किया है। आधुनिक वैज्ञानिक प्रगति ने मनुष्य की क्षमताओं में अकल्पनीय वृद्धि की है और

उसकी भौतिक सुख–सुविधाओं की इच्छाएँ अपने चरम पर हैं। औद्योगिक विकास के दौरान मनुष्य ने अपने रहन–सहन की स्थिति में सुधार और भौतिकतावादी संस्कृति के कारण अनेक ऐसी दीर्घकालिक समस्याओं को जन्म दिया है, जो पर्यावरण के तथा उसके स्वयं के अस्तित्व के लिए घातक है।

21वीं सदी के महान वैज्ञानिक स्टीफेन हाकिंग के अनुसार, ''हम अपनी लालच एवं मूर्खता से स्वयं को विनष्ट कर रहे हैं। मेरे विचार में बढ़ती जनसंख्या और गहराते प्रदूषण के कारण मानव जाति का नामोनिशान अगले एक हजार वर्षों में समाप्त हो सकता है।'' आज की परिस्थितियों और स्टीफेन हाकिंग की चेतावनी को दृष्टि में रखते हुए पर्यावरण संरक्षण हेतु हमें सभी के मानस को प्रकृति के साथ सहअस्तित्व की भावना से प्रेरित करना होगा ताकि वह अपनी भौतिक सुख–सुविधा के लालच में मानवता की ही बलि न चढ़ा दे। जनसामान्य को अलबर्ट श्वीजर की इस चेतावनी के प्रति जागरुक करना होगा कि, ''मनुष्य ने स्वस्थ चिंतन गवाँ दिया है और दुनिया का संहार कर विनाश की ओर अग्रसर है।'' उसे प्रकृति का पूर्ण संरक्षण करते हुए आगे बढ़ना होगा।

पर्यावरण संरक्षण का विषय हमारी संस्कृति में प्राचीनकाल से ही देखने में आता है। सनातन परम्परा में पेड़–पौधों, नदी–पर्वत, अग्नि–वायु सहित प्रकृति के विभिन्न रूपों के साथ मानव का आत्मीय सम्बन्ध रहा है। पर्यावरण के विभिन्न घटकों के साथ मानव के सम्बन्ध इसलिए विकसित कर दिये, ताकि मनुष्य अपनी लालच में पर्यावरण को गम्भीर क्षति न पहुँचाये। प्रकृति के विभिन्न अंग जैसे भूमि, जल, वायु, जीव–जन्तु और वनस्पतियाँ मिलकर एक जैविक परिवार बनाते हैं जो जीवन धारण प्रणाली का आधार है। इनके बीच अन्योन्याश्रित सम्बन्ध पाये जाते हैं। भूमि, जल और वायु के बिना जीव–जन्तुओं और पेड़–पौधों का जीवन सम्भव नहीं है। ठीक उसी प्रकार जीव–जन्तुओं, पेड़–पौधों एवं वनस्पतियों के कारण ही भूमि, जल और वायु का अस्तित्व है। इस प्रकार प्रकृति में अन्तर्सम्बन्धों का एक जाल (नेटवर्क) है। इसे ही आज की भाषा में 'समेकित जीवन धारण प्रणाली' कहा जाता है। मानव विकास रिपोर्ट, 1990 में स्पष्ट रूप से कहा गया है, राष्ट्र के असली धन अपने लोग हैं। विकास का उद्देश्य लोगों के लम्बे, स्वस्थ और रचनात्मक जीवन के लिए वातावरण उपलब्ध करना। इस सरल लेकिन अकाटय सत्य को लोग वैभव व वित्तीय धन की खोज में अक्सर भुला देते हैं।

आज मानव भौतिक उन्नति के मार्ग से जीवन व सुख खोज रहा है। कभी न समाप्त होने वाला एक संघर्ष प्रकृति के खिलाफ छेड़ रखा है, पृथ्वी पर जीवन के अस्तित्व को ही खतरे में डाल दिया है। प्राकृतिक आपदाएँ– बाढ़, सूखा, भूस्खलन, बादल फटना आम बात हो गयी है। कोरोना जैसी महामारी जिसने पूरे विश्व में दो वर्ष तक हाहाकार मचा रखा था, पुनः नये वैरिएन्ट के साथ अपनी दस्तक दे चुका है। इससे पहले कि बहुत देर हो जाय मनुष्य को अपने विवेक से काम लेना चाहिए तथा पर्यावरण संरक्षण हेतु आगे आना चाहिए। मानव और पर्यावरण में संघर्ष न होकर समन्वय होना चाहिए। मनुष्य के क्रियाकलाप प्राकृतिक नियमों के अनुरूप होने से विकास सन्तुलित एवं दीर्घकालिक होते हैं। इसका उल्लेख गाँधी जी ने 1909 में 'हिन्द स्वराज' में बड़ी गम्भीरता से किया है।

1972 में स्टॉकहोम में संयुक्त राष्ट्रसंघ द्वारा 'मानव पर्यावरण' पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन 5 एवं 6 जून को आयोजित किया गया, जिसमें भारत की तत्कालीन प्रधानमंत्री इन्दिरा गाँधी ने भारत की ओर पर्यावरणीय नीति घोषित की। वहीं पर 5 जून को 'विश्व पर्यावरण दिवस' घोषित किया गया जो 1974 से 5 जून को प्रतिवर्ष मनाया जाने लगा। 26 नवम्बर को 'विश्व पर्यावरण संरक्षण दिवस', 22 मई को 'अन्तर्राष्ट्रीय जैव विविधता दिवस', 21 मार्च 'विश्व वानिकी दिवस', 22 मार्च 'विश्व जल दिवस', 10 अप्रैल 'जल संसाधन दिवस', 1–7 जुलाई 'वन महोत्सव सप्ताह', 4 अक्टूबर 'वर्ल्ड एनिमल डे', 6 अक्टूबर 'विश्व वन्य प्राणी दिवस' तथा अक्टूबर का प्रथम सप्ताह 'राष्ट्रीय वन्य जीव सप्ताह' आदि का आयोजन प्रतिवर्ष हो रहा है। ऐसा इसलिए हो रहा है कि हमने प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग नहीं बल्कि दुरुपयोग किया है। अब जब विभिन्न वैज्ञानिक शोध व अनुसंधान से प्राकृतिक असंतुलन की सीमा चिन्ताजनक हो गई, जिससे सम्पूर्ण विश्व ने पर्यावरण प्रदूषण की समस्या को पहचाना है। पर्यावरण के जल, वायु, भूमि तथा ध्वनि प्रदूषण को देखते हुए पर्यावरणविदों ने 1983 में 'विश्व–2000' नामक एक प्रतिवेदन प्रस्तुत किया था, जिसमें कहा गया था कि यदि पर्यावरण प्रदूषण को नियंत्रित नहीं किया गया तो सन् 2035 तक तेजाबी वर्षा, भुखमरी और महामारी का ताण्डव–नृत्य होगा और भविष्य खतरे में पड़ जायेगा। प्राकृतिक सन्तुलन को बनाये रखने के लिए उसकी पुनर्स्थापना के प्रयासों के लिए विश्व सजग व चैतन्य हुआ है। इससे पर्यावरण संरक्षण और धारणीय या सतत् विकास के प्रति चेतना व जागरुकता वैश्विक स्तर पर बढ़ी है। 1992 में रियोडीजिनेरों में आयोजित पृथ्वी सम्मेलन, जिसमें दुनिया के 108 देशों के राष्ट्राध्यक्षों ने भाग लेकर एजेन्डा–21 को स्वीकृति दी। सन् 1994 में मिस्र में जनसंख्या एवं विकास सम्मेलन, 1995 में बीजिंग में, इसी वर्ष कोपेनहेगन में सम्मेलन, सन् 1996 में इस्तानबुल में हैबिटैट–।। सम्मेलन का आयोजन हुआ। सभी में पर्यावरण संरक्षण हेतु एजेन्डा–21 लागू करने की बात कही गयी। सन् 2000 सितम्बर में संयुक्त राष्ट्र के सम्मेलन में विश्व के 147 देशों के प्रतिनिधियों ने एजेन्डा–21 लागू करने हेतु समयबद्ध कार्यक्रम अपनाने की माँग दुहराई। सन् 2002 में दक्षिण अफ्रीका के जोहन्सबर्ग में पृथ्वी सम्मेलन में दुनिया के 200 देशों के प्रतिनिधियों ने एजेन्डा–21 को कार्यान्वित करने की वचनबद्धता की पुनः घोषणा की, जिसमें मुख्य रूप से जल स्वच्छता, जैव विविधता, ऊर्जा, रसायनिक पदार्थ, स्वास्थ्य, महिला, व्यापार, वैश्वीकरण, मत्स्य, प्रशासन, अनुदान, गरीबी, संयुक्त उत्तरदायित्व आदि मुख्य बिन्दु थे। 6–20 नवम्बर, 2022 में शर्म–अंल–शेख, मिश्र में संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन सम्मेलन कॉप 27 का आयोजन हुआ, जिसमें 92 से अधिक राष्ट्राध्यक्ष और

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

190 देशों के लगभग 35000 प्रतिनिधि शामिल हुए। 'कान्फ्रेन्स ऑफ पार्टीज–27' का मुख्य उद्देश्य है जलवायु परिवर्तन को रोकने की दिशा में प्रयास करना। सम्मेलन में पहली बार एक हानि और क्षति कोष पर सहमति हुई, जिसे एक महत्वपूर्ण उपलब्धि माना जा रहा है। किन्तु अभी भी दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति बनी हुई है कोई जैव रसायन नहीं बन्द कर सकता, कोई परमाणु हथियार नष्ट नहीं कर सकता तो कोई अस्त्र–शस्त्र की होड़ में अपना वर्चस्व कायम करने पर लगा हुआ है। कहने का मकसद सिर्फ इतना है कि अपना–अपना स्वार्थ इस धरा को, सम्पूर्ण प्रकृति व पर्यावरण को विनाश के रास्ते पर अग्रसर कर रहा है।

मानव के समस्त क्रियाकलाप पर्यावरण से ही प्रभावित होते हैं। मनुष्य स्वयं भौतिक पर्यावरण की एक महत्वपूर्ण इकाई है, जिसके चहुँ ओर प्रकृति का घेरा बना हुआ है। आदिकाल से हम प्रकृति प्रदत्त संसाधनों का उपयोग करते आ रहे हैं। लेकिन कुछ संसाधनों का अनियंत्रिति और अवैज्ञानिक तरीके से दोहन करने से प्राकृति सन्तुलन बाधित हो रहा है। हमारे लिए यह आवश्यक है कि जो प्राकृतिक सम्पदा असीमित है उसका कुशलतापूर्वक उपयोग करें तथा जो संसाधन सीमित हैं, उनका उपयोग सावधानीपूर्वक करें और उन्हें प्रदूषण से बचायें। प्रकृति के प्रत्येक घटक एक दूसरे घटक से निकट रूप से सम्बन्धित होते हैं। यही सम्बन्ध प्रकृति का समस्त मानव और मानवेतर प्राणियों से है। एक का विनाश दूसरे के ह्रास का कारण बन सकता है। मानव स्वयं भी पर्यावरण का एक अभिन्न अंग है। हमारी संस्कृति पर्यावरण संरक्षण प्रधान रही है, जो प्रदूषण पर विराम लगाती है। मनुष्य के समस्त कार्य, विभिन्न स्थितियों में उसकी भूमिका, पर्यावरण संरक्षण हेतु उसके प्रयास आदि सभी का प्रभाव स्पष्टतः परिलक्षित होता है।

भारतीय दर्शन, अध्यात्म एवं सामाजिक–सांस्कृतिक परिवेश का केन्द्र बिन्दु पर्यावरण संरक्षण रहा है। पर्यावरण एवं संवर्द्धन, भारतीय जनमानस के अंतःकरण में प्रतिस्थापित है। हमारी संस्कृति के केन्द्र में स्वच्छ पर्यावरण की संकल्पना है। पर्यावरण हमारी जीवनशैली की आत्मा है। मानव तथा प्रकृति के बीच अटूट सम्बन्ध कायम किया गया है, जो पूर्णतः वैज्ञानिक तथा सन्तुलित है। हमारे शास्त्रों में पेड़–पौधों, वनस्पतियों, लताओं, पुष्पों, पशु–पक्षियों, झरनों, जलाशयों, पहाड़ों, नदियों, जंगली जानवरों, वन, मिट्टी यहाँ तक कि पत्थर भी पूज्य हैं और उनके प्रति स्नेह तथा सम्मान की बात कही गयी है। हमारे मनीषियों का यह चिन्तन पर्यावरण को प्रदूषण मुक्त रखने के लिए सार्थक तथा संरक्षण के लिए बहुमूल्य है।

आज पर्यावरण संकट से निजात पाने के लिए सम्पूर्ण विश्व को नवीन उपायों के साथ वैदिक दर्शन की अत्यधिक आवश्यकता है, तभी सभी जीव–जन्तु, मानव, पेड़–पौधे आदि चिरंजीवी रहेंगे, प्रकृति का संरक्षण हमारा स्वभाव बने और हम प्रकृति के साथ तादात्म्य स्थापित करना सीखें। पेड़–पौधों, जीव–जन्तुओं के प्रति 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' के भाव का विस्तार करें :

- हम पर्यावरण को हानि पहुँचाने वाले कार्यों से बचें और पर्यावरण को संरक्षित करने वाले व्यवहारों को अपनायें।
- जल, जंगल, जमीन, जीव, जलवायु, जनसंख्या पर संवेदनशील दृष्टि रखें।
- बिजली, ईंधन (डीजल, पेट्रोल, सी.एन.जी. आदि) के प्रयोग में सावधानी व संयम बरतें।
- सार्वजनिक वाहन, कारपूलिंग, साइकिल का प्रयोग कर न केवल ईंधन बचायें अपितु वायु व ध्वनि प्रदूषण भी कम करें।
- अधिक से अधिक पेड़–पौधे लगायें एवं उनका संरक्षण करें।
- प्लास्टिक का प्रयोग पूर्णतया बन्द करें, जूट या वस्त्र निर्मित थैले का प्रयोग करें।
- पशु–पक्षियों के लिए दाना–पानी उपलब्ध करायें।
- पर्यावरण संरक्षण के लिए अपनी जीवनशैली बदलें।
- प्रकृति के साथ सौहार्द्रपूर्ण ढंग से जीना सीखें।
- प्राकृतिक संसाधनों का दोहन कम से कम सावधानी पूर्वक करें।
- विश्व की सभी संस्कृतियों में अपनी एक परम्परा, शिष्टाचार व सभ्यता है जो पर्यावरण को संरक्षित करती है। पुनः हमें प्रकृति की ओर वापस लौटना होगा।
- वर्तमान महामारी कोविड–19 (जिसका नया वैरिएन्ट बी.एफ.–7 इस समय सक्रिय है) भी पर्यावरणीय असन्तुलन का परिणाम है। अतएव हमें प्रकृति के सान्निध्य में रहते हुए उसका संरक्षण करना चाहिए।
- किसी भी समाज, राष्ट्र व संस्कृति की सम्पन्नता वहाँ के निवासियों की भौतिक समृद्धि में निहित नहीं होती है, अपितु वहाँ की जैव विविधता पर निर्भर होती है। शारीरिक स्वास्थ्य तथा मानसिक शान्ति का साधन प्राकृतिक सम्पदा ही है। प्रकृति के सम्बन्ध में लिखा है––इमानि पंचमहाभूतानि पृथिवीं, वायुः, आकाशः, आपज्योतिषि।

भारतीय संस्कृति में पर्यावरण संचेतना की गम्भीर गवेषणा है। वैदिक मंत्रों में उल्लिखित है कि मनुष्य अपनी इच्छाओं को वश में रखकर प्रकृति से उतना ही ग्रहण करे कि उसकी पूर्णता को क्षति न पहुँचे।

ऊँ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादायपूर्णमेवावशिष्यते।।

निष्कर्ष

पर्यावरण के संरक्षण हेतु सुसंगत एवं नियमबद्ध सूत्र हमारी भारतीय संस्कृति में विद्यमान है। हमारे जीवनदर्शन में पर्यावरण व प्रकृति के संरक्षण के मौलिक सिद्धान्त निहित हैं। प्रकृति प्रदत्त संसाधनों का आवश्यकतानुसार न्यूनतम उपयोग करना हमारे जीवन दर्शन की अनूठी विशेषता है। भारतीय जीवन दर्शन में सरोवरों, नदियों, वृक्षों, पशु–पक्षियों इत्यादि की महती भूमिका है, उनके प्रति आदर भाव प्रदर्शित करने हेतु पूजा का विधान है। पर्यावरण मानव सहित मानवेतर की भी जीवनदायिनी सत्ता है। प्राकृतिक तत्वों के साथ हमने भावात्मक व रागात्मक सम्बन्ध स्थापित करके उन्हें अपने व्यक्तित्व के साथ पूरी तरह जोड़ लिया है। पर्यावरण और प्राणी एक दूसरे पर आश्रित हैं। यही कारण है कि भारतीय चिन्तन परम्परा में पर्यावरण संरक्षण की अवधारणा उतनी ही प्राचीन है, जितना मानव जाति का ज्ञात इतिहास है। आज पुनः आवश्यकता इस बात की है कि पर्यावरण संरक्षण की सभी प्राचीन भारतीय परम्पराओं की पुनर्स्थापना की जाय एवं जनसामान्य को पर्यावरण संरक्षण हेतु जागरुक और अभिप्रेरित किया जाय, ताकि हम भावी पीढ़ी को एक स्वच्छ एवं स्वस्थ पर्यावरण प्रदान कर सकें।

सन्दर्भ

1. अस्थाना, मधु. (2008). 'पर्यावरण : एक संक्षिप्त अध्ययन'. मोतीलाल बनारसीदासः दिल्ली।
2. अग्रवाल, ओम प्रभात. (2016). शैक्षिक मंथनः जयपुर।
3. ओझा, एन0एन0. (सं0, 2004). पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण. क्रानिकल बुक्सः नई दिल्ली।
4. कटारिया, मोनिका. (2021). भारतीय जीवन दर्शन... दृष्टिकोण. *इन्टरनेशनल जर्नल ऑप एजुकेशन, मॉडर्न एटलाइड साइंस एण्ड सोशल साइंस.* Vol. 3. No. 1. जनवरी–मार्च।
5. गोयल, एम0के0. (2009). 'मानव और पर्यावरण'. विनोद पुस्तक मंदिरः आगरा।
6. गुप्ता, बजरंग लाल. (2014). शैक्षिक मंथनः जयपुर।
7. चौधरी, ओम प्रकाश., उशा. (2018). 'पर्यावरण संरक्षण : एक सामाजिक उत्तरदायित्व'. रवीन्द्र कुमार वर्मा (सं0) भारत के पर्यावरणीय मुद्दे एवं चुनौतियाँ. श्रद्धा बुक डिस्ट्रीब्यूटर्सः फैजाबाद।
8. चौधरी, ओम प्रकाश. (2022). 'एक खास दिन – धरती बचाने का दिन..'. शेफाली सहासमल एवं एम0एन0 विजय कुमार (सं0) मेरी कलम. गीता प्रकाशनः हैदराबाद।
9. पाण्डेय, एम0के0. (2011). 'भारतीय दर्शन में पर्यावरण चेतना'. हिन्दुस्तानी एकेडमीः इलाहाबाद।
10. पाण्डेय, नन्दकिशोर. (2013). शैक्षिक मंथनः जयपुर।
11. रंगा, मधुर मोहन. (2014). शैक्षिक मंथनः जयपुर।
12. मिश्र, अनिल दत्त. (2012). गाँधी एक अध्ययन. डॉर्लिंग किंडस्ले (इंडिया) प्रा0 लि0ः नई दिल्ली।
13. सिंह, दशरथ., पाल, एम0सी0. (2010). 'पर्यावरण अध्ययन'. विजय प्रकाशन मंदिरः वाराणसी।
14. शुक्ला, डी0एन0., कुमार, वी0. (2007). बेसिक कान्सेप्ट्स ऑफ इनवायरनमेन्ट स्टडीज. क्षितिज प्रकाशनः वाराणसी।
15. हिन्दुस्तान समाचार–पत्र।
16. विकीपीडिया।

15

पर्यावरण प्रदूषण के कारण तथा उनका निदान

प्रो० पुनीता शर्मा
प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, चित्रकला विभाग,
गोकुलदास हिन्दू गर्ल्स कॉलेज
मुरादाबाद (उ०प्र०)

प्रकृति से निरन्तर छेड़छाड़ कर आज मानव का जीवन संकटों से घिर गया है क्योंकि पर्यावरण के समस्त तत्व जीवित प्राणियों की रक्षा करते हैं। मानव पर्यावरण, प्रकृति एवं कला से जीवन पर्यन्त तारतम्य बनाये रखता है। पर्यावरण शब्द का अर्थ है– परि अर्थात् घेरना और आवरण का अर्थ खोल अथवा कवच। मानव शरीर पाँच तत्वों से मिलकर बना है जिसमें क्षिति, जल, पावक, गगन और समीर को सभी धर्मों ने स्वीकारा है। कला और प्रकृति वस्तुतः पर्यावरण से प्रथ्क हो ही नहीं सकते। पर्यावरण के पाँचों तत्व मानव शरीर का भरण–पोषण करते हैं तथा मृत्योपरान्त पर्यावरण में समा जाते हैं।

प्रकृति पर्यावरण की जननी है। कला ने प्रकृति से प्रेरणा ग्रहण कर कलाकारों को अपनी लेखनी, तूलिका, छेनी–हथौड़ी, वाद्य यन्त्रों आदि की सहायता से क्रमशः साहित्य–काव्य–कला, चित्रकला, मूर्तिकला एवं संगीत कला आदि को सृजित करने के लिए विवश कर दिया। आज कला के अनुपम, अनूठे एवं अद्वितीय उदाहरण समाज के सम्मुख विद्यमान हैं, यह तथ्य किसी से छिपा नहीं है।

पर्यावरण में जैविक अजैविक दोनों घटकों का मिश्रण होता है। जैविक घटकों में मानव, जीव जन्तु, पेड़ पौधे तथा जीवाणु शामिल है। अजैविक घटकों में जल, ताप, मिट्टी तथा वायु प्रमुख रूप से स्वीकार किये गये हैं। एक घटक दूसरे घटक को प्रभावित करता है। ऐसी कला और प्रकृति दोनों की परम्परा रही है तथा यही पर्यावरण का विधान है। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है– निरन्तर बढ़ता जल, वायु, मिट्टी एवं अन्तरिक्ष प्रदूषण।

जंगलों, पहाड़ों, एवं सड़कों के किनारे वृक्षों के कटान द्वारा उत्पन्न प्रदूषण– संकट

जंगलों के कटान सम्पूर्ण पर्यावरण को प्रभावित करता है। पहाड़ों एवं जंगलों में उग रहे वृक्षों का कटान मानव की विवशता है। सड़कों एवं जंगलों में उग रहे वृक्षों का कटान मानव की विवशता है। सड़कों के चौड़ीकरण में रत सरकार वृक्षों को कटवा रही है। वृक्षों के कटान के पश्चात् ढ़लान से प्रवाहित जल की तीव्रता बढ़ जाती है। इसका प्रभाव भूस्खलन, बाढ़ उपजाऊ, मिट्टी का क्षरण तथा जलाश्यों में एकत्रित गाद के रूप में परिलक्षित होता है। यह समस्त घटनायें कुल मिलाकर पहाड़ों पर सूखे की स्थिति को जन्म देती है। पहाड़ों के तापमान में वृद्धि होती है। पहाड़ी क्षेत्रों में आर्द्रता कम हो जाती है तथा जंगलों में आग लगने की घटनायें बढ़ जाती हैं। वन कटान से ऑक्सीजन की उपलब्धता कम हो जाती है। कलाकार चित्रों के माध्यम से जन–साधारण को समझाने के प्रयास में लगे हुए हैं। अनपढ़ व्यक्ति भी चित्रकार और कलाकार की रचना से प्रभावित हो जाते हैं तथा सोचने पर विवश हो जाते हैं कि यदि जंगलों का विनाश हो जाता है। यदि जंगलों कटान, वृक्षों का कटान इसी प्रकार होता गया तो हमारे जीवन पर भी संकट गहरा जायेगा। मानव कल्याण में लिप्त हमारे वृक्ष छोटे पौधे, झाड़ियाँ तथा घास जीवन भर मानव की सेवा करते हैं। वृक्षों का योगदान सर्वाधिक है। पेड़ पौधे मानव की भाँति चल फिर नहीं सकते। पेड़ों के काटे जाने पर उनका रक्त एवं अश्रुधारा का बहाव नहीं होता। किन्तु यह सत्य है कि पेड़–पौधों में जीवन होता है। मानव जीवन का चक्र की भांति पौधे से वृक्ष तक जीवन चक्र चलता रहता है। जंगलों की अनावश्यक कटाई बन्द की जाये। यदि जंगलों से वृक्ष काटना आवश्यक हो तो जितने वृक्ष काटे जाये उससे दोगुनी संख्या में वृक्ष उगाये भी जायें।

पर्यावरण प्रदूषण संकट में प्लास्टिक गम्भीर समस्या

पर्यावरण को प्रदूशित करने में प्लास्टिक की अहम् भूमिका रही है क्योंकि घर में प्रयुक्त लगभग 60–70 प्रतिशत वस्तुएं

प्लास्टिक से बनी होती हैं। प्लास्टिक से बनी वस्तुएँ, खिलौने, बर्तन, थैलियां आदि इसका प्रमाण हैं। प्लास्टिक का सबसे बड़ा दुर्गुण इसका मिट्टी में नष्ट न होना है। प्लास्टिक की थैलियां नालियों को बन्द कर देती हैं। नालियां–नालों में बहती हुई यह थैलियां नदियों के मार्ग से समुद्र में पहुँच जाती है। एक वर्ग कि0मी0 समुद्र में लाखों की संख्या में पौलीथीन की थैली मिलने के प्रमाण मिले हैं। प्लास्टिक के कचरे की समस्या दिनों–दिन विकराल होती जा रही है। यह कचना न तो पानी में गलता है न मिट्टी में सड़ता है। सैकड़ों वर्षों तक मिट्टी में उसी प्रकार दबा पड़ा रहता है। पृथ्वी में दबा देने पर प्लास्टिक तथा पौलीथीन का कचरा मिट्टी को चोक कर देता है एवं पृथ्वी की ऑक्सीजन ग्रहण करने की शक्ति कमजोर पड़ जाती है। इसके कारण फल, सब्जियां तथा फसलों की पैदावार–वृद्धि नहीं हो पाती है। सड़कों पर विचरण करते पशु–गाय–भैंसे आदि पशु भी इन थैलियों को खाद्य सामग्री के साथ खा जाते हैं और गम्भीर रूप से अस्वस्थ हो जाते हैं।

मानव समाज की जागरुकता द्वारा प्लास्टिक समस्या का निदान सम्भव

प्लास्टिक का कचरा पुनः उपयोग में लाने की प्रक्रिया भारत में अपनायी जा रही है। प्लास्टिक के कचरे को भविष्य के ईंधन के रूप में प्रयोग में लाया जा सकता है। पौलीथीन थैलियों के उपयोग में कार्यरत कर्मचारियों को कागज की थैली बनाने में लगाया जाये ताकि वे सब बेरोजगार न हो जाये। आवश्यकता इस बात की है कि पौलीथीन के प्रयोग को नकारा जाये तथा इसके दुष्परिणामों को कलात्मक ढंग द्वारा जनमानस तक पहुँचा जाये। कागज, कपड़े, अथवा जूट–बांस की कलात्मक, आकर्षक थैली का प्रयोग बढ़ाने का कार्य कलाकार कर रहे हैं जिससे प्लास्टिक की थैलियों का समाधान हो रहा है किन्तु अभी पूर्ण सफलता नही मिली है। गीला– सूखा कचरा प्रथक्–प्रथक् करके निस्तारित करने का प्रयास सरकार पहले ही कर चुकी है और आधी आबादी इस नियम का अनुसरण भी कर रही है। नगर निगम की कूड़ा गाड़ियाँ इसी प्रकार घरों से कचरा एकत्रित भी कर रहे हैं।

अस्पतालों तथा नर्सिंग–होम की संख्या हर छोटे–बड़े शहरों, कस्बों तथा तहसीलों में दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। अस्पतालों में संक्रामक रोगों के मरीज़ चिकित्सा–परामर्श हेतु आते हैं। मरीजों के कफ, पस एवं रक्तादि में संक्रमण फैलाने, वाले सूक्ष्म जीवाणु होते हैं। शल्य चिकित्सा में काटे गये मानव अंग एवं संक्रमण–युक्त पट्टियां कूड़ेदानों में तथा कूड़ा घरों में फेंक दी जाती हैं। बकरी, गाय, कुत्ते, भैंस, सुअर तथा अन्य पशु संक्रमण युक्त कचरे को खाकर रोग ग्रस्त हो जाते हैं। मक्खी–मच्छरों का भी कूड़ाघरों से गन्दगी एकत्रित कर संक्रमण फैलाने में बहुत बड़ा योगदान है। डेंगू बुखार इस तथ्य का प्रत्यक्ष प्रमाण है। हैजा, टी0बी0 डायरिया, हिपैटाईटिस जैसे रोग संक्रमित खाद्य पदार्थ, मल तथा संक्रमित जल से फैलते हैं इस प्रकार के संक्रमण फैलाने में कीडे–मकौडो एवं पशुओं की बहुत बड़ी भूमिका है। एक अस्पताल के आपरेशन थियेटर से जो कचरा निकलता है उसमें मूत्र की थैलियां, रक्त के वायल्स, रक्त मिश्रित बलगम तथा पस, माँस, त्वचा, मानव अंग, सिरिंज, दस्ताने, ग्लूकोस की बोतल, रूई के पैड्स, प्लास्टर्स, पट्टियां आदि शामिल है। उक्त कचरा सड़कों पर फैंकने से अनेक घातक बीमारियाँ जन्म लेती हैं। इनमें एड्स वाइरल, हिपेटाइटिस, तपेदिक, ब्रोन्काइटिस, गैस्ट्रोएन्ट्राइटिस, त्वचा रोग ज्ञानेन्द्रियों की सिरिंज का ज्ञान नहीं है। जीवन–रक्षक द्रव जो मरीज़ की नसों में प्रवेश कराया जा रहा है। उस बोतल के विषय में भी मरीज नहीं जान पाते कि वह कचरे से उठाई गई, पुनः प्रयुक्त हो रही है। इसका कारण है कि प्रत्येक नगर में प्राईवेट सर्जन शल्य चिकित्सा के पश्चात् कचरे को बिना नष्ट किये, कूड़े पर फिकवा देते हैं जिसके पुनः प्रयोग में लाये जाने वाले प्रकरण पकड़े जा चुके हैं। प्रायः देखा गया है कि अच्छी नयी दिखने वाली सिरिंजो को धोने के पश्चात् नये पैक में भरकर बेचा जाता है। जिन व्यक्तियों को ड्रग (नशा) लेने की गलत आदत पड़ जाती है, वे अस्पतालों के कूड़ेदान से प्रयुक्त सिरिंज एकत्रित करके प्रयोग करते हैं तथा अनेक प्रकार की बीमारियों से ग्रसित हो रहे हैं। थोक खरीदार दवाईयों की प्रयुक्त बोलते, सैलाइन बोतलें, रूई की पट्टियों तथा प्लास्टिक के खोल खरीदते हैं। आज भारत में 430 स्त्री–पुरूष एवं बच्चे हिपैटाईटिस बी से संक्रमित हैं। जिगर की घातक बीमारी एवं संक्रमित रक्त से स्वस्थ जन मृत्यु को प्राप्त हो रहे हैं, इसका मुख्य कारण रक्त की बोतलों एवं डिस्पोजेबिल सिरिंज का बेरोक टोक प्रयुक्त होना है।

अस्पतालों द्वारा उत्पन्न प्रदूषण की समस्या का निदान सम्भव है

यथा– सर्जिकल दस्ताने ऑपरेशन के पश्चात् फाड़ देने चाहिए। जलाने योग्य जैव–चिकित्सीय कचरे को जला देना चाहिए। डाइपोडर्मिक सुईयां एवं सिरिंज प्रयोग के बाद तुरन्त तोड़ देना चाहिए ताकि पुनः प्रयोग की समस्त क्रियायें ही समाप्त हो जायें। अस्पतालों में भस्मीकरण–संयंत्र (इनसिनैरेटर) की अनिवार्यता पर विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए। यह संयंत्र बस्ती से अथवा शहर से दूर स्थापित करें ताकि वायु प्रदूषण न हो। पर्यावरण को क्षति पहुँचाये बिना जैव–चिकित्सीय कचरे का निस्तारण होना चाहिए। रोगियों के मल–मूत्र, रक्त एवं बलगम को जाँच के पश्चात् नालियों में न बहाया जाये। शल्य–चिकित्सा में काटे गये अंगों माँस एवं त्वचा को अस्पताल के बाहर कूड़े पर न फेंका जाये। कचरे के निस्तारण में लगे कर्मचारियों को तकनीकी कुशलता का पूर्णरूपेण ज्ञान देकर परिपक्व कराया जाये। डिस्पोज़ेबिल सिरिंज की विश्वसनीयता के अभाव में शीशे की सिरिंज का प्रयोग आधा घण्टे पानी में खौलाने के बाद किया जाये। कचरे की प्रकृति के अनुसार उसके भौतिक प्रथकीकरण, संक्रमण मुक्त करना, जीवाणुओं का नाश करना, हानि रहित भस्मीकरण पर विशेष ध्यान दिया जाये। बच्चे के जन्म के समय निकली जरायु (Placonta) को खुले में न फेंका जाये वरन् मिट्टी में दबा दिया जाये। विशैला कचरा म्यूनिसिपल कूड़ेदानों में अथवा सड़कों पर डालने वालों पर कड़े दण्ड का प्रावधान होना चाहिए।

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

जनसंख्या वृद्धि से मानव का अस्तित्व को खतरा के सम्बन्ध में आस्ट्रेलिया के वैज्ञानिक Frank Fenner ने जनसंख्या विस्फोट के प्रभाव की भविष्यवाणी करते हुए अनेक तथ्यों पर प्रकाश डाला है।[1]

बढ़ती अनसंख्या की गम्भीर समस्या द्वारा प्रदूषण ब्याप्त होना चिन्ता का विषय बनता जा रहा है। बढ़ती जनसंख्या रूपी राक्षस का मुँह खुलता ही जा रहा है। बढ़ती जनसंख्या से उत्पन्न पर्यावरणीय समस्यायें निरन्तर बढ़ती जा रही है। यह समस्या पर्यावरण पर बोझ बनकर उसके अस्तित्व को मिटाने पर तुली हुई हैं। बढ़ती जनसंख्या का पर्यावरण से अटूट सम्बन्ध है। इस तथ्य को स्वीकार करना ही होगा। प्रकृति प्रदत्त संसाधन जैसे हवा, पानी, मिट्टी, ईंधन सीमित है। जनसंख्या वृद्धि भारतीय पर्यावरण के समूल विनाश के लिए खतरा बनी हुई है। औद्योगिकीकरण एवं शहरीकरण ने पर्यावरण को अपूर्णीय क्षति पहुँचायी है। जीव–जगत के लिए स्वच्छ पर्यावरण प्रकृति की बहुमूल्य देन है। यदि प्रदूषण नियंत्रित नहीं किया गया तो हमारी पृथ्वी एक दिन जन–समाज विहीन हो जायेगी। पर्यावरण के तीन शत्रु बताये गये हैं। बढ़ती जनसंख्या, गरीबी एवं प्रदूषण।

जल, वायु, कोयला, गैस, तेल, वृक्ष तथा अन्य संसाधनों का दोहन इस सीमा तक पहुँच गया है कि पूरे विश्व का पर्यावरण संतुलन चरमरा गया है। आज का मानव जीवन सुख–सुविधाओं से परिपूर्ण विकसित दिशा की ओर अग्रसर है। साथ ही मानव पर्यावरण को अप्रत्याशित हानि का ग्रास भी बनाता जा रहा है। सड़कों पर निरन्तर दौड़ते–भागते भारी वाहन, उद्योगों से निकलता विशैला धुआँ तथा कचरा, नदियों से बहती विश की धाराएँ, विशाक्त होना समुद्री तथा भूमिगत जल, बाँधों का निर्माण, पहाड़ों पर बढ़ता खनन, खेती तथा विकास के लिये कटते जंगल मानव समाज को विनाश के कगार पर खड़ा कर देने के लिए उतारू हैं। मानव ने चहुँ दिशा हस्तक्षेप करके पर्यावरण पर कहर ढ़ा रखा है। आधुनिक जीवन की परिस्थितियां तथा परिवेश प्रदूशण संतुलन की समस्या को बढ़ावा दे रहे हैं।

बढ़ती जनसंख्या की गम्भीर समस्या द्वारा प्रदूषण नियंत्रण का समाधान के लिए अच्छी बात यह है कि विगत वर्षों में जन चेतना एवं सक्रियता बढ़ी है। अभी तक आयोजित समस्त जनसंख्या सम्मेलनों के निष्कर्षों एवं नीतिगत फैसलों से विश्व के अनेक देशों ने जनसंख्या वृद्धि पर नियन्त्रण लाने का प्रयास किया है। इसके फलस्वरूप गत वर्षों में जनसंख्या वृद्धि की दर कुछ कम हुई है, जनसंख्या वृद्धि का निदान विश्व शिक्षा, कला प्रशिक्षण, कला वर्कशॉप जनसंख्या वृद्धि सम्बन्धी चित्र–पोस्टर प्रतियोगिताओं, महिला सशक्तिकरण, सूचना एवं तकनीकी की सुलभता जैसे प्रयासों एवं कार्यक्रमों द्वारा सम्भव है। वर्ष 1984 में एक तकनीकी सम्मेलन Cairo में आयोजित हुआ जिसमें जनसंख्या के मुद्दे को अन्तर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय एवं स्थानीय स्तरों पर विकास के समस्त कार्यक्रमों के निर्माण, क्रियान्वयन, निगरानी तथा मूल्यांकन का अभिन्न अंग बनाने का संकल्प लिया था।

पृथ्वी के तापमान में वृद्धि द्वारा पर्यावरण संतुलन का खतरा वैज्ञानिकों के लिए भी गम्भीर चिन्ता का विषय बना हुआ है। पर्यावरण की इस समस्या से सम्पूर्ण विश्व को भविष्य में होनी वाली घोर विनाशलीला का आभास हो गया है। दिन प्रतिदिन तापमान में वृद्धि हो रही है। मिट्टी का तेल, डीजल, पैट्रोल, लकड़ी, कोयले का जैनरेटरों, वाहनों, विद्युत केन्द्रों तथा विभिन्न उद्योगों में ईंधन के रूप में उपयोगितानुसार प्रयोग किया जाता है। उक्त ईंधन के दहन से अन्य विशाक्त गैंसों के अतिरिक्त कार्बन–डाइऑक्साइड का उत्सर्जन होता है। इस गैस का ग्लोबल–वार्मिंग से सीधा सम्बन्ध है। कार्बन–डाईऑक्साइड गैस बहुत ऊपर जाकर एक मोटी परत बना लेती है। सूर्य की किरणें और तेज इस मोटी परत को चीरकर पृथ्वी पर तो आ जाती हैं किन्तु पृथ्वी से परिवर्तित होकर इस परत के पार नहीं जा पाती। पृथ्वी के तापमान में वृद्धि का सबसे अधिक प्रभाव विश्व के पिघलने से पहाड़ों पर जल–प्रवाह में भयानक वृद्धि के कारण बाढ़ भयावह रूप ग्रहण कर लेती है। अंटार्कटिका, आर्कटिका क्षेत्र एवं ग्रीनलैण्ड महाद्वीप इस आपदा का शिकार हो चुके हैं। बाढ़ और सूखे की समस्या इस आपदा के परिणाम स्वरूप दृष्टिगोचर होती है। यह दोनों ही आपदायें जलीय एवं स्थलीय जीव–जन्तुओं को अत्याधिक हानि पहुँचाती है।

पृथ्वी के तापमान में वृद्धि जनित खतरे के समाधान हेतु स्कूटर, कार, बस, ट्रक, टैम्पों तथा अन्य स्वचालित वाहनों के चालकों को वाहन खड़े रहने पर इग्निशन स्विच बन्द कर देना चाहिए। इनका धुआँ कैंसरकारी होता है। माह में एक बार आवश्यक रूप से शुद्ध हवन सामग्री द्वारा हवन करना चाहिए ताकि सभी जन–समाज रोगमुक्त रह सकें। इसके अतिरिक्त पर्यावरण भी शुद्ध रहेगा। ओजोन परत को क्षति पहुँचाने वाले रसायनों का प्रयोग बन्द कर देना चाहिए। भूमिगत परमाणु विस्फोट पर्यावरण के शत्रु हैं। इन पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगाना आवश्यक है। प्रदेश शासन, प्रदूषण–मुक्त स्वच्छ ईंधन की व्यवस्था, वाहनों तथा जैनरेटरों में प्रयोग के लिए पहल करें। ऊर्जा स्रोतों में एल0पी0जी0, सी0एन0जी0 बायोडीजल तथा एल0एन0जी0 के प्रयोग को बढ़ावा देना चाहिए। इससे वायु प्रदूषण कम होता है। कार्बनडाइ–ऑक्साइड उत्सर्जन करने वाले ऊर्जा स्रोतों पर अंकुश लगायें ताकि पृथ्वी के तापमान में हो रही अप्रत्याशित वृद्धि रुक सके।

जनसंख्या वृद्धि के साथ कूड़े–करकट के ढ़ेर की वृद्धि भी निरन्तर मानव समाज की विकट समस्या बन गयी है। जिस राह से गुजरे नगर निगम के बड़े–बड़े कूड़ेदानों के आस–पास दूर–दूर तक कचरा फैला दिखाई देता है। कूड़ा बीनने वाले और सड़कों पर विचरण करने वाले पशु इस समस्या को और भी बढ़ा देते हैं। एक ढ़ेर पर पड़ा कचरा चारों तरफ फैला हुआ सड़कों पर भी पसरा नज़र आता है। यदि नगर–निगम की गाड़ी कचरा उठाने न आये तो रास्ते पर चलना–फिरना दूभर हो जाता है। ऐसे में यदि भारी

वर्षा हो जाये तो नालियाँ–नाले चौक हो जाते हैं तथा बीमारियों को तगड़ी दावत मिल जाती है। महामारी फैल जाती है। जनसंख्या वृद्धि एवं बढ़ती आबादी के साथ–साथ प्रत्येक शहर, गाँव में कूड़े–करकट के निस्तारण की गम्भीर समस्या है। नगर निगम की गाड़ियाँ कूड़ेदानों में से कूड़ा एकत्रित करके शहर के बाहर 5 से 10 कि0मी0 दूर सड़क के किनारे खाली पड़ी ज़मीन पर प्रतिदिन कूड़े के ढ़ेर लगाती है। ऐसी ज़मीन को ट्रैचिंग ग्राउन्ड कहते हैं। इस कूड़े में घरों, अस्पतालों, सब्जी मण्डियों, पौलीथीन आदि का कचरा मिला–जुला रहता है। यह कूड़ा जब सड़ने लगता है तब वातावरण में मीथेन, हाईड्रोजन, सल्फाइड, कार्बन डाइ–ऑक्साइड, नाईट्रोजन आदि गैसे दुर्गन्ध फैलाती हैं और हवा द्वारा यह दुर्गन्ध दूर–दूर तक पर्यावरण को प्रदूशित करती चली जाती है। जहाँ कूड़ा पड़ा हो और मच्छर–मक्खी न हों ऐसा असम्भव है अतः यही मच्छर मक्खी कूड़े पर बैठ, उड़कर, संक्रमण का संचार करते हैं।

कूड़े करकट की समस्या के समाधान हेतु– जब नगर निगम की गाड़ियाँ जिस स्थान से कूड़ा उठायें, तभी उनके पीछे झाड़ू लगाने वाले कर्मचारियों को भी मशक्कत करनी पड़ेगी क्योंकि झाड़ू लगाने वाले प्रातः काल ही झाड़ू लगाकर अपनी ड्यूटी पूरी कर लेते हैं उसके बाद नगर–निगम की गाड़ियां कूड़े, को लबालब भरती जब सड़कों से गुजरती हैं तो कचरा पीछे से गिरता हुआ चला जाता है और झाड़ू कर्मचारियों की मेहनत का सफाया कर जाता है। नगर–निगम का मात्र नियम बनाने से कार्य पूर्ण नहीं हो जाता। उसकी रखवाली भी करनी होगी। कूड़े– करकट का प्रयोग बिजली बनाने में देश में कुछ स्थानों पर किया जाने लगा है। लखनऊ, बरेली तथा अन्य शहरों में इस प्रकार की योजनाएँ विचाराधीन है। यदि यह प्रयोग सफल हुआ तो कूड़े से निज़ात मिल सकेगी तथा बिजली की कमी भी कुछ सीमा तक पूरी हो सकेगी। शासन को ऐसे उद्योगों को, जो कूड़े से बिजली बनाने को इच्छुक हों; कलात्मक कार्यों– प्रयासों द्वारा प्रोत्साहन देना चाहिए।

जलवायु परिवर्तन मानव– जनित समस्या

Edinburgh (Scotland), Melbaurne (Australia) तथा Canada की Victoria University के वैज्ञानिको द्वारा प्रकाशित शोध अध्ययन की रिपोर्ट में स्पष्ट किया गया है कि मानव की गतिविधियां ही Global Warning के लिए 95% तक जिम्मेदार हैं। प्राकृतिक बदलावों का जलवायु परिवर्तन का कारण मानने की संभावना केवल 5% है।[2] वैश्विक तापमान वृद्धि के अतिरिक्त, समुद्र की बढ़ती लवणीयता, आर्द्रता (humidity) में वृद्धि, वर्षा में उतार–चढ़ाव तथा आर्कटिका महासागर की बर्फ का दस वर्षों में छः लाख वर्ग कि0मी0 की दर से कम होना मानव की गतिविधियों का ही परिणाम है। Inter- governmental Panel on Climate Change भी मानव के प्रभाव को पूरी गंभीरता से नहीं समझ पाया है। जलवायु परिवर्तन विशेषज्ञ Peter Staut के अनुसार Global warming पर नियन्त्रण लाने के लिये मानवीय गतिविधियों को काबू में करना ज़रूरी है।[3] उनके अनुसार तापमान बढ़ने से समुद्रों से वाष्पीकरण की गति में वृद्धि हुई है।

Polythene को विखंडित करने वाले बैक्टीरिया की खोज– G.B. Pant Agriculture and Technology University, Pantnagar के पर्यावरण विज्ञान के वैज्ञानिकों को मिट्टी की उर्वरा शक्ति क्षीण करने वाले Polythene को नष्ट करने में सक्षम एक बैक्टीरिया को मिट्टी में से प्राप्त करने में सफलता मिल गई है।[4] यह बैक्टीरिया Polythene Polymer की मजबूत bonding को कमजोर कर देता है। इस बैक्टीरिया को विकसित कर National Research Development Council द्वारा पेटेंट भी करा लिया गया है।[5] इस बैक्टीरिया को विकसित करने में दस वर्ष का समय लगा है। सर्वाधिक हानिकारक LDP (Lowdensity- Polythene) को प्राकृतिक रूप में गलने में 25 से 30 वर्ष लग जाते हैं। यह बैक्टीरिया इसे तीन महीने में नष्ट कर देता है। यह बैक्टीरिया कम माइक्रोन की Virgin तथा recycled Polythene को गलाने की भी क्षमता रखता है। LDP (Lowdensity- Polythene) को गलाने वाला बैक्टीरिया भी खोज लिया गया है। Polythene विनाशक यह बैक्टीरिया कई बैक्टीरिया का समूह है। Polythene, methylene का Polymer (बहुलक) है। यह खाद्य पदार्थों में विशैले रसायन छोड़ता है तथा जलाने पर methane तथा dioxin गैस उत्सर्जित करता है। Polythene मिट्टी में 50 वर्षों तक बिना गले रह सकती है। यह पानी की नैसर्गिक (natural) स्वतः शोधन क्षमता (Self Purification Capacity) को कम कर देती है। इसको नष्ट करने में हवा, पानी व रसायन भी बेअसर रहते हैं।

वायु प्रदूषण में (Respirable Suspended Particulate Matter) की भूमिका–समस्या

वायु प्रदूषण फैलाने में RSPM (श्वसनीय निलंबित कणीय पदार्थ) मुख्यतः जिम्मेदार हैं। इन कणों का आकार 10 माइक्रोन से भी कम होता है। एक माईक्रोन 10^{-6} होता है। इनमें कार्बनिक तथा अकार्बनिक दोनों तत्वों का मिश्रण होता है। इनकी उपस्थिति बंद कमरे में अधिक होती है। प्लास्टिक का सामान, सिन्थैटिक रेशा, दरी, पदों, मॉनीटर, तकियों, गद्दों तथा घरेलू सामानों में यह कण अधिक उपस्थित होते हैं। यह कण वातावरण से रसायनिक क्रिया द्वारा तथा वाहनों के धुएँ के दहन में उत्पन्न होते हैं। ये कण रूमाल के अन्दर भी प्रवेश कर जाते हैं। सामान्यतः 4 से 5 Micron के कण नाक में प्रवेश नहीं कर पाते। धूल के कणों के साथ मिलकर यह कण नाक में प्रवेश कर जाते हैं। RSPM फेफड़ों में पहुँच कर उनके कार्य को प्रभावित करते हैं जिसके कारण ब्रोंकाइटिस, दमा, डिप्रैशन तथा एलर्जी जैसे रोग पनपते हैं।[6]

इस प्रकार उक्त पर्यावरण सम्बन्धी समस्याओं एवं निदान पर चर्चा करने के पश्चात् निष्कर्ष यह निकलता है कि जनसंख्या वृद्धि, बढ़ती आबादी पर्यावरण की सबसे बड़ी दुश्मन है। पर्यावरण सम्बन्धित कलात्मक सेमिनार, वर्कशॉप, गोष्ठी, स्कूल, कॉलेज स्तर पर चित्र–पोस्टर प्रतियोगिताओं आदि का आयोजन करके पर्यावरण संरक्षण के प्रति जन–मानस को जागरूक किया जा सकता है।

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

इसके लिए प्रयास प्रारम्भ भी हो चुके हैं और युद्ध स्तर पर तैयारियां भी हो रही हैं। पर्यावरण विषय को स्कूल–कॉलेजों के पाठ्यक्रम में भी स्थान मिला है। पर्यावरण का मूल कारण ज्ञात होने पर उसके उत्पन्न दुष्प्रभावों पर अंकुश लगाने के प्रयास किये जा सकते हैं। पर्यावरण जनित समस्यायें मानव जनित ही हैं। मानव समाज के जागरूक रहने एवं शासन द्वारा निर्गत आदेशों का पालन करते हुए, शासन का सहयोग करने पर ही पर्यावरण की समस्याओं का निदान सम्भव है।

संदर्भ

1. Sharma, Dr. B.K. Bulletin of Global Studies on Environment and Health. Pg. **09.**
2. शर्मा, डा0 बी0के0. पर्यावरण एवं स्वास्थ्य. पृष्ट **150.**
3. शर्मा, डा0 बी0के0. पर्यावरण एवं स्वास्थ्य. पृष्ट **150.**
4. शर्मा, डा0 बी0के0., वार्ष्णेय, के0ए0. स्वास्थ्य एवं पर्यावरण. पृष्ट **104.**
5. शर्मा, डा0 बी0के0., वार्ष्णेय, के0ए0. स्वास्थ्य एवं पर्यावरण. पृष्ट **104.**
6. शर्मा, डा0 बी0के0. पर्यावरण एवं स्वास्थ्य. पृष्ट **157.**

16

भारत में सतत् विकास– चुनौतियों और रणनीतियों का एक अध्ययन

डॉ० रविन्द्र भारद्वाज
असिस्टेंट प्रोफेसर
ईमेलः *mr.ravindra_Bhardwaj@rediffmail.com*

डॉ० विवेक उपाध्याय
असिस्टेंट प्रोफेसर, व्यवसाय प्रबन्धन एवं उद्यमशीलता
डॉ० राममनोहर लोहिया अवध यूनिवर्सिटी, अयोध्या, (उ०प्र०)

सारांश

सतत विकास वह विकास है जो भविष्य की पीढ़ियों की अपनी जरूरतों को पूरा करने की क्षमता से समझौता किए बिना वर्तमान की जरूरतों को पूरा करता है। भारत दुनिया की 16 प्रतिशत आबादी का समर्थन करते हुए दुनिया की 2.4 प्रतिशत भूमि का निर्माण करता है। जटिल परिणाम कई पीढ़ियों के लिए प्राकृतिक संसाधनों का गंभीर रूप से अस्थिर उपयोग है। वर्तमान मेंए भारत खतरनाक दरों पर तेजी से और व्यापक पर्यावरणीय गिरावट का सामना कर रहा है। देश की भूमि और प्राकृतिक संसाधनों पर विशाल जनसंख्या का समर्थन करने के लिए जबरदस्त दबाव डाला गया है। इस पत्र में हम सतत विकास के लिए रणनीतियों पर ध्यान केंद्रित करते हैं जो हमारी वर्तमान पीढ़ी के साथ–साथ आने वाली पीढ़ी के अस्तित्व के लिए आवश्यक हैं। सतत् विकास की अवधारणा को कई अलग–अलग तरीकों से व्याख्या किया जा सकता हैए लेकिन इसके मूल में विकास के लिए एक दृष्टिकोण है जो पर्यावरणए सामाजिक और आर्थिक सीमाओं के बारे में जागरूकता के खिलाफ अलग–अलगए और अक्सर प्रतिस्पर्धात्मक जरूरतों को संतुलित करता हैए जिसका हम एक समाज के रूप में सामना करते हैं। बहुत बारए व्यापक या भविष्य के प्रभावों पर पूरी तरह से विचार किए बिनाए विकास एक विशेष आवश्यकता से प्रेरित होता है। हम पहले से ही देख रहे हैं कि गैर–जिम्मेदार बैंकिंग के कारण बड़े पैमाने पर वित्तीय संकट से लेकर जीवाश्म ईंधन–आधारित ऊर्जा स्रोतों पर हमारी निर्भरता के परिणामस्वरूप वैश्विक जलवायु में परिवर्तन तकए इस तरह के दृष्टिकोण से नुकसान हो सकता है। हम जितने लंबे समय तक अस्थिर विकास का पीछा करते हैं, उसके परिणाम उतने ही लगातार और गंभीर होने की संभावना हैए यही कारण है कि हमें अभी कार्रवाई करने की आवश्यकता है।

परिचय

सतत विकास एक ऐसा मुहावरा है जिसे हम समय–समय पर भविष्य की हमारी आदर्श दृष्टि को रेखांकित करने के लिए सुनाते हैं– उन सभी समस्याओं से छुटकारा जो पृथ्वी के निवासी आज सामना करते हैं। प्राकृतिक संसाधनों की कमी। लिंग असमानता। धन का असमान वितरण। ये कुछ ही हैं लेकिन ये उन मुद्दों को सटीक रूप से दर्शाते हैं जिन्हें हम खत्म करने का प्रयास कर रहे हैं। हालांकि, सतत विकास शब्द की सर्वव्यापी प्रकृति और स्थिति की गंभीरता के कारण जिसे हल करने के लिए यह दिखता है, कई लोग इसे एक अमूर्त, अविश्वसनीय अवधारणा के रूप में मानते हैं जो आमतौर पर प्रदूषित महासागरों की चौंकाने वाली छवियों या निराशा की निराशा को ध्यान में रखते हैं। स्त्री के रूप में जन्म लेने के कारण उनके जीवन की स्थिति। फिर भी, इस क्षेत्र और इसकी चुनौतियों की गहन समझ हमारे वर्तमान परिवेश में काफी आवश्यक है और अधिक जागरूक और परोपकारी जीवन जीने में मदद कर सकती है।

पिछले कुछ दशकों के दौरान, यह स्पष्ट हो गया है कि अब हम पर्यावरण से अलगाव में सामाजिक आर्थिक विकास के बारे में नहीं सोच सकते। राष्ट्रों के बीच बढ़ती अन्योन्याश्रितता के साथ–साथ हमारे सामने आने वाले मुद्दों की प्रकृति के लिए आवश्यक है कि देश विकास के एक सतत पाठ्यक्रम को तैयार करने के लिए एक साथ आएं। जून 1992 में रियो डी जनेरियो में आयोजित पर्यावरण और विकास पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन (न्छब्क्), एक मील का पत्थर घटना थी, जिसने वैश्विक समुदाय के रूप में हमारे सामने आने वाली पर्यावरण और विकास समस्याओं पर दुनिया का ध्यान प्रभावी रूप से केंद्रित किया। शिखर सम्मेलन ने दुनिया भर की सरकारों, अंतरराष्ट्रीय एजेंसियों के प्रतिनिधियों और गैर–सरकारी संगठनों को सतत विकास के दीर्घकालिक लक्ष्यों को प्राप्त

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

करने के लिए दुनिया को तैयार करने के उद्देश्य से एक साथ लाया। सम्मेलन में अपनाया गया एजेंडा 21, वैश्विक सहमति और राजनीतिक प्रतिबद्धता का प्रतिनिधित्व करता है। सामाजिक–आर्थिक विकास और पर्यावरण सहयोग पर उच्चतम स्तर पर। इस परिवर्तन का नेतृत्व करने की सबसे बड़ी जिम्मेदारी राष्ट्रीय सरकारों पर रखी गई थी। प्रत्येक सरकार से देश की विशेष स्थिति, क्षमता और प्राथमिकताओं के अनुरूप सतत विकास के लिए राष्ट्रीय रणनीतियों, योजनाओं और नीतियों को डिजाइन करने की अपेक्षा की गई थी। यह अंतरराष्ट्रीय संगठनों, व्यापार, क्षेत्रीय, राज्य और स्थानीय सरकारों, गैर–सरकारी संगठनों और नागरिक समूहों के साथ साझेदारी में किया जाना था। एजेंडा ने वैश्विक पर्यावरणीय समस्याओं से निपटने और सतत विकास में तेजी लाने के लिए कार्यों की बढ़ती लागत का समर्थन करने के लिए विकासशील देशों के लिए नई सहायता की आवश्यकता को भी मान्यता दी।

UNCED के बाद से, सरकारों और अंतर्राष्ट्रीय संगठनों द्वारा सतत विकास के लिए नई नीतियों और रणनीतियों के माध्यम से या मौजूदा नीतियों और योजनाओं को अपनाने के माध्यम से पर्यावरणीय, आर्थिक और सामाजिक उद्देश्यों को निर्णय लेने में एकीकृत करने के लिए व्यापक प्रयास किए गए हैं। एक राष्ट्र के रूप में अपने लोगों के जीवन की गुणवत्ता को बढ़ाने के लिए प्रतिबद्ध है, और सतत विकास की दिशा में अंतर्राष्ट्रीय गठबंधन के साथ सक्रिय रूप से शामिल है, शिखर सम्मेलन ने भारत को उन विकासात्मक सिद्धांतों के प्रति खुद को फिर से प्रतिबद्ध करने का अवसर प्रदान किया, जिन्होंने राष्ट्र को लंबे समय तक निर्देशित किया है। ये सिद्धांत देश की नियोजन प्रक्रिया में अंतर्निहित हैं और इसलिए सतत विकास के लिए एक अलग राष्ट्रीय रणनीति की आवश्यकता महसूस नहीं की गई।

पर्यावरणीय विचार भारतीय संस्कृति का एक अभिन्न अंग रहे हैं और नियोजन प्रक्रिया में तेजी से एकीकृत हुए हैं। यह हमारे संवैधानिक, विधायी और नीतिगत ढांचे के साथ–साथ अंतर्राष्ट्रीय प्रतिबद्धताओं में भी परिलक्षित होता है। सरकार मानती है कि इन प्रशंसनीय उद्देश्यों पर चिंता का बादल छा गया है। भारत सरकार इन चुनौतियों से अवगत है। एक उच्च और सतत आर्थिक विकास हासिल करने की कोशिश करते हुए, यह महसूस करता है कि एक अस्थिर सामाजिक और पर्यावरणीय नींव पर आर्थिक विकास को बनाए नहीं रखा जा सकता है। राष्ट्रीय दृष्टिकोण मानव कल्याण की वृद्धि को प्राथमिकता देता है जिसमें न केवल भोजन की खपत और अन्य उपभोक्ता वस्तुओं का पर्याप्त स्तर शामिल है बल्कि बुनियादी सामाजिक सेवाओं विशेष रूप से शिक्षा, स्वास्थ्य, पेयजल और बुनियादी स्वच्छता तक पहुंच भी शामिल है। यह सभी व्यक्तियों और समूहों के लिए आर्थिक और सामाजिक अवसरों के विस्तार और निर्णय लेने में व्यापक भागीदारी को भी प्रमुखता प्रदान करता है। प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण और प्रबंधन विकास रणनीति का एक महत्वपूर्ण फोकस है।

मूल रूप से, सतत विकास एक दीर्घकालिक समाधान है कि कैसे हम पर्यावरण को नुकसान पहुंचाए बिना भविष्य में अपनी अनिश्चितकालीन प्रगति की योजना बनाते हैं ताकि आने वाली पीढ़ियों के लिए एक सुरक्षित आवास की गारंटी दी जा सके, जो अपनी अर्थव्यवस्थाओं, समाजों और देखभाल को विकसित करना जारी रखेंगे। इसी तरह के आदर्श को ध्यान में रखते हुए पर्यावरण के लिए। यह दूसरों के अवसरों को नुकसान पहुंचाए बिना हमारी जरूरतों को पूरा करता है। अवधारणा पर्यावरण, सामाजिक और आर्थिक विकास जैसे मामलों के व्यापक दायरे को शामिल करती है जो हमारे जीवन में इसके महत्व को साबित करना जारी रखता है क्योंकि यह उनके सभी पहलुओं को प्रभावित करता है। संयुक्त राष्ट्र ने भविष्य और इष्टतम सचेत विकास के लिए दिशा–निर्देशों के रूप में कार्य करने के लिए कई सतत विकास लक्ष्यों और लक्ष्यों को निर्धारित किया है।

सतत विकास की चुनौतियाँ

सतत विकास की चुनौतियाँ और उसके परिणाम स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहे हैं। यदि हम देखना नहीं चाहते हैं तो यह केवल अदृश्य है। सतत विकास के लिए जनसंख्या एक बड़ी चुनौती है। 21वीं सदी की शुरुआत में पृथ्वी की आबादी 6 अरब तक पहुंच गई, और अगले 50 वर्षों में 10 से 11 अरब के बीच स्तर कम होने की उम्मीद है। बुनियादी चुनौतियां पेयजल और खाद्य उत्पादन के लिए कृशि योग्य भूमि की कमी होगी। गरीबी एक और बड़ी चुनौती है क्योंकि दुनिया की लगभग 25 प्रतिशत आबादी प्रति दिन 1 अमरीकी डालर से कम पर रहती है।

कुपोषण से पीड़ित लोगों की संख्या के साथ असमानता सतत विकास के लिए एक गंभीर बाधा बनी हुई है। पिछले 30 वर्षों में खाद्य कीमतों में गिरावट ने खपत में वृद्धि में योगदान दिया हो सकता है, लेकिन दुनिया के कई क्षेत्रों में कृषि योग्य इलाके सीमित हैं, और नए के निर्माण से शेष पारिस्थितिक तंत्र पर विनाशकारी प्रभाव पड़ता है। भविष्य में खाद्य उत्पादन का विकास प्रकृति की कीमत पर नहीं होना चाहिए। 2010 तक जैव विविधता के नुकसान के मौजूदा कदम को काफी धीमा कर दिया जाना चाहिए। दुनिया के कई क्षेत्रों में पीने के पानी की कमी सतत विकास के लिए एक प्रमुख बाधा है। वर्ष 2025। मानव स्वास्थ्य भी सतत विकास में बाधक है। कई मामलों में, विकासशील देशों में मौतों को टाला जा सकता है। मानवता को आने वाले वर्षों में बीमारियों के खिलाफ संघर्ष के लिए अधिक ध्यान और धन देना चाहिए। आसन्न कार्य 2015 तक पांच वर्ष से कम आयु के बच्चों में मृत्यु दर को दो–तिहाई और युवा माताओं की मृत्यु दर को 75 प्रतिशत तक कम करना है।

सतत् विकास के लिए ऊर्जा की खपत एक बड़ी चुनौती है। ऊर्जा के सभी रूपों की खपत लगातार बढ़ रही है। विश्वसनीय,

टिकाऊ और पर्यावरण के अनुकूल ऊर्जा स्रोतों और सेवाओं तक पहुंच में सुधार, साथ ही ऊर्जा प्रभावशीलता के लिए राष्ट्रीय कार्यक्रमों का निर्माण, अगले 10–15 वर्षों के लिए एक विशेष रूप से महत्वपूर्ण कार्य है। सतत् विकास के लिए वनों की कटाई विशेष रूप से बड़ी चुनौती है। दुनिया के जंगल मुख्य रूप से कृषि के विस्तार के कारण कम हो रहे हैं। आने वाले वर्षों में, वनों की वसूली और प्रबंधन में सुधार अत्यंत महत्वपूर्ण होगा।

पेट्रोल की खपत लगातार बढ़ रही है। शिखर सम्मेलन ने विकसित देशों में ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन मानदंडों पर एक समझौते पर पहुंचने के लिए क्योटो प्रोटोकॉल के निर्णयों को महसूस करने की आवश्यकता पर बल दिया।

सतत विकास के लिए रणनीतियाँ

सतत् विकास का वैचारिक अर्थ विकास प्रक्रिया में बाधा उत्पन्न करना नहीं है बल्कि यह अवधारणा है कि हम अपने संसाधनों का उपयोग कैसे करें ताकि वर्तमान और भावी पीढ़ी के बीच एक अंतर–संबंध स्थापित किया जा सके। सतत विकास प्राप्त करने के लिए कई संभावित रणनीतियाँ उपयोगी हो सकती हैं। इसमें ज्यादातर स्थानीय संसाधन और स्थानीय श्रम शामिल हैं।

(i) स्वदेशी प्रौद्योगिकियां अधिक उपयोगी, लागत प्रभावी और टिकाऊ हैं। उस क्षेत्र की प्राकृतिक परिस्थितियों को उसके घटकों के रूप में उपयोग करते हुए प्रकृति को अक्सर एक मॉडल के रूप में लिया जाता है। इस अवधारणा को प्रकृति के साथ डिजाइन के रूप में जाना जाता है। प्रौद्योगिकी को संसाधनों का कम उपयोग करना चाहिए और न्यूनतम अपशिष्ट का उत्पादन करना चाहिए।

(ii) कम करना, पुनः उपयोग और पुनर्चक्रण दृष्टिकोण 3–आर दृष्टिकोण संसाधनों के उपयोग को कम करने की वकालत करता है, उन्हें बार–बार उपयोग करने के बजाय इसे अपशिष्ट धारा में पारित करने और सामग्रियों को पुनर्चक्रित करने के लिए स्थिरता के लक्ष्यों को प्राप्त करने में एक लंबा रास्ता तय करता है। यह हमारे संसाधनों पर दबाव कम करने के साथ–साथ अपशिष्ट उत्पादन और प्रदूषण को कम करता है।

(iii) पर्यावरण शिक्षा और जागरूकता को बढ़ावा देना पर्यावरण शिक्षा को सभी सीखने की प्रक्रिया का केंद्र बनाने से हमारी पृथ्वी और पर्यावरण के प्रति लोगों की सोच और दृष्टिकोण को बदलने में बहुत मदद मिलेगी। स्कूल स्तर से ही विषय का परिचय देने से छोटे बच्चों में पृथ्वी से अपनेपन की भावना पैदा होगी। 'पृथ्वी की सोच' धीरे–धीरे हमारी सोच और कार्य में शामिल हो जाएगी जो हमारी जीवन शैली को टिकाऊ बनाने में बहुत मदद करेगी।

(iv) क्षमता के अनुसार संसाधनों का उपयोग कोई भी प्रणाली दीर्घकालिक आधार पर सीमित संख्या में जीवों को बनाए रख सकती है जो ज्ञात है एसिट्स वहन क्षमता। मनुष्यों के मामले में, वहन क्षमता की अवधारणा और भी जटिल हो जाती है। ऐसा इसलिए है क्योंकि अन्य जानवरों के विपरीत, मनुष्य को न केवल जीने के लिए भोजन की आवश्यकता होती है, बल्कि जीवन की गुणवत्ता को बनाए रखने के लिए बहुत सी अन्य चीजों की आवश्यकता होती है। एक प्रणाली की स्थिरता काफी हद तक प्रणाली की वहन क्षमता पर निर्भर करती है। स्थिरता प्राप्त करने के लिए सिस्टम के उपरोक्त दो गुणों के आधार पर संसाधनों का उपयोग करना बहुत महत्वपूर्ण है। उपभोग पुनर्जनन से अधिक नहीं होना चाहिए और व्यवस्था की सहन क्षमता से परे परिवर्तन नहीं होने देना चाहिए।

(v) सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक आयामों सहित जीवन की गुणवत्ता में सुधार विकास को केवल पहले से ही संपन्न लोगों के एक वर्ग पर ध्यान केंद्रित नहीं करना चाहिए। बल्कि इसमें अमीरों और गरीबों के बीच लाभों का बंटवारा शामिल होना चाहिए। आदिवासी, जातीय लोगों और उनकी सांस्कृतिक विरासत को भी संरक्षित किया जाना चाहिए। नीति और व्यवहार में मजबूत सामुदायिक भागीदारी होनी चाहिए। जनसंख्या वृद्धि को स्थिर किया जाना चाहिए। सरकार द्वारा उठाए गए कदम भारत ने जलवायु परिवर्तन की चुनौती से निपटने के लिए अपनी रणनीति की रूपरेखा तैयार करने के लिए 30 जून, 2008 को जलवायु परिवर्तन पर अपनी राष्ट्रीय कार्य योजना (एनएपीसीसी) जारी की। राष्ट्रीय कार्य योजना ऐसी रणनीति की वकालत करती है जो पहले, जलवायु परिवर्तन के अनुकूलन को बढ़ावा देती है और दूसरी, भारत के विकास पथ की पारिस्थितिक स्थिरता को और बढ़ाती है। भारत की राष्ट्रीय कार्य योजना इस बात पर जोर देती है कि भारत के अधिकांश लोगों के जीवन स्तर को बढ़ाने और जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के प्रति उनकी भेद्यता को कम करने के लिए उच्च विकास दर को बनाए रखना आवश्यक है। तदनुसार, कार्य योजना उन उपायों की पहचान करती है जो भारत के सतत विकास के उद्देश्यों को बढ़ावा देते हैं और साथ ही जलवायु परिवर्तन को संबोधित करने के लिए लाभ भी देते हैं। आठ राष्ट्रीय मिशन हैं जो बहु–आयामी दीर्घकालिक रणनीति का प्रतिनिधित्व करते हुए राष्ट्रीय कार्य योजना के मूल का निर्माण करते हैं। इन मिशनों को नए तैयार किए गए कार्यक्रमों के साथ चल रहे कई कार्यक्रमों को मिलाकर बनाया गया है। राष्ट्रीय सौर मिशन का दोहरा उद्देश्य है– भारत की दीर्घकालिक ऊर्जा सुरक्षा के साथ–साथ इसकी पारिस्थितिक सुरक्षा में योगदान करना। हम तेजी से घटते जीवाश्म ईंधन संसाधनों की दुनिया में रह रहे हैं और तेल, गैस और कोयले जैसे पारंपरिक ऊर्जा संसाधनों तक पहुंच तेजी से बाधित होती जा रही है। नवीकरणीय ऊर्जा

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

का तेजी से विकास और परिनियोजन इस संदर्भ में अनिवार्य है और देश भर में उच्च सौर विकिरण को देखते हुए सौर ऊर्जा दीर्घकालिक स्थायी समाधान प्रदान करती है।

निष्कर्ष

सतत विकास एक दृष्टि और सोचने और कार्य करने का एक तरीका है ताकि हम अपनी भावी पीढ़ी के लिए संसाधनों और पर्यावरण को सुरक्षित कर सकें। यह केवल नीतियों द्वारा नहीं लाया जाएगा– इसे समाज द्वारा बड़े पैमाने पर एक सिद्धांत के रूप में लिया जाना चाहिए जो प्रत्येक नागरिक को हर दिन कई विकल्पों का मार्गदर्शन करता है, साथ ही बड़े राजनीतिक और आर्थिक फैसले जो कई लोगों को प्रभावित करते हैं। यह स्पष्ट है कि पर्यावरण क्षरण की सबसे बड़ी कीमत उन पीढ़ियों को चुकानी पड़ती है जो अभी पैदा नहीं हुई हैं। वर्तमान पीढ़ियों के संबंध में भावी पीढ़ियां वंचित हैं क्योंकि वे जीवन की एक खराब गुणवत्ता प्राप्त कर सकते हैं, वर्तमान पीढ़ी के बीच कोई आवाज और प्रतिनिधित्व नहीं होने में संरचनात्मक कमजोरी की स्थिति साझा कर सकते हैं और इसलिए उनके हितों को अक्सर वर्तमान निर्णयों और नियोजन में उपेक्षित किया जाता है जबकि यह बहुत आवश्यक है हम अपनी पीढ़ी के बारे में सोचते हैं। हम केवल सतत विकास में सुधार कर सकते हैं जब यह नागरिकों और हितधारकों को शामिल करने पर जोर देगा। अंततः, दृष्टि तभी वास्तविकता बनेगी जब हर कोई एक ऐसी दुनिया में योगदान देगा जहां आर्थिक स्वतंत्रता, सामाजिक न्याय और पर्यावरण संरक्षण साथ–साथ चलते हैं, जिससे हमारी अपनी और आने वाली पीढ़ियों को अब से बेहतर बनाया जा सके।

पिछले कुछ वर्षों में, सतत् विकास नवीनतम विकास जुमले के रूप में उभरा है। गैर–सरकारी और साथ ही सरकारी संगठनों की एक विस्तृत श्रृंखला ने इसे विकास के नए प्रतिमान के रूप में अपनाया है। सतत् विकास की अवधारणा के इर्द–गिर्द उभरे साहित्य की समीक्षा, हालांकि, इसकी व्याख्या में निरंतरता की कमी को इंगित करती है। अधिक महत्वपूर्ण, जबकि अवधारणा की सर्वव्यापी प्रकृति इसे राजनीतिक ताकत देती है, एसडी सोच की मुख्यधारा द्वारा इसके वर्तमान सूत्रीकरण में महत्वपूर्ण कमजोरियां हैं। इनमें गरीबी और पर्यावरणीय गिरावट की समस्याओं की अधूरी धारणा, और आर्थिक विकास की भूमिका और स्थिरता और भागीदारी की अवधारणाओं के बारे में भ्रम शामिल है। कैसे ये कमजोरियां नीति निर्माण में अपर्याप्तता और अंतर्विरोधों को जन्म दे सकती हैं, यह अंतर्राष्ट्रीय व्यापार, कृषि और वानिकी के संदर्भ में प्रदर्शित किया गया है। यह सुझाव दिया जाता है कि यदि एसडी को मौलिक प्रभाव डालना है, तो बौद्धिक स्पष्टता और कठोरता के पक्ष में राजनीतिक रूप से समीचीन अस्पष्टता को छोड़ना होगा।

संदर्भ

1. http://www.fsdinternational.org/country/india/envissues.
2. http://www.academia.edu/1082298/Strategies_for_Sustainable_Development_in_India_ With_ Special_Reference_to_Future_Generation_.
3. http://www.moef.nic.in/divisions/ic/wssd/doc2/ch1.html.
4. http://www.yourarticlelibrary.com/environment/5-important-measures-for-sustainabledevelopment/9912/.
5. http://www.huffingtonpost.com/entry/sustainable-developmentindia_b_5602482.html?section=india.
6. https://india.gov.in/people-groups/community/environmentalists/combating-climatechange-and-working-towards-sustainable-development.
7. http://focusglobalreporter.com/article7.asp.

17

रेखना मेरी जान : ग्लोबल वार्मिंग में प्रेम की अनूठी दास्तान

प्रो० सीमा अग्रवाल
प्रभारी हिंदी विभाग
गोकुलदास हिन्दू गर्ल्स कॉलेज, मुरादाबाद (उ0प्र0)
ईमेलः *92seemaagrawal@gmail.com*

'रेखना मेरी जान' वैश्विक मुद्दे 'ग्लोबल वार्मिंग' पर हिंदी में लिखा गया अनूठे नाम वाला एक अद्भुत और विरला उपन्यास, जिसमें मुहब्बत की एक ऐसी कहानी रची गयी है, जो शायद पहले कभी नहीं कही गयी। प्रेम की एक ऐसी दास्तान जो सहृदय के भीतरी कोमल संवेदनों को जाग्रत कर उन्हें भी प्रेम–रस में सराबोर कर दे। एक ऐसी सशक्त प्रेम गाथा जो इसे आत्मसात करने वाले के मन में हर चुनौती से मुकाबला करने का जज्बा भर दे।

सामान्यतः कहा जाता है कि साहित्य समाज का दर्पण है। समाज में जो कुछ घटित होता है, उसकी प्रतिच्छाया ही हमें साहित्य में नजर आती है। लेकिन साहित्य केवल इतना भर ही नहीं है। वह केवल समाज का यथावत् चित्र ही हमारे सामने नहीं रखता, अपितु वह तो अतीत से गुजरता हुआ वर्तमान का आकलन करता हुआ भविष्य के गर्भ में भी झाँकने की सामर्थ्य रखता है। इस अर्थ में साहित्य–दर्पण सामान्य दर्पण से कहीं आगे एकदम पृथक् और विशिष्ट है। अक्सर हम लोगों को यह भी कहते सुनते हैं कि समाज की स्थिति में सुधार या परिवर्तन लाना साहित्य का कार्य नहीं है। वह सिर्फ यथार्थ वस्तुस्थिति को हमारे सामने प्रस्तुत भर कर सकता है, राह दिखाना या दिशा–निर्देश करना उसका कार्य नहीं। लेकिन ऐसा नहीं है। हम–आप सभी जानते हैं कि दुनिया भर में कितने ही ऐसे कालजयी ग्रंथ हैं, जो अपनी कथाओं और उपदेशों के माध्यम से भटके हुओं को सही राह दिखा रहे हैं। फिर हम ऐसा क्यों मान लेते हैं कि आज साहित्य में ऐसा कुछ नहीं है या वह ऐसा कुछ नहीं कर सकता। इस संबंध में आलोच्य उपन्यास के प्रणेता रत्नेश्वर कुमार सिंह का यह कथन सर्वथा सटीक एवं ध्यातव्य है कि ''आज का समय और परिवेश दोनों बदला है। हमारे सामने यह चुनौती है कि 18 से 28 साल के युवाओं की दृष्टि बहुत वैज्ञानिक हो गयी है। वे हमसे बहुत आगे निकल गये हैं। उन्हें थामने के लिए हमारे पास वैज्ञानिक शैली वाले शब्द और भाषा का अभाव है। ऐसे में आगे की पीढ़ी हमें क्यों पढ़ना चाहेगी ? हमने प्रकृति का दोहन जिस तरह से किया, उसके लिए स्वयं को न ही जिम्मेदार बताया और न ही चेताया। साहित्य और उसमें भी कथा–कहानी ही वह माध्यम है, जिसके रास्ते हम लोगों को बहुत प्यार से चेतावनी भी देते हैं और समझाते भी हैं। उनके जीवन के प्रसंगों के माध्यम से उन्हें उत्प्रेरित करते हैं।''[1]

सामाजिक गतिविधियों के साथ विज्ञान एवं जलवायु से जुड़े विविध मसलों पर साहित्यिक लेखन करने वाले बहुचर्चित उपन्यासकार रत्नेश्वर कुमार सिंह का 2017 में ब्लूवर्ड से प्रकाशित उपन्यास 'रेखना मेरी जान' वैज्ञानिक पृष्ठभूमि पर आधारित जल प्रलय के बीच प्रकृति के भयावह अट्टहास के साथ मानव निर्मित सभी रेखनाओं को पार करते हुए प्रेम कथा को आगे लेकर बढ़ने वाला एक अभूतपूर्व उपन्यास है। इसमें भविष्य के सवालों से टकराव हैं। ग्लोबल वार्मिंग जैसे ज्वलंत विषय पर केंद्रित इस उपन्यास में मुख्य कथानक के समानांतर एक प्रेम कथा, सांप्रदायिक समरसता और विद्वेष की छोटी–छोटी कथाएँ भी प्रकारांतर से चलती रहती हैं। यह वस्तुतः अपने समय से आगे की कहानी है। हम जानते हैं कि ग्लोबल वार्मिंग की समस्या आज पूरे विश्व के लिए चिंता का विषय बनी हुई है। रत्नेश्वर ने इसी समस्या की भावी विकरालता को भाँपते हुए उससे जन सामान्य को आगाह करने के उद्देश्य से ही इसे अपने कथानक का आधार बनाया है। हिंदी साहित्य के लिए यह अपने आप में एक नया विषय है। इसमें कोई संदेह नहीं कि हिंदी साहित्य में इस प्रकार के विषय पर, इतने तथ्यपरक और रोचक ढंग से कोई कथा साहित्य अब तक नहीं रचा गया है।

'ग्लोबल वार्मिंग में प्रेम' शीर्षक से लिखी उपन्यास की भूमिका में उपन्यासकार स्वीकार करते हैं कि– ''अपने पराए के

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

द्वन्द्व के बीच ही हमने अपनी पूरी जिंदगी गुजार दी और अपनी नयी पौध को भी इसी रक्त से सींचा। यही वजह है कि आज हम अनगिनत रेखनाओं के निर्माण के साथ सुखी होने का भ्रम पाले हुए हैं। गाँव, समाज, राज्य, देश, जाति, मजहब, रंग, भाषा, लिंग और न जाने कितनी रेखनाएँ खींचकर हम अपने अस्तित्व को स्थायित्व प्रदान करने का आभा–मंडल तैयार करते हैं। हम इन्हीं रेखनाओं के जरिए अपनी पहचान को पुख्ता करने की कोशिश करते हैं। हमने अपने इस साम्राज्य को बनाए रखने के लिए सबसे सहज उपाय ढूँढा– अपनी–अपनी रेखनाओं का निर्माण, जिसे अपने–अपने क्षेत्र–रेखनाओं के हिसाब से एक सामाजिक नीति बनाकर स्वीकार कर लिया गया। इस निजाम को कायम रखने की आपाधापी में हम यह भूल गए कि असली सत्ता तो प्रकृति के हाथों में है। मोह में लिप्त यह भी भूल गए कि हम प्रकृति की एक इकाई होने के कारण पूरी तरह उस पर आश्रित हैं।''[2] उपन्यास लेखन के मुख्य उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए या उसकी भूमिका बाँधते हुए रत्नेश्वर आगे कहते हैं कि ''प्रकृति का अपना नियम है और उसे उसके नियम पर चलने से कोई रोक नहीं सकता। वह अपने नियमों के अनुसार जल और थल को तो बदल ही सकती है, पृथ्वी सहित पूरे जीव–जन्तु के आकार–प्रकार का रंग–रूप भी बदल सकती है।''[3] इस प्रकार लेखक ने प्रारंभ में ही स्पष्ट कर दिया है कि मानव कितना ही ताकतवर क्यों न हो जाए लेकिन प्रकृति के सामने उसका अस्तित्व नगण्य है, स्वयं को विशिष्ट साबित करने के लिए वह चाहे कितनी ही रेखनाओं का निर्माण कर ले लेकिन प्रकृति को वह कभी वश में नहीं कर पाएगा। उपन्यास के उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए लेखक आगे कहता है कि ''जिस दिन आपके हृदय से विविध रेखनाएँ टूटती नजर आएँ, तो समझ लीजिए कि आपको सच्चा प्रेम हो गया है और आपने प्रकृति–सृष्टि से एका स्थापित कर लिया है। इसी थीम को केंद्र में रखकर मैंने इस उपन्यास की परिकल्पना की। इस समय पूरा विश्व ग्लोबल वार्मिंग की भयावह समस्या की ओर बढ़ रहा है। इसी ज्वलंत मुद्दे के साथ मैंने एक प्रेम कथा का ताना–बाना बुना।''[4] इस प्रकार लेखक ने उपन्यास लेखन के उद्देश्य को स्वतः ही स्पष्ट कर दिया है और उपन्यास को आद्योपांत पढ़ने के उपरांत हम पाते भी हैं कि लेखक आज विश्व भर में व्याप्त ग्लोबल वार्मिंग की भयावह विभीषिका और उसके आगामी दुष्परिणामों को उकेरने में काफी हद तक सफल भी हुआ है। रत्नेश्वर द्वारा रचित 'रेखना मेरी जान' एक ऐसा उपन्यास है, जिसमें बांग्ला देश की भौगौलिकी और पारिस्थितिकी स्थिति के साथ वहाँ के हिन्दू–मुस्लिम संप्रदाय में कायम सामाजिक रिश्ते का भी विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। विनोद अनुपम के शब्दों में कहें तो ''विभाजन और राष्ट्रीय सीमाओं को लेकर हिन्दी–उर्दू में कई उपन्यास और कई कहानियाँ लिखी गयी हैं। 'रेखना मेरी जान' इस सवाल को एकदम नए धरातल पर, नयी संवेदना के साथ देखने की कोशिश करती है। यहाँ सीमाएँ राजनीतिक नहीं, पारिस्थितिकी विमर्श का विषय बनती हैं। यह उपन्यास हमें उस खतरे की ओर भी सचेत करता है, जब पर्यावरण असंतुलन के कारण एक बार फिर पृथ्वी के अस्तित्व पर संकट मंडराने लगा है। इस उपन्यास की पृष्ठभूमि संप्रति भले ही काल्पनिक दिख रही हो, वैज्ञानिक तथ्य इसके यथार्थ होने की संभावना से इन्कार नहीं करते। यह वर्तमान नहीं, भविष्य के सवालों से टकराती है।''[5] धीरेंद्र अस्थाना इस उपन्यास के विषय में अपना मत कुछ इस प्रकार दर्ज करते हैं–''यह उपन्यास एक ऐसी विराट कल्पना सृजित करता है, जिसमें भविष्य का भय आदमकद से भी बड़ा होता चला जाता है। यह भविष्य के विलक्षण और सिहरा देने वाले अनुभवों की यात्रा पर ले जाने वाले क्षणों को जुटाने वाला महत्वपूर्ण उपन्यास बन गया है। मूलरूप से यह उपन्यास ग्लोबल वार्मिंग से पैदा होने वाले भयावह दुष्परिणामों पर खुद को फोकस करता है।''[6]

अब बात करते हैं आलोच्य उपन्यास के शीर्षक की। लेखक ने इसे नाम दिया है– 'रेखना मेरी जान' जो प्रथम दृष्टया मन में कई सवाल पैदा करता है। शीर्षक समझ से परे और थोड़ा हल्का सा जान पड़ता है। पढ़ते ही मन में प्रश्न उठता है कि ग्लोबल वार्मिंग जैसे गंभीर विषय के लेखन का प्रेम के हल्केपन को ध्वनित करता हुआ यह नाम आखिरकार रचनाकार से क्या सोचकर चुना? लेकिन नहीं, शीर्षक का वह अर्थ नहीं जैसा कि हम और आप विषय की गहराई तक पहुँचे बिना ही सोच लेते हैं। इससे इतर यह अपने आप में बहुत उदात्त और गूढ़ अर्थ समेटे हुए है। आज की चर्चित लेखिका गीता श्री ने भी रेखना मेरी जान' के शीर्षक को लेकर कुछ इसी तरह की टिप्पणी की है। वे कहती हैं कि– ''इस उपन्यास के नाम को लेकर मुझे बहुत भ्रम था और अटपटा भी लग रहा था। 'रेखना' तक तो ठीक था लेकिन उसके साथ 'मेरी जान' जुड़कर उसे हल्का बना रहा था।.. बार–बार लगता था–रत्नेश्वर जी उपन्यास के नाम पर पुनर्विचार कर लेते तो बेहतर होता।.. मुझे शीर्षक के पीछे का राज जानना था। ज्यों–ज्यों गहरे उतरती गयी.. चौंकती गयी। ओह! तो यह वजह थी! तब तो इससे बेहतर कोई और नाम इस उपन्यास का हो ही नहीं सकता था। रेखना. मेरी जान!!''

हम देखते हैं कि पुस्तक के कवर पर काँटों की बाड़ लगी है। ये कँटीली रेखनाएँ हैं जो सिर्फ भौगोलिक ही नहीं लोगों के दिलों में भी खिंची हुई हैं, जिनसे समूची मानवता नष्ट हो रही है। उपन्यास में एक स्थल पर लेखक कहता भी है– ''ना जाने कितने लोग उन कँटीली रेखनाओं पर गिरकर फँस चुके थे। न जाने कितनों के पाँव लहूलुहान हो गये थे! कितनों ने दम तोड़ दिया था।.. और बिना 'खून–टैक्स' दिए कोई उस रेखना को पार नहीं कर पा रहा था!''[7] 'मेरी' एक तूफान का नाम, जिसका परिचय लेखक इस प्रकार देता है– ''वैसे 'मेरी' सामान्य तूफान की तरह ही शुरू होगा! पर आइस शीट खिसकने के साथ ही पहाड़ों में दरार पड़ने की खबर! उफ! यह दरार इस तूफान को भयावह रूप दे सकती है।''[8] कथा कुछ आगे बढ़ती है तो पता चलता है कि– ''दरअसल जो खबर आ रही है उसके अनुसार 'मेरी' अब सिर्फ 'मेरी' नहीं रहा! 'मेरी' अब सिर्फ एक तूफान नहीं रह गया है! 'मेरी' के साथ 'जान'

जुड़ गया है! ऐसा तूफान वैज्ञानिकों ने कभी नहीं देखा। पृथ्वी पर कभी ऐसा तूफान आया है या नहीं, इसका कोई प्रामाणिक तथ्य उपलब्ध नहीं है! उफ..! 'मेरी जान'।''[9] स्पष्ट है कि 'मेरी जान' दो अलग–अलग तूफानों का नाम है, जो मिलकर एक हो गए हैं।

ग्लोबल वार्मिंग और उससे होने वाली मुश्किलों की ओर वार्निंग देता हुआ लेखकीय कथन देखिए– ''भारतीय अंतरिक्ष शोध संगठन, कोलकाता के अनुसार, हिमालय के लगभग इक्कीस प्रतिशत ग्लेशियर में कोई बढ़ोत्तरी नहीं हुई है। खास तौर पर यह गंगोत्री ग्लेशियर, जो लगभग 30.2 किलोमीटर क्षेत्र में फैला हुआ है, दुनिया का सबसे बड़ा ग्लेशियर है। पिछले कई दशकों से इसके सिकुड़ने की गति चौगुनी हो गयी है। अहमदाबाद के अंतरिक्ष ऐप्लीकेशन केंद्र की एक रिपोर्ट के अनुसार भारत के 2,767 ग्लेशियरों में से 2,184 ग्लेशियर में पिघलन की गति तेज है। ग्लेशियरों के पिघलन की तेज गति की सबसे बड़ी वजह ब्लैक कार्बन व बढ़ती धूल है। जंगलों में लगने वाली आग व ग्रीनहाउस गैस के असर की भी इसमें भूमिका है। यही कारण ग्लोबल वार्मिंग के लिए जिम्मेदार हैं।''[10] इन कथनों से स्पष्ट है कि उपन्यास वैश्विक मुद्दे ग्लोबल वार्मिंग को केंद्र में रखकर लिखा गया है, जिसका कारण है– 'मेरी' और 'जान' और ऐसे ही न जाने कितने भयावह तूफानों का दुनिया को लील लेने का निरंतर बढ़ता हुआ खतरा। उसके साथ हमारी खींची रेखनाएँ जो महज भौगालिक या जातीय ही न होकर दिलों में भी खिंची हुई हैं, समूची मानवता को नष्ट करने पर उतारू हैं। सर्वप्रथम हमें इन रेखनाओं को तोड़ना है और मिलजुलकर पृथ्वी पर मंडराते हुए 'मेरी जान' जैसे तूफानों के खतरे को कम करना है।

स्पष्टतः यह ग्लोबल वार्मिंग पर लिखा गया हिन्दी का प्रथम उपन्यास है, लेकिन इसके मूल में सिर्फ यही एक चिंता या धारणा नहीं है। ग्लोबल वार्मिंग तो मात्र एक जरिया है जिसके बहाने लेखक ने दुनिया के वे तमाम मुद्दे उठाए हैं जो समूची पृथ्वी और मानवता को नाश के कगार तक लाने में तुले हुए हैं। सचमुच यह एक जिम्मेदार लेखक की सचेतनता, मानव जाति के भविष्य के प्रति चिंता और सहृदता का सबल परिचायक है। पुनष्च गीताश्री के शब्दों को उधार लेते हुए– ''खतरा हर ओर है। पृथ्वी और मनुष्यता दोनों खतरे में हैं। पर्यावरण का लगातार क्षरण हो रहा है और इसको लेकर दुनिया भर के पर्यावरणविद् चिंतित हैं। सिर्फ हम नहीं चेत रहे। क्योंकि हमने ये हालत बनाई है दुनिया की। हम खेल रहे हैं पृथ्वी से। हमने बाँटे हैं संसार। रेखाएँ हमने खींचीं कि वे अमानवीय हो गयीं।.. सब भाग कर कहीं सुरक्षित स्थान पर पहुँचना चाहते हैं। सीमाएँ उन्हें रोकती हैं। सरहद की निर्मम अवधारणा ही मनुष्य विरोधी है। यह तब और प्रचंड हो जाती है, जब दिलों में खिंच जाए और सत्ता बर्बर हो जाए। फिर शरणार्थियों की क्या हालत होती है, किसी से छिपा नहीं है। लेखक ने लोकल और ग्लोबल दोनों तरह की समस्याओं को मानवीय दृष्टि से उठाया है।.. इंसानियत को सिर्फ सरहदों ने नुकसान नहीं पहुँचाया, नागरिकों ने भी अपने हाथों दिल में एक दूसरे के खिलाफ नफरत की लकीरें खींच लीं।''

यह तो हम सभी जानते हैं कि बांग्ला देश में मार्च और मई के महीनों के बीच भयंकर आँधी–तूफान चलते हैं, जिसे काल बैसाखी कहा जाता है। यही काल बैसाखी एकदा तीव्र वार्मिंग का रूप धारण कर लेती है, जिससे समुद्री जल का स्तर बढ़ जाता है और बांग्ला देश लगभग डूबने की ही स्थिति में आ जाता है। मनुष्य के साथ–साथ सभी जीव–जंतु भी हाहाकार कर उठते हैं। अपना देश भी इस भयंकर आपदा से प्रभावित हुए बिना नहीं रहता। उसके कई तटवर्ती इलाके जलमग्न हो जाते हैं। लाखों बांग्ला देशी इस त्रासदी से राहत पाने के लिए पड़ोसी देश भारत की ओर कूच करते हैं, और भारत–बांग्ला देश सीमा पर स्थित कँटीली बाड़ से बनी दीवारों को तोड़ देने की जिद पर अड़ जाते हैं। वार्मिंग के कारण बांग्ला देश में आए इस भीषण बबंडर के दुष्प्रभावों की भयावहता पर और विज्ञान के ऐसे गंभीर विषय पर लिखते समय उपन्यासकार ने इस बात का खास ख्याल रखा है कि यह विषय चुनकर उनका लेखन कहीं उनके सहृदय पाठकों के लिए नीरस, उबाऊ या बोझिल न हो जाए, अतः इस नीरसता से बचने के लिए अपनी गहरी सूझबूझ से वे एक एक मार्मिक प्रेम कथा का ताना–बाना बुनते चलते हैं, जिसके नायक और नायिका हैं– फरीद और सुमोना। फरीद एक एडवेंचर्स युवा है और सुमोना एक अति ब्रिलिएंट और खूबसूरत युवती। इन दोनों के मध्य अटूट चाहत और विश्वास उपन्यास को आदि से अंत तक रोचक और पठनीय बनाए रखता है। दो प्रेम करने वालों की राह में मनुष्य तो क्या प्रकृति भी किस तरह रोड़े अटकाती और काँटे बिछाती चलती है, इसका बहुत त्रासद और मार्मिक वर्णन हमें उपन्यास में देखने को मिलता है। प्रेम में पड़े ये दो युवा दैवीय आपदा से जूझते–जूझते जब बांग्लादेश–भारत की सीमा पर पहुँचते हैं तो नायक फरीद वहाँ भारत की एक पलटन की गोली का शिकार हो जाता है और वहीं उसके जीवन का मर्मांतक अंत हो जाता है। तत्पश्चात अपने प्रेमी की मृत्यु पर सुमोना का अतिशय विलाप और शोक समस्त दिशाओं को भेदकर पार निकल जाता है। इस प्रकार दो प्रेमियों की कथा का ऐसा त्रासद अंत यह सिद्ध कर देता है कि मनुष्य तो अपने स्वार्थ और अति महत्वाकांक्षा के वशीभूत हो छोटे–बड़े और ऊँच–नीच में भेद स्थापित करने के लिए सीमाएँ बनाता ही है लेकिन इस कार्य में प्रकृति भी पीछे नहीं रहती। वह भी मनुष्य को थोड़ा सा अकडते ही अपनी श्रेष्ठता और अपनी शक्तियों का भान कराती चलती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि उपन्यास का शीर्षक हमें ऊपर से भले ही कितना रुचिकर या आकर्षक प्रतीत होता हो लेकिन अपने आप में वह एक गंभीर और मारक व्यंग्य छिपाए हुए है। यह वस्तुतः मानवीय सोच, उसकी संकुचित मनोवृत्ति, उसके द्वारा निर्मित हदों और चौहद्दियों पर निरंतर व्यंग्य और कुठाराघात करने का काम करता है। उपन्यास की समीक्षा करते हुए पंकज चौधरी कहते भी हैं–''रेखना' जो सीमाएँ होती हैं, हदें होती हैं, उसको लेखक या कोई भी सभ्य और सुसंस्कृत आदमी कैसे पसंद

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

करेगा? लेकिन हकीकत तो यही है कि हम मनुष्य और मनुष्य के बीच की खाई को और चौड़ा ही करते जा रहे हैं। धर्म, जाति, भाषा, लिंग, विचारधारा, देश आदि की रेखाओं को मिटाने की बजाए और बढ़ाते ही जा रहे हैं।''[11]

उपन्यास की पृष्ठभूमि के आलोक में और उसे आद्योपांत पढ़ने के उपरांत हम इसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि आज विश्व में ग्लोबल वार्मिंग या ऐसी ही कितनी अन्य जो छोटी–बड़ी समस्याएँ हैं, वे सब मानव–जनित ही हैं। प्रकृति हमें हमारे इन दुराग्रहों के लिए बार–बार रोकती है, हमें चेतावनी देती है, लेकिन माया, स्वार्थ और अहं के मोटे आवरण में लिपटे हम हैं कि उसकी लाख चुनौतियों को ठुकराते ही चले आ रहे हैं। उपन्यास में दिखाए गए उसके भयंकर परिणामों को देखकर भी यदि हम नहीं चेतते तो शायद हमसे बड़ा मूर्ख और जड़मति कोई नहीं। हमें समझना चाहिए कि जब एक छोटे से देश का दो तूफ़ानों ने यह हश्र कर दिया तो जब इन भयावह प्रलयंकर बबंडरों की चपेट में कोई बड़ा विकसित देश या समूची पृथ्वी ही आ जाए तो संभवतः पृथ्वी से जीवन ही मिट जाएगा। इस प्रकार यह उपन्यास हमें भविष्य की इस आशंका से आगाह करता हुआ समय रहते चेत जाने का संदेश भी देता है।

कुल मिलाकर रत्नेश्वर का यह उपन्यास हिंदी उपन्यास की दुनिया में नव्यता और ताजगी का अहसास कराता हुआ हमें भविष्यबोध भी प्रदान करता चलता है। हिंदी में वैज्ञानिक पृष्ठभूमि पर आधरित एक बिल्कुल नए और अनूठे विषय का चयन कर अपने रचना–कौशल से उसे अंत तक साधे रखना साथ ही रुचिकर बनाए रखना हर तरह से उपन्यासकार की विशिष्टता सिद्ध करता है। वस्तुतः लीक से हटकर गंभीर, सजग और प्रेरक मुद्दों पर पढ़ने की चाह रखने वालों के लिए यह एक उच्च कोटि का उपन्यास साबित होगा, इसमें कोई संदेह नहीं।

संदर्भ

1. सिंह, रत्नेश्वर कुमार. साहित्य में पर्यावरण. downtoearth.org.in.
2. सिंह, रत्नेश्वर कुमार. (2017). रेखना मेरी जान. उपन्यास. लेखक के वक्तव्य का अंश. ब्लूवर्ड प्रकाशनः प्रथम संस्करण।
3. वही।
4. वही।
5. अनुपम, विनोद. समीक्षा. (2017). भविष्य के सवालों से टकराव. राष्ट्रीय एडिशन दैनिक जागरण. 08 अक्टूबर।
6. अस्थाना, धीरेंद्र. समीक्षा. (2017). भविष्य में झाँकता गल्प. नवभारत टाइम्स. 20 दिसंबर।
7. सिंह, रत्नेश्वर कुमार. (2017). रेखना मेरी जान. ब्लूवर्ड प्रकाशनः प्रथम संस्करण. पृष्ठ **168.**
8. वही. पृष्ठ **27.**
9. वही. पृष्ठ **30.**
10. वही. पृष्ठ **26.**
11. चौधरी, पंकज. आलेख. (2018). महत्वपूर्ण, इसीलिए लोकप्रिय भी. पत्रिका हंस. अंक अगस्त. पृष्ठ **95.**

18

अभिवृत्तियों पर लिंग एवं जाति के प्रभाव का अध्ययन

डॉ० गीता सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर (मनोविज्ञान)
ए0के0पी0 (पी0जी0) कॉलेज खुर्जा
जनपद–बुलन्दशहर

सारांश

सामाजिक व्यवहार मानव जीवन का आधार है और सामाजिक परिवेश हमारे विचार, भाव, संवेग तथा सम्पूर्ण व्यवहार को एक जटिल तरीके से प्रभावित करता है। इसी प्रभाव के कारण व्यक्ति अन्य व्यक्तियों, समूहों, वस्तुओं, परिस्थितियों तथा जीवन से जुड़े विभिन्न पहलुओं के विषय में एक दृष्टिकोण/अभिवृत्ति विकसित करता है। जो उसके अन्दर व्यवहारात्मक प्रवृत्ति के रुप में विद्यमान रहती है। अभिवृत्तियाँ व्यक्ति के मन की एक विशिष्ट दशा होती है। भारतीय पृष्ठभूमि में विभिन्न उद्दीपकों के प्रति एवं सांस्कृतिक समूहों की अभिवृत्तियों का अध्ययन नितान्त महत्वपूर्ण है। भारतीय समाज में विभिन्न जाति, धर्म, भाषा व संस्कृति के लोग रहते हैं, उनकी विशिष्ट प्रतिक्रियाओं या व्यवहार को अभिवृत्तियों के माध्यम से जाना जा सकता है। प्रस्तुत शोध पत्र में भारतीय समाज की मुख्य जाति (सवर्ण एवं अनुसूचित) के किशोर एवं किशोरियों जिनकी आयु 15 से 18 वर्ष के मध्य है, उनकी माता पिता, गुरु, देश, धर्म, अनुशासन तथा मानवता तथा जीवन के प्रति बदलते दृष्टिकोण/अभिवृत्ति का अध्ययन करना है। प्रस्तुत अध्ययन में इकाईयों का चयन पूर्णतः यादृच्छीकरण द्वारा किया गया है। कुल 80 इकाईयों (40 छात्र, 40 छात्रायें) को खुर्जा के विभिन्न विद्यालय से चुना गया।

मुख्य बिन्दु

अभिवृत्ति, जाति, लिंग।

परिचय

अभिवृत्ति व्यक्ति की वह मनोदशा है, जो उसके व्यवहार का निर्धारण करती है। चूंकि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, वह किसी न किसी सा0 परिवेश में जीवन के विभिन्न मूल्यों व व्यवहारों को सीखता है। प्रत्येक व्यक्ति की अपनी सा0–सांस्कृतिक पृष्ठभूमि होती है, जो उसके व्यक्तित्व एवं व्यवहार का निर्धारण करती है। संसार परिवर्तनशील है और समय के साथ समाज के मानकों, मूल्यों, विश्वासों और अभिवृत्तियों में परिवर्तन हुआ है। मनोवृत्तियों के निर्माण में संप्रेषण, संदर्भ समूह अर्थात वह समूह जिसके साथ व्यक्ति आत्मीकरण कर लेता है और उसकी अभिवृत्ति में इस समूह या जाति का प्रभाव परिलक्षित होता है, क्योंकि वह अपने समूह के लक्ष्य मूल्य आदि को अपनाकर अपने व्यवहार में चरित्र में परिवर्तन कर लेता है। सामाजिक परिवेश समय के साथ–साथ बदला है, और इसके प्रभाव से मानव व्यवहार भी अछूता नहीं रहा। जैसे–तकनीक ने पाँव पसारे तो किशोरों व किशोरियों के भाव, संवेग विचारों, व व्यवहार में परिवर्तन दृष्टिगोचर होने लगा। देश, धर्म, लिंग, जाति, आदि के प्रति उसकी सोच बदली है। क्योंकि आज उसे जानकारी या संज्ञान के नये–नये आयाम व स्रोत प्राप्त हो रहे हैं। जिसका परिणाम ये हो रहा है कि वह बाध्य होकर सम्बन्धित वस्तु, अभ्यावेदन या टैगिंग के प्रति एक विशिष्ट तरीके से प्रतिक्रिया करने लगा है। इसके मूल में अभिवृत्ति ही है जो उसके व्यवहार का निर्धारण करती है।

मर्फी और मर्फी के अनुसार ''मनोवृत्ति मुख्य रुप से कुछ चीजों, व्यक्तियों या परिस्थितियों के प्रति उसके दृढ़ होने का तरीका है क्योंकि व्यक्ति अपने जीवन में कुछ दृष्टिकोणों/अभिवृत्तियों को विकसित करने के लिये बाध्य होता है, और अभिवृत्ति ही समाज या समूह में उसकी स्थिति को निर्धारित करती है। ऑलपोर्ट (1935) ने अभिवृत्ति के सम्बन्ध में कहा है कि ''अभिवृत्तियाँ मानसिक एवं स्नायुविक तत्परता की दशा है, जो व्यक्ति के व्यवहार को दिशा व निर्देश देती है, और उसकी प्रतिक्रियाओं को उद्दीपकों, व्यक्तियों व परिस्थितियों से सम्बन्धित करती है।''

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

सम्बन्धित अध्ययनों की समीक्षा करने पर यह सिद्ध होता है कि– इस दिशा में अभी और शोधों की आवश्यकता है।

अध्ययनों से स्पष्ट हुआ है कि अभिवृत्ति व्यक्तित्व की उस विशेषता को इंगित करती है जिसके द्वारा व्यक्ति किसी वस्तु, योग्यताओं या परिस्थिति के बारे में अपनी सोच एवं विश्वास, पसंद एवं नापसंद के आधार पर व्यवहार करता है। और मनोवृत्ति को मनोवैज्ञानिकों ने मूलतः तीन दृष्टिकोणों में अपनाया है– (1) एकविमीय (2) द्विविमीय (3) त्रिविमीय। यहाँ त्रिविमीय दृष्टिकोण के आधार पर अभिवृत्ति की व्याख्या उपयुक्त मानी गई है क्योंकि इसमें तीनों संघटक संज्ञानात्मक, भावात्मक व व्यवहारात्मक सन्नहित है। इसे ABC Model कहा गया है।

काज एवं स्टोटलैण्ड (Katz and Stotland 1959) राजेकी (Rajeeki 1982) फेल्डमैन (Feldman 1986) मेयर्स (Myers 1988) ने भी अभिवृत्ति को तीन संघटकों का स्थायी संगठित तंत्र (Enduring organised system) माना है। मनोवृत्ति के इन तीनों तत्वों में कुछ विशेषतायें होती हैं जिनके स्वरुप को समझना अभिवषत्ति को समझने के लिये आवश्यक है।

(1) कर्षण शक्ति (Valence)

इसके तात्पर्य मनोवृत्ति की अनुकूलता (Favourableness) तथा प्रतिकूलता (Unfavourableness) की मात्रा (Degree) से है। ये किसी भी संघंटक में कम या ज्यादा हो सकती है।

(2) वहुविधता (Multiplexity)

इसका तात्पर्य किसी संघटक में उसके तत्वों की संख्या से है।

(3) संगति विशेषतायें (Consistency characteristics)

मनोवृत्ति के तीनों संघटको में संगति होती है। और इसी संगति के कारण व्यक्ति किसी वस्तु, घटना परिस्थिति के प्रति एक खास ढंग से सोचता है तथा व्यवहार करने के लिये तत्पर रहता है।

जाति– का व्यक्ति के सामाजिक जीवन में बहुत महत्व है। प्रत्येक सदस्य जिस समूह में जन्म लेता है, वहीं से सा0 व्यवहारों की नींव पड़ती है। जाति आदिकाल से ही अपने सदस्यों का संरक्षण करने और अपनी मूलभूत विशेषताओं या मूल्यों को सहजने का कार्य करती रही है। इसके साथ ही अपने कार्यकौशल को अपनी पीढ़ी के हाथों संरक्षित रखने का कार्य भी करती है जिससे वह अपने सदस्यों को आर्थिक सुरक्षा भी देती रही है। जातियाँ कला, व्यवसाय, तथा अन्य सांस्कृतिक विरासत को बनाये रखने में सहायक रही है। लेकिन धीरे–धीरे अन्य जातियों का अपने से अलग जाति के विषय में संकीर्णता आती गई, और समाज में विशेष जाति के प्रति पूर्वागृह विकसित हो गये। जातियाँ भारतीय समाज रुपी भवन की वह ईमारती ईंट है जिसके बिना समाज की कल्पना भी नहीं की जा सकती। जाति व्यवस्था को ईश्वरीय देन मानकर जातीय मतभेद उत्पन्न होने लगे और ऊँच–नीच की भावना भरकर श्रेणीबद्ध समाज की रचना हुई। इसके कारण समाज के लोगों की मनोवृत्ति में परिवर्तन हुआ। धीरे–धीरे समाज में पहले की अपेक्षा अधिक शिथिलता आई है। शिक्षा, औद्योगीकरण विकास की बयार ने लोगों की अभिवृत्तियों को बदला है। प्रस्तुत अध्ययन में भी देश, धर्म, जाति, जीवन, मानवता, शिक्षक के प्रति बनी अवधारणा को समझना है। विभिन्न वर्गों की भागीदारी तथा राष्ट्रीयता की भावना से जातिवाद की प्रखरता में कमी तो आई है, परन्तु जातिवाद दूसरे रुप में उभरा है।

लिंग– लैंगिक भेद जैवकीय विभेदीकरण की अपेक्षा सामाजिक–सांस्कृतिक समस्या अधिक रही है। मनोवैज्ञानिकों, समाज शास्त्रियों ने लिंग के आधार पर कार्यों के विभेदन सम्बन्धी अध्ययनों को विशेष महत्व देने लगे। यद्यपि जैविक रुप से शैशावस्था में बालिका एवं बालिकाओं में विशेष अन्तर नहीं होता है लेकिन जैसे–जैसे वे सा0 परिवेश के संपर्क में आते हैं, उनकी रुचियाँ मूल्यों, विचारों में अन्तर आने लगता है। सामाजीकरण के द्वारा ही Blue and Pink की अवधारणा जन्म लेती है। समाज में दो अलग–अलग तरीकों से बालक व बालिका का संपोषण किया जाता है जिससे उनके व्यवहार में परिवर्तन आना स्वभाविक है। सामाजिकरण की इसी भिन्नता के कारण वे अपने माता–पिता, समाज के लोगों, मित्रों से भिन्न प्रकार व्यवहार करते हैं। आयु बढ़ने के साथ सैक्स हारमोन्स के विकसित होने पर भी बालक–बालिका के व्यवहार पर प्रभाव डालती है क्योंकि इनका प्रभाव इनके खेल, रुचियों, उपलब्धियों पर पड़ता है। बालिका में परिपक्वता बालकों की अपेक्षा जल्दी विकसित होती है। इस सम्बन्ध में बर्नन (1951) में कहा कि ''लड़कियों की तुलना में लड़के सैद्धान्तिक, आर्थिक, राजनैतिक मूल्यों में अधिक होते हैं, इसके विपरीत लड़कियाँ शैक्षिक उपलब्धि, भाषा की प्रवीणता, प्राकृतिक सौन्दर्यात्मक बोध, सा0 आर्थिक मूल्यों में श्रेष्ठ होती है।

इस प्रकार शारीरिक परिवर्तन तो किशोरावस्था में होता है, किन्तु उनकी मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक परिस्थिति में अन्तर समाज प्रदत्त है। इसी कारण उनकी मनोवृत्तियों में पर्याप्त अन्तर होता है। सोढ़ी (1972) ने विभिन्न प्रकार के धार्मिक विद्यालयों में पढ़ने वाले छात्रों के व्यक्तित्व का अध्ययन किया और पाया कि अध्यापकों और माता–पिता के प्रति अभिवृत्तियों में धार्मिक विद्यालयों व जाति विहीन विद्यालयों के छात्रों में सार्थक अन्तर था। और वर्ग के पुरुष छात्रों में सार्थक अन्तर था, मगर छात्राओं में ऐसे अन्तर नहीं पाये। जबकि अनुशासन के प्रति दोनों वर्गों के छात्र व छात्राओं की अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया। प्रस्तुत अध्ययन में लिंग व जाति के आधार पर निर्मित अभिवृत्तियों का तुलनात्मक अध्ययन किया त गया।

अध्ययन समस्या

अभिवृत्तियों पर लिंग व जाति के प्रभाव का स्वतंत्र व आश्रित रुप से अध्ययन करना।

अध्ययन के उद्देश्य

(1) प्रस्तुत अध्ययन द्वारा विभिन्न अभिवृत्तियों के क्षेत्र (अध्यापक तथा माता–पिता अनुशासन, जीवन तथा मानवता, देश, व धर्म) के प्रति सवर्ण एवं अन्य जाति की प्रतिक्रियाओं में क्या भिन्नता है?

(2) क्या अभिवृत्तियाँ लिंग के आधार पर प्रभावित होती हैं?

उपकल्पनायें

प्रस्तुत अध्ययन में पाँच क्षेत्रों के प्रति अभिवृत्तियों का मापन किया गया है तथा प्रतिक्षेत्र तीन उपकल्पनायें निर्मित की गई हैं–

(1) जाति का विभिन्न अभिवृत्तियों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।

(2) लिंग का विभिन्न अभिवृत्तियों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।

(3) लिंग व जाति संयुक्त रुप से भी अभिवृत्ति को प्रभावित नहीं करती।

प्रतिदर्श

प्रस्तुत अध्ययन में अध्ययन इकाईयों का चार खुर्जा शहर के विभिन्न स्कूली छात्र व छात्राओं को जिनकी आयु 13 से 18 के मध्य है तथा सवर्ण व अन्य जातियों से है, उनको यादृच्छीकरण द्वारा किया गया है। इसमें 40 छात्र व 40 छात्राओं को इकाई के रुप में चुना गया है।

Table : [Sample size]

लिंग	सवर्ण जाति	अन्य	योग
किशोर	20	20	40
किशोरियाँ	20	20	40
	40	40	80

परीक्षण – प्रस्तुत अध्ययन के उद्देश्य हेतु Dr. T.S. Sodhi अभिवृत्ति मापनी का प्रयोग किया गया है। इसमें विभिन्न अभिवृत्ति के क्षेत्रों से सम्बन्धित कुल 71 कथन है। जिनके द्वारा किशोर व किशोरियों की अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है।

परिवर्ती – आश्रितचर – पाँच क्षेत्रों में प्रदर्शित होने वाली अभिवृत्तियाँ।

स्वत्रंतचर – (A) जाति दो स्तर –

(1) सवर्ण (2) अन्य जातियाँ

(B) लिंग दो स्तर –

(1) किशोर (2) किशोरियाँ

अभिकल्प – प्रस्तुत अध्ययन में जाति तथा लिंग स्वतंत्रचर है। जिसका विभिन्न अभिवृत्त्यिों पर अध्ययन 2X2 काश्कीय अभिकल्प द्वारा किया गया है।

Result and Discussion

Result: Table No. 1: प्रसरण विश्लेषण

जाति, लिंग एवं जाति/लिंग का माता–पिता तथा अध्यापक के प्रति अभिवृत्ति

स्रोत	एस.एस	डी0एफ	मीन एस.एस	एफ0
प्रायोगिक	115.74			
जाति	59.52	01	59.52	04.16
लिंग	49.62	01	49.62	03.46
लिंग / जाति	06.60	01	06.62	0.46
त्रुटि	1087.25	76	14.31	

(1) जाति का माता–पिता तथा अध्यापक के प्रति अभिवृत्ति का प्रभाव नहीं पड़ता है, यह उपकल्पना सार्थकता .01 स्तर पर अस्वीकार की गयी।

(2) लिंग का माता–पिता तथा अध्यापक के प्रति अभिवृत्ति पर प्रभाव नहीं पड़ेगा, सत्य सिद्ध होती है।

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

(3) अध्यापक तथा माता–पिता के प्रति अभिवृत्ति पर जाति तथा लिंग का प्रभाव नहीं पड़ता, सत्य सिद्ध होती है।

Result: Table No. 2 (अनुशासन के प्रति अभिवृत्ति)

जाति, लिंग एवं जाति/लिंग का माता–पिता तथा अध्यापक के प्रति अभिवृत्ति

स्त्रोत	एस.एस	डी0एफ	मीन एस.एस.	एफ0
प्रायोगिक	16.75			
जाति	01.025	01	1.025	01.23
लिंग	06.625	01	06.625	01.98
लिंग/जाति	09.10	01	09.10	10.90
त्रुटि	63.69	16	00.83	

(1) जाति का अनुशासन के प्रति अभिवृत्ति पर प्रभाव नहीं पड़ेगा, उपकल्पना है, सत्य सिद्ध होती है।

(2) लिंग का अनुशासन के प्रति अभिवृत्ति पर प्रभाव नहीं पड़ता है, सत्य सिद्ध है।

(3) जाति तथा लिंग का अभिवृत्ति पर प्रभाव नहीं पड़ता, सत्य सिद्ध होती है।

Result : Table No. 3

(प्रसरण विश्लेषण–जीवन तथा मानवता के प्रति अभिवृत्ति)

स्त्रोत	एस.एस	डी0एफ	मीन एस.एस	एफ0
प्रायोगिक	25.9375			
जाति	00.0125	01	00.0125	0.00
लिंग	25.3125	01	25.3125	0.25
लिंग/जाति	00.6125	01	00.6125	0.03
त्रुटि	1537.15	76	20.225	

(1) जाति का जीवन तथा मानवता के प्रति अभिवृत्ति पर प्रभाव नहीं पड़ता, सत्य सिद्ध होती है।

(2) लिंग का जीवन तथा मानवता के प्रति अभिवृत्ति पर प्रभाव नहीं पड़ता, सत्य सिद्ध होती है।

(3) जाति तथा लिंग का जीवन तथा मानवता के प्रति अभिवृत्ति पर प्रभाव नहीं पड़ता, यह उपकल्पना सत्य सिद्ध होती है।

Result : Table No. 4

स्त्रोत	एस.एस	डी0एफ	मीन एस.एस	एफ0
प्रायोगिक	3.7			
जाति	2.45	01	2.45	0.18
लिंग	0.80	01	0.80	0.06
लिंग/जाति	0.45	01	0.45	0.03
त्रुटि	1003.75	76	13.20	

(1) जाति का देश के प्रति अभिवृत्ति पर प्रभाव नहीं पड़ता, उपकल्पना सत्य सिद्ध होती है।

(2) लिंग का देश के प्रति अभिवृत्ति पर प्रभाव नहीं पड़ता, उपकल्पना सत्य सिद्ध होती है।

(3) जाति व लिंग देश के प्रति अभिवृत्ति को प्रभावित नहीं करते, सत्य सिद्ध होती है।

Result : Table No. 5 (धर्म के प्रति अभिवृत्ति)

स्त्रोत	एस.एस	डी0एफ	मीन एस.एस	एफ0
प्रायोगिक	126.65			
जाति	7.825	01	7.825	0.35
लिंग	103.525	01	103.525	4.94
लिंग/जाति	15.3	01	15.3	1.70
त्रुटि	1658.75	76	21.825	

(1) जाति तथा धर्म के प्रति अभिवृत्ति पर प्रभाव नहीं पड़ता, उपकल्पना सत्य सिद्ध होती है।

(2) लिंग का धर्म के प्रति अभिवृत्ति पर प्रभाव नहीं पड़ता, यह उपकल्पना सार्थकता के 0.01 स्तर पर अस्वीकृत की गई।

(3) जाति तथा लिंग सम्मिलित रुप धर्म के प्रति अभिवृत्ति को प्रभावित नहीं करते, यह उपकल्पना सत्य सिद्ध होती है।

विवेचना, निष्कर्ष तथा सुझाव

पिछले अध्याय में अध्ययनकर्ता ने इस अध्ययन के परिणाम प्रस्तुत किये, इस अध्ययन में इन परिणामों की विवेचना की जायेगी, तथा अध्ययन के निष्कर्ष एवं भविष्य में किये जाने वाले शोध–कार्यों के लिये सुझाव प्रस्तुत किये जायेंगे।

परिणामों की विवेचना

प्रस्तुत अध्ययन में विद्यालय के सवर्ण एवं अनुसूचित जातियों के किशोर एवं किशोरियों की–

1. अध्यापक तथा माता–पिता के प्रति अभिवृत्ति
2. अनुशासन के प्रति अभिवृत्ति
3. जीवन तथा मानवता के प्रति अभिवृत्ति
4. देश के प्रति अभिवृत्ति
5. धर्म के प्रति अभिवृत्ति

अध्ययन किया गया। प्रत्येक क्षेत्र की अभिवृत्ति की एक प्रयोग के रुप में व्याख्या की गयी। इन अभिवृत्तियों की विवेचना भी इसी क्रम में की जायेगी।

1. जाति तथा लिंग की माता–पिता तथा अध्यापक के प्रति अभिवृत्ति

इस क्षेत्र की तीन उपकल्पनायें स्वीकार की गयी। इससे स्पष्ट है, कि सवर्ण जाति तथा अनुसूचित जाति के बालक–बालिकाओं की इस क्षेत्र के प्रति अभिवृत्ति लगभग समान है। सवर्ण जाति की औसत का प्राप्तांक 1.15 है तथा अनुसूचित जाति का औसत प्राप्तांक 2.87 है जो लगभग समान है।

इसी प्रकार का क्षेत्र की अभिवृत्ति में लैंगिक प्रभाव भी नहीं है। छात्रों की औसत प्राप्तांक 2.8 है तथा छात्राओं का 1.23 है जो लगभग समान है।

जाति तथा लिंग सम्मिलित रुप से इस अभिवृत्ति को प्रभावित नहीं करते इसलिये यह शून्य उपकल्पना भी स्वीकार की गयी।

2. जाति तथा लिंग की अनुशासन के प्रति अभिवृत्ति

इस क्षेत्र की तीन उपकल्पनायें स्वीकार की गयी। इससे स्पष्ट है कि सवर्ण तथा अनुसूचित जाति के बालक–बालिकाओं की इस क्षेत्र के प्रति अभिवृत्ति लगभग समान है। सवर्ण जाति का औसत प्राप्तांक 0.6 है तथा अनुसूचित जाति का औसत प्राप्तांक 0.8 है।

जाति तथा लिंग सम्मिलित रुप से इस अभिवृत्ति को प्रभावित नहीं करते। अतः यह उपकल्पना भी स्वीकार की गयी। स्पष्ट है कि अनुशासन के प्रति अभिवृत्तियाँ आज के बदलते समाज में जाति तथा लिंग के प्रभाव से मुक्त है।

निष्कर्ष :– इस अध्ययन के आधार पर निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त किये गये–

3 जाति तथा लिंग का जीवन तथा मानवता के प्रति अभिवृत्ति पर प्रभाव

इस क्षेत्र की उपकल्पनायें स्वीकार की गयी, जाति सवर्ण तथा अनुसूचित जाति के बालक–बालिकाओं का इस क्षेत्र के प्रति अभिवृत्ति लगभग समान है। सवर्ण जाति का औसत प्राप्तांक 02 तथा छात्राओं का औसत प्राप्तांक 1.97 है जो लगभग समान है।

जाति तथा लिंग सम्मिलित रुप से इस अभिवृत्ति को प्रभावित नहीं करते अतः यह शून्य उपकल्पना स्वीकार की गयी।

4. जाति तथा लिंग का देश के प्रति अभिवृत्ति पर प्रभाव

इस क्षेत्र की भी तीनों उपकल्पनायें स्वीकार की गयी, सवर्ण जाति तथा अनुसूचित जाति के बालक–बालिकायें की इस क्षेत्र के प्रति अभिवृत्ति लगभग समान है। सवर्ण जाति का औसत प्राप्तांक 0.725 तथा अनुसूचित जाति का औसत प्राप्तांक 1.025 है।

इसी प्रकार इस क्षेत्र की अभिवृत्ति पर लैंगिक प्रभाव नहीं है। छात्रों का औसत प्राप्तांक है तथा छात्राओं का 0.8 है जो लगभग समान है।

5. जाति तथा लिंग का धर्म के प्रति अभिवृत्ति पर प्रभाव

इस क्षेत्र की प्रथम उपकल्पना स्वीकार की गयी। सवर्ण जाति तथा अनुसूचित जाति के बालक–बालिकाओं की इस क्षेत्र के प्रति अभिवृत्ति लगभग समान है, अर्थात थोड़ा अन्तर है। सवर्ण जाति का औसत प्राप्तांक 1.725 तथा अनुसूचित जाति का औसत प्राप्तांक 1.1 है।

इसकी द्वितीय उपकल्पना ''लिंग का धर्म के प्रति अभिवृत्ति पर प्रभाव नहीं पड़ेगा'' 0.01 स्तर पर अस्वीकार की गयी। छात्रों का औसत प्राप्तांक 0.275 है तथा छात्राओं का औसत प्राप्तांक 2.55 है। इससे यह स्पष्ट होता है कि छात्राओं का धर्म के प्रति

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

अधिक झुकाब है। भारतीय समाज में सवर्ण तथा अनुसूचित जाति की महिलाओं को धर्म के प्रति प्रारम्भ से ही आस्था उत्पन्न करवाई जाती है। इसलिये इस अध्ययन में सम्मिलित छात्रायें धर्म के प्रति अधिक धनात्मक अभिवृत्ति रखती हैं। यद्यपि हिन्दू समाज में धर्म को अधिक महत्व दिया गया है, फिर भी पुरुष जिस जाति का भी हो, स्त्रियों की अपेक्षा कम धार्मिक प्रवृत्ति का होता है। इसके अतिरिक्त युवावर्ग, अपनी किशोरावस्था के कारण अधिक उदारवादी दृष्टिकोण रखता है। इसलिये इस अध्ययन के छात्र जिनकी आयु लगभग 12–13 वर्ष की है, धर्म के प्रति उतनी अधिक अभिवृत्ति नहीं रखते।

यहाँ जाति तथा लिंग सम्मिलित रुप से इस अभिवृत्ति को प्रभावित नहीं करते, अतः शून्य उपकल्पना स्वीकार की गयी।

संदर्भ

1. Singh A.K. (2002) – समाजिक मनोविज्ञान की रुपरेखा।
2. Gyanodaya India.com
3. bccomm.mp.gov.in
4. https://ncert.nic.in thpy/06
5. श्रीवास्तव, रामजी., आलम, काज़ी आसिम. (1988). आधुनिक सामाजिक मनोविज्ञान. मोतीलाल बनारसीदासः दिल्ली।
6. सिंह, डॉ0 आर0एन0. आधुनिक समाज मनो0. विनोद पुस्तक मन्दिरः आगरा–2.
7. Sodhi, T.S. Manual. Revised NPS Agra.

19

किशोरावस्था के विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण एवं मानसिक स्वास्थ्य के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन

नेहा श्रीवास्तव
शोधार्थी
आई०आई०एम०टी० विश्वविद्यालय, मेरठ

सारांश

प्रस्तुत शोधपत्र के द्वारा किशोरावस्था के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य तथा पारिवारिक वातावरण की विमा हार्दिकता, सहानुभूति, संसजकता, उत्साह, संस्कृति दीक्षा, प्रतियोगिता के साथ धनात्मक सहसंबंध ज्ञात हुआ और बालिकाओं में पारिवारिक वातावरण की विमा प्रजातांत्रिक अभिविन्यास, उत्साह एवं प्रतियोगिता का मानसिक स्वास्थ्य के साथ धनात्मक सहसंबंध ज्ञात हुआ, किन्तु प्रस्तुत शोध में बालकों के मानसिक स्वास्थ्य का पारिवारिक वातावरण की विमा प्रजातांत्रिक अभिविन्यास ,तनाव, द्वेशभाव तथा पुरस्कार तथा बालिकाओं के मानसिक स्वास्थ्य का पारिवारिक वातावरण की विमा तनाव के मध्य कोई संबंध नहीं ज्ञात हुआ।

मुख्य बिन्दु

किशोरावस्था, पारिवारिक वातावरण, मानसिक स्वास्थ्य।

प्रस्तावना

अच्छा स्वास्थ्य शरीर एवं मन की स्थिति पर निर्भर करता है। दोनों का मनुष्य के स्वास्थ्य पर सीधा प्रभाव पड़ता है। स्वस्थ व्यक्ति केवल शारीरिक रुप से ही नहीं, बल्कि मानसिक रुप से भी स्वस्थ होता है। मनोविज्ञान का क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत है। यह व्यक्ति के सम्बन्ध में उनकी व्यवहारिक शक्तियों, मानसिक प्रवृत्तियों एवं विकासात्मक बौद्धिक सन्दर्भों की व्याख्या करता है। शिशु के गर्भाधान से लेकर वृद्धावस्था तक की उसकी यात्रा में ऐसा कोई समय नहीं होता जबकि वह मनोविाान के बृहद क्षेत्र से अछूता हो। सभी क्रियाएँ जो उसके मस्तिश्क एवं तंत्रिकातंत्र द्वारा संचालित होती है। मनोविज्ञान उनका गहन अध्ययन एवं विश्लेषण करने का विशिष्ट अनुशासन है।

हमारी अनुक्रिया अथवा व्यवहार सामान्यतः इस तथ्य पर निर्भर करता है, मस्तिष्क किस प्रकार की सूचनाऐं ग्रहण कर रहा है। कई बार विद्यालयों में यह सुनने में आता है कि अमुक विद्यार्थी ने अमुक विद्यार्थी को मारा था या उसके साथ अभद्रता की। बालक का हिसंक व्यवहार क्या वास्तव में उस व्यवहार या उन सूचनाओं से जुड़ा नहीं है। जिनमें वह इन व्यवहाारों को कही देखता हो और उसे इसको दुहराना भी उचित लगता है ? क्या बालक जन्म से हिंसक प्रवृत्ति का है,? अथवा अपने यह व्यवहार अर्जित किया? ये कुछ ऐसे प्रश्न है, जो वर्तमान में विद्यार्थी के सन्दर्भ में मनोवैज्ञानिकों एवं शोधकर्ताओं को चिंतित करती है।

आजकल किशोरावस्था के विद्यार्थियों में भय, चिन्ता, आत्महत्या या अवसाद की प्रवृत्तियां देखने को मिलती है। ये सभी प्रवृत्तियां विद्यार्थी के मानसिक स्वास्थ्य से सबंधित है। प्रश्न उठता है कि क्या यह भय, अवसाद, चिन्ता इत्यादि मात्र शिक्षण व्यवस्था या पित्रैक्य द्वारा उत्पन्न होती है,? अथवा कुछ और भी ऐसे कारण है, जो विद्याार्थी के मानसिक अस्वस्थता के कारण के जिम्मेदार है?

मनुष्य एक सामाजिक जीव है। समाज की वह इकाई जिसमें मनुष्य जन्म लेता है, प्रारंभिक सुरक्षा प्राप्त करता है, जिस प्रकार उसके लालन–पालन, निर्देशन एवं मार्गदर्शन देने का दायित्व होता है। जहां वह शर्तरहित अपनत्व एवं प्रेम प्राप्त करता है। उसका परिवार कहलाता है।

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

शिशु को संस्कारित करने का उत्तरदायित्व परिवार का होता है। परिवार ही वह स्थान है, जो बालक में मानवीय मूल्य डालने का कार्य करता है। बालक जन्म के बाद पारिवारिक वातावरण में ही विकसित होता है। परिवार बालक का सामाजीकरण करने में मुख्य भूमिका का निर्वहन करता है। यह विदित है कि प्रत्येक व्यक्ति परस्पर पूर्णतः भिन्न है। उनका मानसिक, शारीरिक बौद्धिक तथा सांवेगिक स्तर अन्य व्यक्तियों से पूर्णतः पृथक है। हर व्यक्ति अपने आप में विशिष्ट है और यह विशिष्टता उसे अपने पारिवारिक वातवारण और सांस्कृतिक संक्रमण द्वारा भी प्राप्त होती है। बालक अपने परिवार को देखकर ही सीखता है एवं उनका अनुकरण करता है।

परिवार में उपस्थित व्यक्तियों का मुख्यतः माता–पिता का व्यवहार, माता–पिता की शिक्षा का स्तर, माता–पिता का आर्थिक स्तर, माता–पिता द्वारा प्रदत्त स्नेह अथवा बालक के मन पर गहरा और विषद प्रभाव डालता है।

सरल शब्दों में यदि एक बालक के परिवार का वातावरण, कलहपूर्ण, कुंठा, द्वन्दात्मक तथा अवसाद से ग्रस्त रहे तो बालक की मानसिक शक्तियों का समुचित विकास नहीं होता, फलस्वरूप बालक हमेशा चिंतित एवं भ्रामक रहता है। उसके निर्णय तथा उसकी क्षमताऐं प्रभाावित होने लगती है। तब ऐसी स्थिति का प्रत्यक्ष प्रभाव उसके शरीर एवं सामाजिक व्यवहार तथा शैक्षिक निष्पादन पर भी पड़ता है। इसके विपरीत एक सामान्य आर्थिक स्तर तथा सामान्य शिक्षा स्तर के परिवार से संबंधित स्वस्थ हंसमुख उत्साह युक्त बालक सदैव ऊॅचा उठने का प्रयत्न करने हेतु निरन्तर प्रयत्नशील रहता है। प्रत्येक अनुकूल या प्रतिकूल परिस्थिति में वह नवीन संभावनाएं तलाशने में जुटा रहता है।

मानसिक स्वास्थ्य एक महत्वपूर्ण कारक है, जो शिक्षा प्रक्रिया में विद्यार्थी से सबंधित है, जिसमें वह निवास करता है और जो उसके प्रारंभिक अधिगम का स्त्रोत है। मानसिक स्वास्थ्य एवं पारिवारिक वातावरण के क्षेत्र में जो शोध हुए है, उनमें माध्यमिक शिक्षा के विद्यार्थी स्तर पर बहुत कम शोध दृष्टव्य होते है। जबकि माध्यमिक विद्यालयी स्तर मानवीय जीवन का वह महत्वपूर्ण काल है जिसमें इनका अध्ययन व परिणाम जानना बहुत आवश्यक है।

जबकि हमारी शिक्षा व्यवस्था मात्र उच्च अंकों से हमारी योग्यता का बोध संसार को कराती है, परिवार का अतिरिक्त दबाव छात्र के भीतर कुंठा, अवसाद और आत्महत्या जैसे विचारों के सष्जन हेतु जिम्मेदार बन जाता है।

मानसिक स्वास्थ्य

अच्छा मानसिक स्वास्थ्य व्यक्ति के अच्छे मानसिक वैचारिक एवं संवेगात्मक नियंत्रण तथा अभिव्यक्ति प्रदान करता है। यदि विद्यार्थी के सन्दर्भ में देखा जाए तो ज्ञात होगा कि विद्यार्थी अपना समस्त अधिगम कार्य करने हेतु मानसिक क्रियाऐं करता है। इसलिए उत्तम मानसिक क्रिया निष्पादन हेतु उसके मानसिक स्वास्थ्य का अच्छा होना बहुत आवश्यक है। वर्तमान परिदृश्य में विद्यार्थी जीवन अनेक आशाओं एवं कर्त्तव्यों से जुड़ा है। उसके ये कर्तव्य उसके राष्ट्र, समाज परिवार तथा उसकी निजी आवश्यकताओं एवं महत्वकांक्षांओं से जुड़े होते है। एक उत्तम भविष्य, एक सुखद वर्तमान तथा अनेक उत्तरदायित्व विद्यार्थी के कोमल कंधों पर धरे हुए है।

पारिवारिक वातावरण

मनुष्य एक सामाजिक जीव है। समाज की वह इकाई जिसमें मनुष्य जन्म लेता है, प्रारंभिक सुरक्षा प्राप्त करता है, जिस प्रकार उसके लालन–पालन, निर्देशन एवं मार्गदर्शन देने का दायित्व होता है। जहां वह शर्तरहित अपनत्व एवं प्रेम प्राप्त करता है। उसका परिवार कहलाता है।

शिशु को संस्कारित करने का उत्तरदायित्व परिवार का होता है। परिवार ही वह स्थान है, जो बालक में मानवीय मूल्य डालने का कार्य करता है। बालक जन्म के बाद पारिवारिक वातावरण में ही विकसित होता है। परिवार बालक का सामाजीकरण करने में मुख्य भूमिका का निर्वहन करता है। यह विदित है कि प्रत्येक व्यक्ति परस्पर पूर्णतः भिन्न है। उनका मानसिक, शारीरिक बौद्धिक तथा संवेगिक स्तर अन्य व्यक्तियों से पूर्णतः पृथक है। हर व्यक्ति अपने आप में विशिष्ट है और यह विशिष्टता उसे अपने पारिवारिक वातवारण और सांस्कृतिक संक्रमण द्वारा भी प्राप्त होती है। बालक अपने परिवार को देखकर ही सीखता है एवं उनका अनुकरण करता है, चाहे वे अच्छे कार्य हो या बुरे कार्य, इसलिए पारिवारिक वातावरण उसका व्यक्तित्व भी निश्चित करता है।

शोध के उद्देश्य

1 सरकारी माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत किशोरावस्था के छात्रों के मानसिक स्वास्थ्य एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य सह–संबंध का अध्ययन करना।

2 सरकारी माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत किशोरावस्था की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य सह–संबंध का अध्ययन करना।

शोध परिकल्पना

1 सरकारी माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत किशोरावस्था के छात्रों के मानसिक स्वास्थ्य एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य कोई सार्थक संबंध नहीं है।

2 सरकारी माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत किशोरावस्था की छात्राओं के मानसिक स्वास्थ्य एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य कोई सार्थक संबंध नहीं है।

अध्ययन परिसीमाऐं :

1 यह अध्ययन मात्र हंडिया तहसील के माध्यमिक कक्षा के विद्यार्थियों हेतु किया गया है।

2. यह अध्ययन मात्र ग्रामीण क्षेत्रों के किशोरावस्था के विद्यार्थियों हेतु सीमित है।

3. यह अध्ययन मात्र यू0 पी0 बोर्ड के किशोरावस्था के विद्यार्थियों तक सीमित है।

4. यह अध्ययन कक्षा–9 के विद्यार्थियों तक सीमित है।

शोध विधि

वर्णनात्मक अनुसंधान के अन्तर्गत सहसंबंधन सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

चर : यह शोध माध्यमिक कक्षा के विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण एवं मानसिक स्वास्थ्य के ज्ञान प्राप्ति के उद्देश्य की पूर्ति हेतु सम्पन्न किया गया है इस शोध में पारिवारिक वातवरण स्वतंत्र चर हैं, जबकि मानसिक स्वास्थ्य आश्रित चर है।

जनसंख्या न्यादर्श : जनसंख्या के रूप में उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा संचालित विद्यालयों को समग्र रूप में ध्यान में रखा गया। तद्पश्चात् 2 उच्चतर माध्यमिक विद्यालय का चयन यादृच्छिक प्रतिचयन विधि द्वारा निरपेक्ष भाव से किया गया है। शोध हेतु कुल न्यादर्श 160 है। हण्डिया क्षेत्र के विद्यालयों में 2 सरकारी विद्यालय, महानारायण शुक्ला इण्टर कालेज तथा हण्डिया इण्टर कालेज के कक्षा–9 के 80 छात्र और 80 छात्राऐं यादृच्छिक प्रतिचयन विधि द्वारा चयनित किए गए।

क्र.सं.	सरकारी विद्यालय	छात्र	छात्रायें	कुल
1	महानारायण शुक्ला इण्टर कालेज	40	40	80
2	हण्डिया इण्टर कालेज	40	40	80

शोध उपकरण

1. परिवारिक वातावरण सूची– इस सूची का निर्माण के0 एस0 मिश्र द्वारा निर्मित गया है।

2.. मानसिक स्वास्थ्य बैटरी:– इसे अरुण कुमार सिंह और अल्पना सेन गुप्ता द्वारा निर्मित किया गया है।

संख्यिकीय विधि

प्रस्तुत शोध में आंकड़ों के विश्लेषण एवं उनकी व्याख्या हेतु निम्न विधि का प्रयोग किया गया है :–

सहसम्बन्ध गुणांक कार्ल पियर्सन गुणन आर्घूण विधि

$$r = \frac{N\sum xy - \sum x, \sum y}{\sqrt{[N\sum x^2 - (\sum x^2)][N\sum y^2 - (\sum y^2)]}}$$

जहां x तथा y मूल प्रप्तांक हैं एवं x^2 तथा y^2 कमशः ग तथा y प्राप्तांकों का वर्ग है।

$\sum x$ = x प्राप्तांकों का योग

$\sum y$ = y प्राप्तांकों का योग $\supseteq \sum$

$\sum x^2$ = x प्राप्तांकों का वर्गों का योग

$\sum y^2$ = y प्राप्तांकों का वर्गों का योग

$\sum xy$ = x तथा y प्राप्तांकों के गुणनफलों का योग

N = व्यक्तियों की संख्या

परिकलित सहसम्बन्ध गुणांक की सार्थकता का निर्धारण करने के लिए 0.05 सार्थकता स्तर पर द्वि–पुच्छीय परीक्षण का प्रयोग किया गया।

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

विश्लेषण एवं व्याख्या

सारणी 1

सरकारी माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत किशोरावस्था के छात्रों के पारिवारिक वातावरण एवं मानसिक स्वास्थ्य से सम्बन्धित सह–सम्बन्ध गुणांक

चर	संख्या	न्यूनतम अंक	अधिकतम अंक	सहसम्बन्ध गुणांक(पियर्सन)
पारिवारिक वातावरण	160	240	296	.679
मानसिक स्वास्थ्य	160	63	96	

सारणी 1 के अवलोकन से यह ज्ञात है कि सरकारी माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत किशोरावस्था के छात्रों के पारिवारिक वातावरण एवं मानसिक स्वास्थ्य से सम्बन्धित सहसम्बन्ध गुणांक .679 है जो कि 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक है जिससे शून्य परिकल्पना सरकारी माध्यमिक विद्यालय में अध्ययनरत किशोरावस्था के छात्रों के मानसिक स्वास्थ्य पारिवारिक वातावरण के मध्य सार्थक सहसंबंध नहीं हैं, निरस्त हो जाती है और शोध परिकल्पना सरकारी माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत किशोरावस्था के छात्रों के मानसिक स्वास्थ्य एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य सार्थक सहसंबंध है, स्वीकार की जाती है अर्थात् यह कहा जा सकता है कि सरकारी माध्यमिक विद्यालय में अध्ययनरत किशोरावस्था के छात्रों के मानसिक स्वास्थ्य एवं पारिवारिक वातावरण के मध्य सार्थक सहसम्बन्ध है।

सरकारी माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत किशोरावस्था के छात्रों के पारिवारिक वातावरण एवं मानसिक स्वास्थ्य से सम्बन्धित सहसम्बन्ध गुणांक का चित्र 1

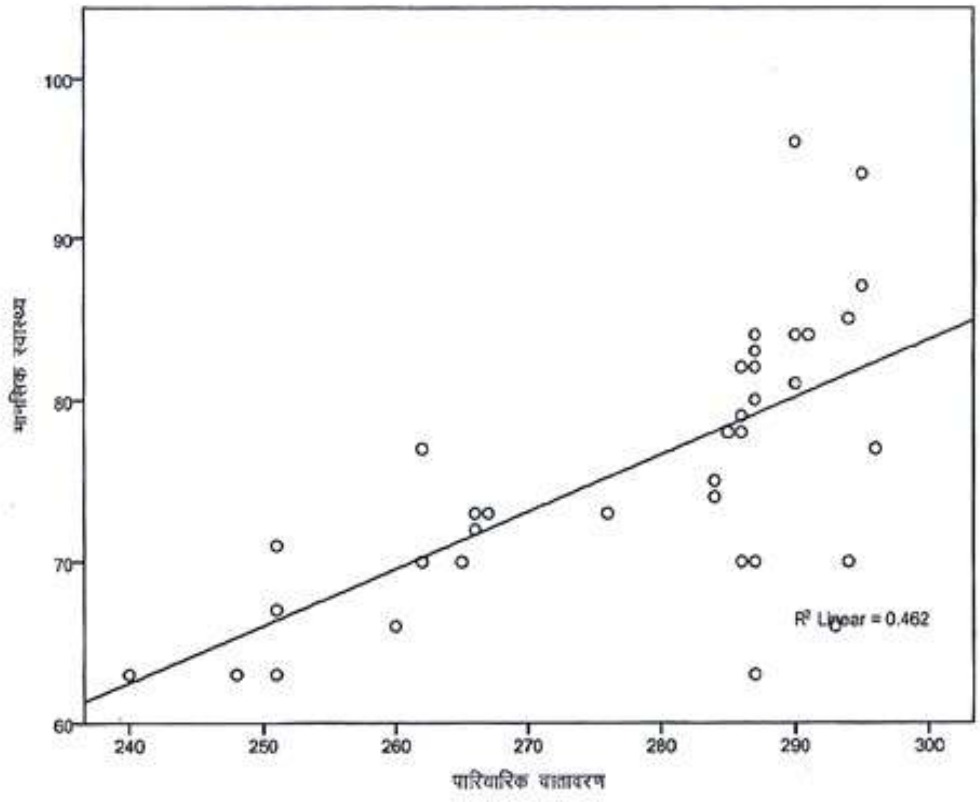

चित्र 1 के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि सरकारी माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत किशोरावस्था के छात्रों से सम्बन्धित पारिवारिक वातावरण का न्यूनतम अंक 240 तथा अधिकतम अंक 296 है तथा सरकारी माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययरत छात्रों से सम्बन्धित मानसिक स्वास्थ्य का न्यूनतम अंक 63 तथा अधिकतम अंक 96, इससे यह स्पष्ट होता है कि सरकारी माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत छात्रों से सम्बन्धित पारिवारिक वातावरण में जैसे–जैसे सकारात्मक परिवर्तन होता है वैसे–वैसे उनके मानसिक स्वास्थ्य में वृद्धि होती है। अतः कहा जा सकता है कि सरकारी माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत किशोरावस्था के छात्रों के पारिवारिक वातावरण एवं मानसिक स्वास्थ्य के मध्य सकारात्मक सहसम्बन्ध है।

सारणी 2

सरकारी माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत किशोरावस्था की छात्राओं के पारिवारिक वातावरण एवं मानसिक स्वास्थ्य के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।

चर	संख्या	न्यूनतम अंक	अधिकतम अंक	सहसम्बन्ध गुणांक (पियर्सन)
पारिवारिक वातावरण	40	240	296	.589
मानसिक स्वास्थ्य	40	61	95	

सारणी 2 के अवलोकन से यह ज्ञात है कि सरकारी माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत किशोरावस्था की छात्राओं के पारिवारिक वातावरण एवं मानसिक स्वास्थ्य से सम्बन्धित सहसम्बन्ध गुणांक .589 है जो कि 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थक है जिससे शून्य परिकल्पना सरकारी माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत किशोरावस्था की छात्राओं के पारिवारिक वातावरण एवं मानसिक स्वास्थ्य के मध्य सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है, निरस्त हो जाती है और शोध परिकल्पना सरकारी माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययरत किशोरावस्था की छात्राओं के पारिवारिक वातावरण एवं मानसिक स्वास्थ्य के मध्य सार्थक सहसम्बन्ध है, स्वीकार्य की जाती है अर्थात् यह कहा जा सकता है कि सरकारी माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत किशोरावस्था की छात्राओं के पारिवारिक वातावरण एवं मानसिक स्वास्थ्य के मध्य सार्थक सहसम्बन्ध है।

सरकारी माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत किशोरावस्था की छात्राओं के पारिवारिक वातावरण एवं मानसिक स्वास्थ्य से सम्बन्धित सहसम्बन्ध गुणांक का चित्र 2

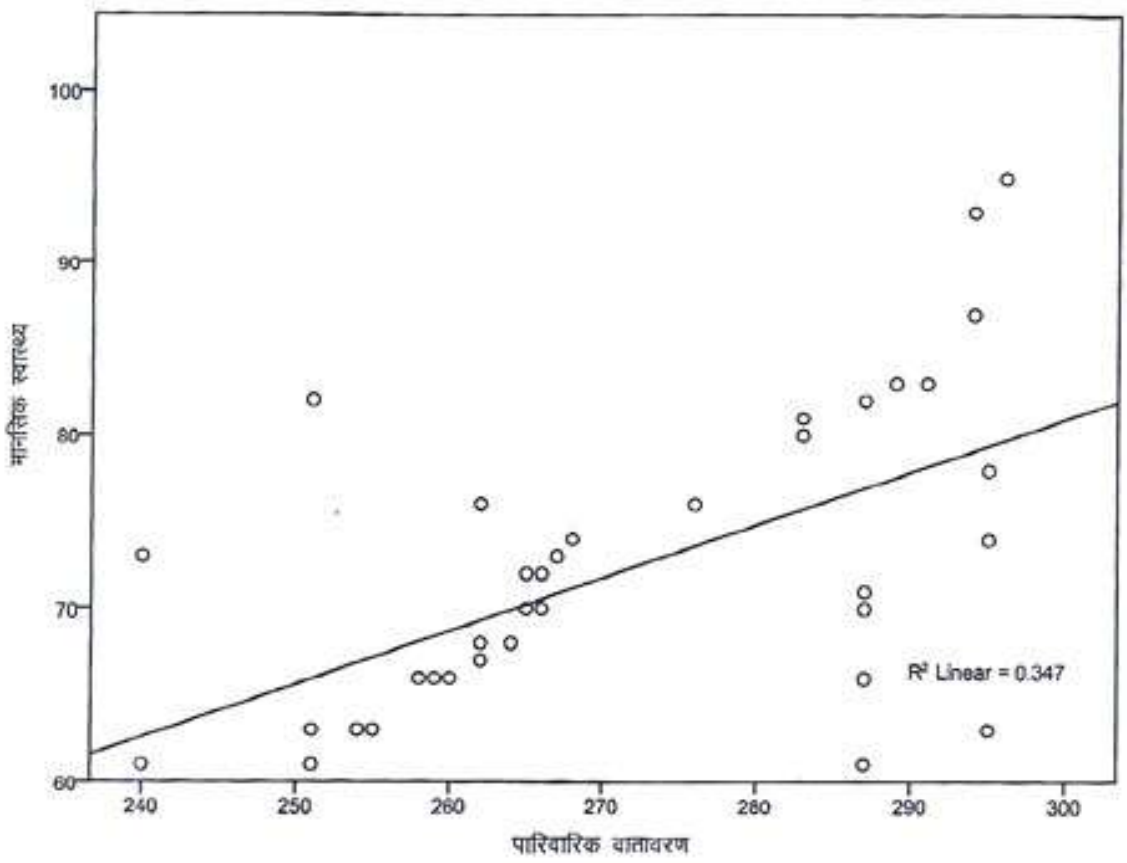

चित्र 2 के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि सरकारी माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत किशोरावस्था की छात्राओं से सम्बन्धित पारिवारिक वातावरण का न्यूनतम अंक 240 तथा अधिकतम अंक 296 है तथा सरकारी माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत किशोरावस्था की छात्राओं से सम्बन्धित मानसिक स्वास्थ्य का न्यूनतम अंक 61 तथा अधिकतम अंक 95, इससे यह स्पष्ट होता है कि सरकारी माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत किशोरावस्था की छात्राओं से सम्बन्धित पारिवारिक वातावरण में जैसे–जैसे सकारात्मक परिवर्तन होता है वैसे–वैसे उनके मानसिक स्वास्थ्य में वृद्धि होती है। अतः कहा जा सकता है कि सरकारी माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत किशोरावस्था की छात्राओं के पारिवारिक वातावरण एवं मानसिक स्वास्थ्य के मध्य सकारात्मक सहसम्बन्ध है।

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

निष्कर्ष

प्रस्तुत शोधपत्र में किशोरावस्था के बालकों के मानसिक स्वास्थ्य तथा पारिवारिक वातावरण की विमा हार्दिकता, सहानुभूति, संसजकता, उत्साह, संस्कृति दीक्षा, प्रतियोगिता के साथ धनात्मक सहसंबंध ज्ञात हुआ और किशोरावस्था की बालिकाओं में पारिवारिक वातावरण की विमा प्रजातांत्रिक अभिविन्यास, उत्साह एवं प्रतियोगिता का मानसिक स्वास्थ्य के साथ धनात्मक सहसंबंध ज्ञात हुआ, किन्तु प्रस्तुत शोधपत्र में किशोरावस्था के बालकों के मानसिक स्वास्थ्य का पारिवारिक वातावरण की विमा प्रजातांत्रिक अभिविन्यास, तनाव, द्वेशभाव तथा पुरस्कार तथा बालिकाओं के मानसिक स्वास्थ्य का पारिवारिक वातावरण की विमा तनाव के मध्य कोई संबंध नहीं ज्ञात हुआ।

सन्दर्भ

1. आनन्द. (1989)., बुच, एम.बी. (1983–88). फोर्थ सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजुकेशन. (1) एन.सी.इ.आर.टी.: न्यू देहली।
2. भटट, ए., अभिनाभावी, वी. (2011). होम इनवायरमेंट एंड सायकोलॉजिकल कॉम्पटेन्स ऑफ एडोलेसेन्टस. डिपार्टमेण्ट ऑफ साइकोलॉजी, कर्नाटका यूनिवर्सिटी: धारवाड़. *जर्नल ऑफ साइकोलॉजी* (2)1. पृष्ठ **57–63.**
3. बोस्टानी, एम0, नादरी, ए., नसब, ए.आर. (2014). अ स्टडी ऑफ रिलेशन बिटवीन मेंटल हेल्थ एण्ड अकेडमिक परफोर्मेस ऑफ स्टूडेन्टस ऑफ द इस्लामिक आजाद यूनिवर्सिटी. अहवाज ब्रांच. *सोशल एण्ड बिहेवयरल सांइस* (116). पृष्ठ **163–165.**
4. ब्रहाभटट, एस.जी. (2016). अ स्टडी ऑफ मेंटल हेल्थ ऑफ हायर सेकेण्डरी स्कूल स्टूडेंटस. जर्नल ऑफ इनफॉरमेशन नालेज एण्ड रिसर्च इन हयूर्मेनिटीज एण्ड सोशल साइंस (4)1. पृष्ठ **215–218.**
5. चौधरी, एन.के. (2013). अ स्टडी ऑफ मेंटल हेल्थ इन रिलेशन टू फैमिली इन्वायरमेंट एंड जेंडर ऑफ स्कूल गोइंग एडोलेसेन्टस. इण्डियन जर्नल ऑफ रिसर्च. (3)4.
6. क्राउटर व अन्य. (2004). फैमिली टाइम एण्ड साइकोलॉजिकल एडजस्टमेंट ऑफ एडोलेसेन्ट सिबलिंग एंड देयर पैरेन्टस. *जर्नल ऑफ मैरिज एंड फैमिली.* (66). पृष्ठ **147–162.**
7. देब, एस., मैग्गर, के., भटटचार्या, बी., सन. जे. (2013). रोल ऑफ होम इनवायरमेन्ट. पैरेन्टल केयर. पैरेन्ट पर्सनॉलिटी एंड देयर रिलेशन टू एडोलसेन्टस मेंटल हेल्थ. *जर्नल ऑफ साइकोलॉजी एंड साइकोथरेपी.* (2015) (5) (6) 1000223.
8. दीपशिखा., एंड भनोट, एस. (2011). रोल ऑफ फैमिली एनवायरमेंट ऑन सोशियो इमोशनल एडजस्टमेंट ऑफ एडोलेसेन्ट गर्ल्स इन रुरल एरिया ऑफ ईस्टर्न यू पी., *जर्नल ऑफ साइकोलॉजी.* 2(1). पृष्ठ **53–56.**
9. गिलाविन्द, ए., शुआराबी, एम. (2016). इन्वेस्टिगेंटिग द रिलेशनशिप बिटवीन मेंटल हेल्थ एंड अकेडमिक अचीवमेंट ऑफ डेंटल स्टूडेन्टस ऑफ अल्वाज जुन्दीशापुर यूनिवर्सिटी ऑफ मेडिकल साइंसेज. इन्टरनेशल जर्नल ऑफ मेडिकल रिसर्च एण्ड हेल्प साइंसेज. 5(75).
10. ग्रोखन्ट, एच.डी. (1998). एडोलेसेन्ट डेवलेपमेट इन फैमिली कन्टेल्स इन डेमन. डब्लू. एण्ड आइसेबर्ग एण्ड हैन्डबुक ऑन चाइल्ड साइकोलॉजी सोशल इमोशनल एण्ड पर्सनॉलिटी डवेलपमेट 5जी एडीशन (1097–1149). न्यूयार्क, वाइली।
11. गुप्ता, एस.पी. (2017). रिसर्च इन्ट्रोडक्टरी: कॉन्सेप्ट मेथडस एंड टेक्नीक्स. शारदा पुस्तक भवन: इलाहाबाद।
12. मल्होत्रा, टी. (2016). इन्फ्लुऐंस ऑफ फैमिली एनवायरमेंट ऑन मेंटल हेल्थ ऑफ स्टूडेन्टस एण्ड फॉर्मल ऑपरेशन स्टेज ऑफ कॉग्नीटिव डवेलपमेण्ट. इन्टरनेशल जर्नल ऑफ इनवायरमेंट इकोलॉजी फैमिली एंड अर्बन स्टडीज. 6(2). पृष्ठ **13–24.**
13. मंगल, एस.के. (2016). शिक्षा मनोविज्ञान. पी.एच.डी. लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड: दिल्ली।

20

साहित्य और संगीत

प्रो० प्रवीण सैनी
प्रोफेसर, संगीत वादन (तबला)
गोकुलदास हिन्दू गर्ल्स कालिज, मुरादाबाद।

संगीत और साहित्य का परस्पर संबंध प्राचीन काल से है। यह दोनों मानव विकास के दो अंग हैं। दोनों का उद्‌गम मानव वंश के उद्‌गम से ही हुआ। जैसे जैसे मानव संस्कृति का विकास होता गया वैसे वैसे भाषा और साहित्य के साथ संगीत का भी विकास हुआ। सभी ललित कलाओं के साथ भी यही हुआ क्योंकि साहित्य की तरह ललित कलाओं की निर्मिती भी मानवीय भावनाओं के प्रकृटीकरण के लिए ही हुई है। इन ललित कलाओं जैसे–चित्र शिल्प, नाटक, नृत्य, अभिनय, साहित्य संगीत इत्यादि का आस्वाद लेना, उनसे आनंद उठाना सुसंस्कृत होने का एक लक्षण माना जाता है। स्थूल से सूक्ष्म की ओर जाने वाली यह कला अपनी प्रकृटिकरण के लिए किसी न किसी बाह्य माध्यम पर आधारित होती हैं। यानी किसी माध्यम द्वारा रसिकों तक पहुँचती हैं। जैसे जैसे माध्यम का महत्व कम होता है, वैसे वैसे कला उच्चतर कोटि तक पहुँचती है। कंठ संगीत का माध्यम से मानवीय कंठ है, इसलिए सभी ललित कलाओं में गायन (वोकल म्यूजिक) सबसे उच्चकोटि का माना जाता है। वाद्य संगीत में साहित्य नहीं होता, नृत्य में सिर्फ साथ संगीत के लिए ही साहित्य होता है। इसलिए इन दोनों की अपेक्षा कंठ संगीत में साहित्य का महत्व थोड़ा अधिक है। इसलिए इस आर्टिकल में इस शब्द का प्रयोग सिर्फ कंठ संगीत के संदर्भ में किया गया है।

'स' के उच्चारण में ही साहित्य एवं संगीत का समावेश है। जब हम 'स' स्वर को गाते हैं तो अक्षर 'स' साहित्य है एवं इसके पीछे 'अ' की ध्वनि संगीत है। पुराणों में वर्णित है कि भगवान शंकर के मुख से राग भैरव की उत्पत्ति हुई उनके पदचापों से साहित्य का जन्म हुआ। देवी सरस्वती वीणा धारिणी है तो पुस्तकधारणी भी हैं। सम्पूर्ण वेद गेय हैं। रामायण महाकाव्य को लव–कुश इकतारे पर गाते थे। कवियों में चाहे कबीर हों या सूर, तुलसी हों या मीरा सभी के साहित्य में संगीत के तत्व बराबर दृष्टिगत होते रहे हैं। इन सभी संत कवियों की रचनाओं में राग रागिनियों का जिक्र मिलता है जो इस बात का सूचक है कि मध्यकालीन इन साहित्यकारों को उस कल में प्रचलित राग रागिनी पद्धति का भी पूर्ण ज्ञान था। सूरदास जी ने तो अपनी रचनाओं में स्वयं को एक कवि के साथ ही एक संगीतज्ञ भी होना स्वीकार किया है। इस प्रकार हम देखते हैं कि अति प्राचीन काल से साहित्य एवं संगीत में एक अटूट सम्बन्ध है।

दोनों ही कलाओं में अनेकानेक समान्ताएं हैं। काव्य एवं संगीत दोनों ही लय पर अवलम्बित हैं। काव्य की रचना छन्दों में होती आयी है और छन्द लय के ही आधार पर टिका हुआ नाद–विधान है। वैसे नवीन कवियों की रचना छन्द के वर्णों एवं मात्राओं से मुक्त है फिर भी ताल और लय के साथ चलती है। दूसरी तरफ संगीत का आधार भी लय है। लय और ताल तो भारतीय संगीत का प्राण है।

संगीत एवं संगीत दोनों का संबंध मस्तिष्क से न होकर हृदय से हैं। मानव हृदय की कोमलतम भावनाओं को जब स्वर और लय के ढ़ांचे में ढ़ाल दिया जाता है तो संगीत की सृष्टि होती है। उसी प्रकार साहित्यकार भी अपने हृदय की उमड़ती मचलती भावनाओं को काव्य का रूप देता है। यद्यपि साहित्य और संगीत दोनों ही मस्तिष्क को भी प्रभावित करते हैं, किन्तु दोनों की उतपत्ति हृदय से ही होती है। दोनों का उद्देश्य आनन्द की अनुभूति कराना है।

संगीत के स्वर, ताल और लय का विचार साहित्य के रस की दृष्टि से किया जाता है। प्राचीन सांगीतिक ग्रंथों के अनुसार 'स' और 'प' श्रंगार एवं हास्य रस के लिए उपयुक्त माना गया है। 'थ' को वीभत्स और भयानत रस के लिए उपयुक्त माना गया है। यही नहीं संगीत के लय में भी रस दिखता है। मध्य लय सं श्रंगार और हास्य रस, विलम्बित लय से वीभत्स और भयानक रस और द्रुत लय से वीर, रौद्र और अद्‌भुत रस की निष्पत्ति होती है।

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

हम शास्त्रीय संगीत की ओर दृष्टिपात करें तो इसमें शब्दों की अपेक्षा स्वरों का अधिक महत्व दिखता है जिसके कारण शब्दों की खूब तोड़–मरोड़ होती है और स्वर–शब्द संयोग नश्ट हो जाता है। जबकि उपशास्त्रीय संगीत की ठुमरी गायन विधा में साहित्य होने के कारण भावपूर्ण साहित्य का प्रयोग ठुमरी में हमेशा से ही होता रहा है।

यहां साहित्य शब्द की व्याख्या करना भी अनुचित नहीं होगा। वैसे तो लिखित साहित्य की अनेक परिभाषाएं होती हैं, लेकिन सभी विद्वानों ने जिसको मान्य किया है, वह साहित्य की परिभाषा है,

''शब्दार्थौ स्तोम काव्य्म्''

जहां शब्द और काव्यमेहता अपने अर्थ के साथ प्रकट होती है, वहां साहित्य के निर्मिति हुई ऐसा कहते हैं। जो भी शब्द गाए जाएंगे उनका अर्थ अगर आसानी से समझा जा सके, और वह शब्द उच्चारण के लिए भी आसान हो, तो वह काव्य सुरों के द्वारा अर्थ के साथ रसिकों तक पहुँची जाता है। ''वाक्यम रसात्मक काव्यम'' ऐसे भी एक व्याख्या है। जो वाक्य रसात्मक हैं वह साहित्य है। यह लक्षण काव्य पर भी लागू है। गायन वादन में रचनात्मक होना अनिवार्य है।

कंठ संगीत में गाए जाने वाले गीतों में शब्द ही भाव प्रगटिकरण के मूल साधन है। इस गायकी के हम हमेशा तीन भाग करते हैं। ध्रुपद गायकी, ख्याल गायकी, और उप शास्त्रीय या ठुमरी/दादरा गायकी सुगम संगीत और लोक संगीत भी अपनी शब्दप्रधान गायकी के लिए ही प्रसिद्ध है। क्योंकि सुरों के साथ–साथ भाषा या साहित्य का भी उतना ही महत्व है संगीत में।

संगीत के इतिहास की मनोरंजक कथा भी साहित्य के इतिहास की तरह है। संस्कृत भाषा से या द्रुपद गायकी से शुरू होकर यह संगीत आज के जमाने के गीत तक पहुँचा है। वेदों के रिचा गायन से शुरू होने वाला यह संगीत प्रादेशिक भाषा का साहित्य भी गाने लगा। भारत के उत्तर भाग में पनपने वाले इस संगीत में हिंदी और इसकी उप भाषाओं का साहित्य ही मुख्य रूप से गाया जाता है। यहां हम अमीर खुसरों का नाम लिए बिना आगे नहीं बढ़ सकते। 13वीं शताब्दी का यह संगीतकार और साहित्यकार अपनी कहमुकरियां आदि कविताओं के कारण प्रसिद्ध है। उन्होंने ख्याल गायकी की शुरूआत की है माना जाता है। ख्याल यानीकि विचार या कल्पना जिसे आईडिया भी कहते हैं। जब एक सुवंचन–सुविचार दो पंक्तियों में लिख कर गाया जाता है तो उसे ख्याल कहते हैं। शब्दों द्वारा प्रस्तुत होने वाला और गायकी के द्वारा सुना जाने वाला ख्याल अपने आप में ही एक साहित्य होता है। इस छोटे से काव्य में कभी विरही मन की व्यथा व्यक्त की जाती है, कभी किसी ऋतु का वर्णन होता है, कभी देवी देवताओं की प्रस्तुति और स्तुति होती हैं। विलंबित के बाद जब द्रुत गति से चलने वाला छोटा ख्याल गायक पेश करता है, तो तान बोलतान के साथ संगीत शब्दों का सहारा लेकर अपनी चरम सीमा पर पहुँच जाता है।

अमीर खुसरो के बाद राजा मानसिंह तोमर आते हैं। उन्होंने पुराने विष्णुपद को द्रुपद का रूप दिया और पर्याप्त प्रचार–प्रसार भी किया। कभी–कभी तो ऐसे शब्दों का भी गीत बनता है जिससे महफिल में जान तो आ जाती है लेकिन ''शब्दार्थौ सहितौ काव्यम'' इस परिभाषा में वह नहीं आता है, वह गीत है इसके बाद का काल भक्तिकाल है। इस काल में जो भक्ति रस पूर्ण भजन या दोहे प्रस्तुत किए गए, वह सारे गेय हुआ करते थे। इसमें एक ज्ञानाश्रियों शाखा है और दूसरी सुगुण–भक्ति करते वाले कवियों की शाखा है। निर्गुणी शाखा में कबीर, नानक, दादू दयाल, जैसे संतकवि जायसी जैसे महा काव्य निर्माता कवी भी है। यह संत कभी कुछ हद गायक भी थे। इसलिए उनके द्वारा प्रस्तुत किए गए साहित्य में गेयता अधिक दिखती है। भगवान की स्तुति और लीला यह संत अपने काव्यों के द्वारा करते थे। उसके बाद आता है रूचिरा। जब कला और साहित्य दोनों का राज आश्रय मिला था। श्रृंगाररसपूर्ण काव्य की निर्मिजी इस कॉल की प्रस्तुति है। ठुमरी गायकी, का प्रचलन भी इसी काल से अधिक मात्रा में हुआ। इसमें ठुमरी, दादरा, कजरी चैती, होरी बारहमासा जैसे साहित्य प्रकार की गायकी में प्रस्तुत करने लगे। इस श्रंगारीकता का संगीत के साहित्य पर इतना बुरा प्रभाव पड़ा कि एक समय ऐसा आया, जब भले घर के बच्चे गान विद्या से वंचित हुए। संगीत में इस प्रकार का जो साहित्य था, उस का प्रभाव नष्ट करने के लिए संगीत जगत में एक मसीहा आगे आया। उनका नाम था पंडित विष्णु दिगंबर पलुस्कर। गाधर्व महाविद्यालय की स्थापना करके उन्होंने भले घर की बहू बेटियों जुबान पर अच्छे गीत खुद स्वरलिपि बद्ध करके बनाकर दिए। स्वरों की रचना की भक्ति काव्य से कुछ गीत चुने, अपनी किताबें छापकर है काव्य संगीत सहित घर घर में पहुँचा दिया।

भरत मुनित ने 'नाटय शास्त्र' में संगीत गायन, वादन और नर्तन तीनों का संयोग है। रस–निष्पत्ति की चर्चा और अध्ययन के लिए संस्कृत और हिंदी ज्ञाताओं के अलावा कला साधकों का इनसाइक्लोपीडिया भरतमुनि का 'नाट्यशास्त्र' ही है। इससे साहित्य और संगीत के एकत्व को समझा जा सकता है। हम इन्हें अलग–अलग मानकर न चलें तो ही संगीत और साहित्य एकांगी होने से बच सकेंगे। संगीत और साहित्य पर्यावरण, चिकित्सा, मनुष्य और समाज से जुड़े महत्वपूर्ण अनुशासन हैं। भारतीय लोक संगीत में इन प्रश्नों के उत्तर खोजे जा सकते हैं। यहां तक कि इलेक्ट्रानिक मीडिया से जुड़े विशुद्ध समाचार चैनल प्राइम टाइम खबरों को शक्तिशाली ढंग से प्रस्तुत करने के लिए प्रत्यक्ष और पाश्व में संगीत पर आश्रित हैं। विज्ञापन और फिल्मों की तो बात ही क्या कहें? संगीत और साहित्य की सही संगति के बिना ये सांसे नहीं ले सकते। बाज़ारूपन से बचने की दोनों को ही जरूरत है। स्थापत्य, मूर्तिकला, मिथक, पुराण और इतिहास को संगीत और साहित्य की पकड़ के बिना समझ पाना कठिन है क्योंकि हमारे पुराण और इतिहास के दस्तावेजों में दोनों की अहम भूमिका है। महाकवि सूर्यकांत त्रिपाठी निराला के छायावादी गीतों में संगीत के ताल, वाद्य

और नृत्य की उपस्थिति उनके संगीत ज्ञान की परिचालक है। हिंदी साहित्य के उद्भव से आज तक चारण गीतोंः सिद्धों के चर्या गीतों, विद्यापति की पदावली और मध्यकालीन सुगण–निर्गुण भक्तों की साहित्य साधना में राग–रागिनियों का चयन व पकड़ मौजूद है। रीतिकालीन समय में महान संगीत ग्रंथों की रचना और संगीत की विधाओं का स्वरूप आज भारतीय संगीत में एक अनुशासन व अध्ययन के विषय के रूप में स्थापित हो चुका है। निराला की रचनाओं में संगीत के सैद्धांतिक प्रयोग इसी परम्परा से ग्रहण किये गये हैं। 'प्रबंध प्रतिमा' में निराला कहते हैं, 'गीत, वाद्य आदि की कुछ समझ लेखक को रहनी चाहिए।' निराला ने अपनी रचनाओं में अनके संगीत रूपकों का प्रयोग किया है। उनकी गेय और छनद–मुक्त कविता में संगीत–सिद्धांत के अभिनव प्रयोग मिलते हैं। मालकोंस, भैरव और यमन रागों का पद–विन्यास बादल–राग, सरोज–स्मृति और 'प्रेयसी' जैसी कविताएं इन रागों के सैद्वान्तिक पक्ष को सामने रखती हैं। मालकोंस कोमल प्रकृति और सौंदर्य का राग है। 'सरोज–स्मृति' में वयः सन्धि की देहरी पर खड़ी सरोज का सौंदर्य 'ज्यों मालकोश नव वीणा पर' उसकी कोमलता और सौंदर्य की अभिव्यव्यक्ति की रूप में स्मृति–बिम्बों द्वारा प्रकट हुआ। वहीं सरोज के कण्ठ में पिता की उदात्तता के अनुरूप भैरव राग का स्वर–संधान निराला के रागों की प्रकृति की समझ को प्रभावित करता है। संगीत मे मालकोश वंसत और शरद के प्रकृति बिम्बों के साथ प्रकट होता है, वहीं इसकी रागनियों में बहार, शहाना, छाया, बागेश्वरी जैसे रागों का नाद–सौंदर्य है जबकि इसके सहचर रागों में जै जैवन्ती और शंकरी के नाम लिए जा सकते हैं। बादल–राग निराला के भीतर उमड़–घुमड़ कर बरसने वाले बादलों की कथा–कहानी है। जल तत्व का बोध और बादलों की गर्जना रोग 'इमन' के सैद्धान्ति पक्ष के साथ राग की उत्पत्ति और विश्लेषण तक जाती है। 'उमड़ सृष्टि के अंतहीन अम्बर से.. अधीर विक्षुब्ध ताल पर/एक इमन का–सा अति मुग्ध विरामा' में 'इमन' राग श्रीराग का पुत्र माना जाता है। इसके तीव्र और मध्यम स्वर रागों की नाद–प्रक्रिया से सम्बद्ध हैं। कल्याण और केदार रागों के मिलने से यह सम्पूर्ण जाति का राग बादल की सम्पूर्ण क्रिया–प्रक्रिया का बोध कराता है। श्रीराग के गाने से सूखे वृक्ष हरे हो जाते हैं। इमन इसकी संतान है अतः बादल राग में इमन राग का सार्थक, सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक प्रयोग हुआ है। इसकी सहचरी चन्दावती है। श्रीराग धैवत स्वर की संतान और पृथ्वी की नाभि से उत्पन्न माना गया है। इमन में यह छवि प्रकृति और पर्यावरण के निकट है। राग इमन मध्य सप्तक के शुद्ध गान्धार पर अपना न्यास या विराम लेता है। निराला ने अपने पद–बंधों में 'चौंक चमक छिप जाती विद्युत' जैसे प्रयोग रागों के विराम और न्यास के आधार पर किये हैं। ताल में द्रुत लय और गति में बादलों के ध्वनि नाद को संगीत रूपक से समझा जा सकता है। सामवेद के गायन में 12 वर्णों वाले जगती छनद का प्रयोग किया जाता था। निराला ने 'इन्द्रधनुश के सप्तक तार, व्योम और जगती के राग उदार.. गाते हो बारम्बार! मुक्त! तुम्हारे मुक्त कंठ में स्वरारोह, अवरोह विधाता' जैसा प्रयोग बिना संगीत की समझा के अधूरा है। निराला का यह नाद–संचरण संगीत और साहित्य के संदर्भ में शीघ्र का नया संभावनाओं से भरा हुआ है। इसके लिए भरतमुनि ने नाट्य शास्त्र, संगीत शास्त्र और काव्य शास्त्र की सूक्ष्म पकड़ की ज़रूरत है। जहां इतिहास अपनी परम्परा से, राजा अपनी वंशावलियों से, काव्य शास्त्र अपने सम्प्रदायों से और संगीत अपने घरानों से पहचाने जाते हैं वहीं संगीत और साहित्य का ऐक्य इन सभी विधानों को एक स्थान पर केंद्रित करने में सक्षम है। अन्ततः दोनों ही अनुशासनों के केंद्र में मनुष्य और समाज उपस्थित हैं और इनसे जुड़े गहरे मानवीय और सामाजिक प्रश्न भी।

इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि साहित्य और संगीत दोनों एक दूसरे पर आश्रित हैं। एक के बिना दूसरा अधूरा है। कविता कितनी भी अच्छी क्यों न लिखि गयी हो उसे जनमानस के ह्रदय में उतरने के लिए संगीत का आश्रय लेना ही पड़ता है। ठीक उसी प्रकार सांगीतिक स्वर कविता के सांचे में ढ़ल कर जन–जन के दिलों में उतर जाते हैं। यदि गीत में गीत के बोल उसकी शरीर है तो उसमें प्रयुक्त संगीत उसकी आत्मा है। संगीत को अपनी अभिव्यक्ति के लिये साहित्य की एवं साहित्य को संगीत की आवश्यकता होती है। दोनों कलाएं एक दूसरे से अभिन्न एवं अन्योन्याश्रित हैं।

सन्दर्भ

1. (2010). भैरवी (संगीत शोध पत्रिका)।
2. (2021). भैरवी (संगीत शोध पत्रिका)।
3. शर्मा, भगवतशरण. हिन्दुस्तानी संगीत शास्त्र।
4. श्रीवास्तव, प्रो0 हरिश्चन्द्र. संगीत निबन्ध संग्रह।
5. बसन्त. संगीत विशारद।
6. (2012). संगीत (पत्रिका). अक्टूबर।
7. (2011). संगीत (पत्रिका). मई।

21

एक नजर में : हरित क्रान्ति

गौरव शर्मा
शोध छात्र
डॉ0 राममनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, अयोध्या (उ0प्र0)
ईमेलः *gauravsharma0302@gmail.com*

सारांश

हरित क्रांति के बारे में जानने के लिए हमें बहुत पहले जाना होगा। जब द्वितीय विश्व युद्ध समाप्त हुआ था और उस समय जापान में विजयी अमेरिकी सेना थी, साथ ही कृषि अनुसंधान सेवा के एस. सिसिली सैल्मन भी थे। जापान की स्थिति को देखकर यह सोचा गया कि जापान का पुनर्निर्माण कैसे किया जाए। सैल्मन का विचार कृषि उपज पर था, उसने मोरिन नामक गेहूं की एक किस्म पाई, जिसमें अनाज बहुत बड़ा था। इसके बेहतर परिणामों के लिए सैल्मन ने इसे शोध के लिए अमेरिका भेजा। 13 साल के प्रयोग के बाद साल 1959 में गेन्स नाम की किस्म तैयार की गई।

इसके बाद नोर्मन बोरलॉग ने मैक्सिको की सर्वोत्तम किस्म के साथ संकरण कर नई किस्म तैयार की, जिसके बाद हरित क्रांति की शुरुआत हुई। अगर आप भी जानना चाहते हैं कि भारत में हरित क्रांति के जनक हरित क्रांति क्या है, तो इसके बारे में जानकारी यहां दी गई है। हरित क्रांति का अर्थ देश के ऐसे सिंचित और सिंचित कृषि क्षेत्रों में अधिक उत्पादन करके संकर और बौने बीजों का उपयोग करके कृषि उत्पादन में वृद्धि करना है। भारत में हरित क्रांति कृषि की विकासशील पद्धति का परिणाम है, जो 1960 के दशक में आई। अधिक आधुनिक कर प्रौद्योगिकी द्वारा पारंपरिक कृषि के प्रतिस्थापन के रूप में जाना जाता है।

प्रस्तावना

भारत में हरित क्रांति की शुरुआत 1966–1967 में हुई। इसे शुरू करने का श्रेय प्रोफेसर नॉर्मन बोरलॉग को जाता है। लेकिन भारत में एम.एस. स्वामीनाथन को इसका जनक माना जाता है। भारत के तत्कालीन कृषि एवं खाद्य मंत्री बाबू जगजीवन राम को हरित क्रांति का प्रणेता माना जाता है, उन्होंने एम.एस. भविष्य। हरित क्रांति का अर्थ उच्च उपज वाले संकर और बौने बीजों का उपयोग करके देश के सिंचित और असिंचित कृषि क्षेत्रों में फसल उत्पादन में वृद्धि करना है। हरित क्रांति भारतीय कृषि में लागू विकास पद्धति का परिणाम है, जो 1960 के दशक में पारंपरिक कृषि के रूप में उभरी।

चूंकि यह तकनीक कृषि क्षेत्र में अचानक आ गई, इसने तेजी से विकास किया और कम समय में ही ऐसे आश्चर्यजनक परिणाम दिए कि देश के योजनाकारों, कृषि विशेषज्ञों और राजनेताओं ने इस अप्रत्याशित प्रगति को 'हरित क्रांति' का नाम दिया। हरित क्रांति शब्द इसलिए भी दिया गया क्योंकि इसके फलस्वरूप भारतीय कृषि निर्वाह स्तर से ऊपर उठकर अधिशेष स्तर पर आ गई थी।

हरित क्रांति के उद्देश्य

- **अल्पावधि के लिए** :– भारत में भुखमरी की समस्या को दूर करने के लिए दूसरी पंचवर्षीय योजना के दौरान हरित क्रांति की शुरुआत की गई थी।
- **दीर्घावधि के लिए** :– दीर्घावधि उद्देश्यों में ग्रामीण विकास, औद्योगिक विकास पर आधारित समग्र कृषि का आधुनिकीकरण; अवसंरचना विकास, कच्चे माल की आपूर्ति आदि।
- **रोजगार** :– कृषि और औद्योगिक दोनों क्षेत्रों में श्रमिकों को रोजगार प्रदान करना।
- **वैज्ञानिक अध्ययन** :– अनुकूल/प्रतिकूल जलवायु और रोगों को सहन करने में सक्षम स्वस्थ पौधों का उत्पादन करना।
- **कृषि का वैश्वीकरण** :– गैर–औद्योगिक देशों में प्रौद्योगिकी का प्रसार और प्रमुख कृषि क्षेत्रों में निगमों की स्थापना को प्रोत्साहित करना।

हरित क्रांति के मूल तत्व

- कृषि क्षेत्र का विस्तारः हालांकि 1947 से कृषि योग्य भूमि के क्षेत्र का विस्तार किया जा रहा था, लेकिन यह खाद्यान्न की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं था। हरित क्रांति ने कृषि भूमि के विस्तार में मदद की है।
- दोहरी फसल प्रणालीः दोहरी फसल प्रणाली हरित क्रांति की एक प्राथमिक विशेषता थी। इसके तहत एक वर्ष में एक के स्थान पर दो फसलें प्राप्त करने का निर्णय लिया गया। प्रति वर्ष एक फसल प्राप्त करना इस तथ्य पर आधारित था कि वर्षा ऋतु वर्ष में एक बार ही आती है। हरित क्रांति के द्वितीय चरण में प्रमुख सिंचाई परियोजनाओं को पानी की आपूर्ति के लिए शुरू कर दिया है। अनेक प्रकार की कृषि में प्रयुक्त होने वाले भौतिक साधनों को अपनाया ताकि आम जीवन सरल हो सके।
- भारतीय वैज्ञानिकों की पहली प्राथमिकता उच्च गुणवत्ता वाले आनुवंशिक बीजों का उपयोग करके उच्च उपज वाले बीजों का उपयोग करके फसलों की उपज में वृद्धि करना था। भारतीय कृषि विज्ञान ने मोटे अनाजों के अधिक उन्नत बीजों का विकास किया जिससे प्राथमिक फसलों की उपज में वृद्धि हुई।
- हरित क्रांति में शामिल कुछ प्रमुख फसलें : प्रमुख अनाजों या मोटे अनाजों को अनाजों में विशेष स्थान दिया गया। शेष द्वितीयक फ़सलों को इस क्रान्ति से बाहर रखा गया। लंबे समय तक इस क्रांति का मुख्य अनाज मोटे अनाज के आगे रखा गया।

भारत में हरित क्रांति की पृष्ठभूमि

- वर्ष 1943 में अकाल और अत्यधिक वर्षा जैसे कई प्रकार के मौसम कारणों से भारत में त्रासदी हुई थी। अकाल और अत्यधिक वर्षा के कारण पश्चिमी राज्यों की लगभग 40 लाख जनसंख्या मर गई।
- लेकिन स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हमारी भारत सरकार ने कृषि के क्षेत्र में अभूतपूर्व परिवर्तन किए। कृषि कार्य में परिवर्तन के साथ–साथ भारत सरकार ने अनेक आवश्यक कदम उठाए।
- भारत की बढ़ती जनसंख्या ने कृषि कार्य में परिवर्तन को भी प्रभावित किया। तब सरकार ने इस दिशा में आवश्यक लाभ दिये, जिससे जनसंख्या एवं कृषि में आवश्यक सुधार किया जा सके।
- हरित क्रांति ने भारतीय कृषि के आकार और प्रकार को बदल दिया। विभिन्न प्रकार के उन्नत कार्यक्रम आयोजित करना। उनके लिए नए शारीरिक साथी और यंत्र विकसित किए गए।
- कृषि के लिए विकसित मशीनों के लिए अमेरिका की विभिन्न कंपनियों के साथ कई प्रकार के कृषि समझौते किए गए और उन्नत मशीनों को भारत लाया गया।
- भारत में हरित क्रांति के नाम पर मुख्य रूप से मोटे अनाजों की क्रांति हुई क्योंकि इस क्रांति में मोटे अनाजों की उपज में उल्लेखनीय वृद्धि हुई जबकि अन्य खाद्य पदार्थों में मोटे अनाजों की उपज की तुलना में मात्र दो गुना वृद्धि हुई।

हरित क्रांति के सकारात्मक प्रभाव

हरित क्रांति के आर्थिक प्रभाव

- भारत में हरित क्रान्ति के अन्तर्गत अच्छी कृषि मशीनों के प्रयोग तथा किसानों को सही जानकारी देने के कारण कृषि में अभूतपूर्व प्रभाव पड़ा, जिससे फसल उत्पादन में अत्यधिक वृद्धि हुई। यह उत्पाद अपने प्रारंभिक उत्पादन से बहुत अधिक था। इसके बाद भी उत्पादन में वृद्धि होती रही जिससे भारत विकासशील देशों में शामिल हो गया।
- भारत में हरित क्रांति के बाद कई प्रकार की आधुनिक मशीनों का प्रयोग किया जाने लगा, जिससे कम समय और श्रम में अधिक कार्य करना संभव हो गया, जिसके फलस्वरूप एक आम किसान भी अधिक अन्न पैदा करने में सफल हो सका।
- कृषि में उन्नत बीजों और आधुनिक कृषि यंत्रों के प्रयोग से भारतीय किसानों ने उर्वरकों, कीटनाशकों तथा फसलों में प्रयोग होने वाले अन्य रसायनों का प्रयोग करना शुरू किया, तब भारतीय बाजार में उनकी मांग बढ़ने लगी, जिससे भारत में औद्योगीकरण का विस्तार हुआ।
- भारत में हरित क्रान्ति के प्रारम्भ के फलस्वरूप कृषि के विस्तार में आवश्यक भौतिक साधनों के साथ–साथ कृषकों द्वारा कच्चे माल को ले जाने तथा ले जाने के लिए सड़कों का निर्माण, सिंचाई के लिए तालाबों, कुओं तथा नलकूपों का निर्माण, दूर दराज के इलाकों में। बिजली और अन्य संसाधनों का प्रबंधन, अनाज भंडारण गृहों का निर्माण और नई अनाज मंडियों का निर्माण शुरू हुआ।
- फसलों की उपलब्धता के अनुसार उनका न्यूनतम समर्थन मूल्य निर्धारित किया गया और साथ ही हरित क्रांति के समय के अंतराल में कुछ विशेष छूट का प्रावधान भी किया गया। इस तरह के प्रावधान के कार्यान्वयन से किसानों को उनका उचित पारिश्रमिक प्राप्त करना संभव हो गया। अब किसान नई तकनीकों को सीखने में अपनी रुचि दिखाते हैं और अपने कृषि कार्यों में सीखी तकनीकों का उपयोग करने में संकोच नहीं करते।
- कृषकों को आर्थिक सहायता प्रदान करने हेतु विभिन्न व्यापारिक, सहकारी बैंकों एवं सहकारी समितियों आदि के माध्यम से उन्हें ऋण सुविधायें प्रदान की गयीं।

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

- हरित क्रांति और मशीनीकरण के कारण उत्पादन में वृद्धि के कारण ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के नए अवसर विकसित हुए। हरित क्रांति के कारण पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार और ओडिशा के लाखों मजदूर रोजगार की तलाश में पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश जाने लगे।

हरित क्रांति के सामाजिक प्रभाव

- हरित क्रांति के कारण भारत के ग्रामीण समाज में बड़े पैमाने पर परिवर्तन हुए, जिनमें से सबसे महत्वपूर्ण ग्रामीण समाज का बाजारोन्मुख और गतिशील होना था। हरित क्रांति के बाद कृषि न केवल पहले की तरह जीविकोपार्जन का साधन थी, बल्कि अब यह ग्रामीण समाज की आय का मुख्य स्रोत बन गई है।
- किसानों की आय में वृद्धि के साथ उनके सामाजिक और शैक्षिक स्तर का विकास हुआ।
- इसके कारण ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों में आत्मकेन्द्रीयता की भावना विकसित हुई, जिसके कारण परंपरागत संयुक्त परिवारों के स्थान पर एकल परिवार की व्यवस्था प्रचलन में आई।
- हरित क्रांति के कारण लोगों की आय में वृद्धि हुई और इसने ग्रामीण समाज में जजमानी व्यवस्था, वस्तु विनिमय आदि जैसी पारंपरिक प्रथाओं को समाप्त कर दिया।
- हरित क्रांति के बारे में यह कहना अनुचित नहीं होगा कि यह छोटे और सीमांत किसानों की तुलना में बड़े किसानों के लिए अधिक लाभदायक थी। इसका मुख्य कारण नई तकनीक की उच्च लागत थी जिसे छोटे किसानों द्वारा वहन करना संभव नहीं था।
- इसके परिणामस्वरूप, अमीर और गरीब किसानों के बीच असमानता बढ़ गई। कुछ स्थानों पर यह असमानता संघर्षों का कारण भी बनी।
- हरित क्रांति ने जहां अर्थव्यवस्था, समाज और संस्कृति में बदलाव लाए, वहीं इसने कई नैतिक समस्याएं भी पैदा कीं। पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश जैसे उत्तर भारत के क्षेत्रों के किसानों में नशीला पदार्थ, शराब आदि के सेवन की प्रवृत्ति बढ़ी।
- हरित क्रांति का भी महिलाओं के जीवन पर व्यापक प्रभाव पड़ा। हरित क्रांति से पहले महिलाएं बाहर खेतों में काम करके घर के पुरुष सदस्यों की मदद करती थीं, लेकिन किसानों की बढ़ती आय और मशीनों के बढ़ते उपयोग ने ग्रामीण महिलाओं की स्वतंत्रता को कम कर दिया।
- हरित क्रांति के बारे में यह कहना अनुचित नहीं होगा कि यह छोटे और सीमांत किसानों की तुलना में बड़े किसानों के लिए अधिक लाभदायक थी। इसका मुख्य कारण नई तकनीक की उच्च लागत थी जिसे छोटे किसानों द्वारा वहन करना संभव नहीं था।
- इसके परिणामस्वरूप, अमीर और गरीब किसानों के बीच असमानता बढ़ गई। कुछ स्थानों पर यह असमानता संघर्षों का कारण भी बनी।
- हरित क्रांति ने जहां अर्थव्यवस्था, समाज और संस्कृति में बदलाव लाए, वहीं इसने कई नैतिक समस्याएं भी पैदा कीं। पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश जैसे उत्तर भारत के क्षेत्रों के किसानों में नशीला पदार्थ, शराब आदि के सेवन की प्रवृत्ति बढ़ी।
- हरित क्रांति का भी महिलाओं के जीवन पर व्यापक प्रभाव पड़ा। हरित क्रांति से पहले महिलाएं बाहर खेतों में काम करके घर के पुरुष सदस्यों की मदद करती थीं, लेकिन किसानों की बढ़ती आय और मशीनों के बढ़ते उपयोग ने ग्रामीण महिलाओं की स्वतंत्रता को कम कर दिया।

हरित क्रांति के राजनीतिक प्रभाव

- हरित क्रांति का भारतीय राजनीति के क्षेत्र में दूरगामी प्रभाव पड़ा। किसानों का एक नया वर्ग स्थानीय स्तर की राजनीति में भाग लेने लगा। अतीत में जहाँ राजनीति केवल सवर्णों और समाज के धनी वर्ग द्वारा नियंत्रित की जाती थी, वहीं अब समाज के छोटे वर्गों के लोगों की भागीदारी बढ़ गई है।
- हरित क्रांति ने आजादी के बाद जमींदारी उन्मूलन, भूमि सुधार जैसे कदमों के कारण भारत में एक समतावादी समाज के निर्माण को गति दी। इससे छोटे और मध्यम स्तर के किसानों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ और इससे उनमें शिक्षा और राजनीतिक चेतना का विकास हुआ।
- न केवल स्थानीय स्तर पर बल्कि राष्ट्रीय स्तर पर भी किसानों और उनके संबंधित मुद्दों को महत्व दिया गया। इससे किसानों से संबंधित कई संगठनों का गठन हुआ और पूरे देश में एक दबाव समूह के रूप में उनकी भूमिका रही।
- किसान और उनसे जुड़े मुद्दे देश के प्रमुख राजनीतिक दलों के लिए वोट बैंक बन गए और विभिन्न दलों ने किसानों के मुद्दों की वकालत शुरू कर दी

हरित क्रांति के नकारात्मक प्रभाव

- गैर–खाद्य अनाज बाहर रखा गयाः हालांकि क्रांति के चरण में गेहूं, चावल, ज्वार, बाजरा और मक्का सहित सभी खाद्यान्नों का उत्पादन किया गया था, अन्य फसलों जैसे मोटे अनाज, दलहन और तिलहन को हरित क्रांति के दायरे से बाहर रखा गया था। प्रमुख कपास, जूट, चाय और गन्ना जैसी व्यावसायिक फसलें भी हरित क्रांति से वस्तुतः अछूती रहीं।

- एचवाईवीपी का सीमित कवरेजः कृषि में अधिक उपज देने वाली फसलों के कार्यक्रम में प्रमुख पांच फसलों को रखा गया है। जिसके चलते इसे इसके दायरे से बाहर भी रखा गया है। सामान्य उपज के अलावा फसलों में भ्ल्ट। या तो किसानों को स्प्राउट्स के इस्तेमाल की जानकारी नहीं है या फिर वे किसी नए बदलाव के लिए मानसिक रूप से तैयार नहीं हैं।
- क्षेत्रीय विषमताएँः यद्यपि हरित क्रान्ति कार्यक्रम की शुरुआत बड़े शोर–शराबे के साथ हुई और इस कार्यक्रम को भी पूर्णता प्राप्त हुई। इसके बावजूद, अधिकांश कृषि अभी भी अछूती है। इस क्रांति का प्रभाव तराई क्षेत्रों में अधिक देखा गया है। इस क्रांति का प्रभाव उन क्षेत्रों में कम हुआ है जहाँ मानसून कम समय में चला जाता है और वे क्षेत्र शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों की श्रेणी में आते हैं। हरित क्रांति का प्रभाव केवल उन्हीं क्षेत्रों में आसानी से देखा जा सकता है जो प्रारम्भ से ही बेहतर स्थिति में थे। क्षेत्र की जलवायु के कारण हरित क्रांति का प्रभाव अलग–अलग रहा है।
- रसायनों का अत्यधिक प्रयोगः हरित क्रांति के प्रभाव में अच्छी पैदावार की सोच कर किसान द्वारा रसायनों तथा कीटनाशकों तथा अनेक प्रकार के उर्वरकों का अधिक मात्रा में प्रयोग किया जाने लगा। कीटनाशकों के उपयोग के संबंध में किसानों को कोई ठोस जानकारी नहीं दी गई और इसके लिए कोई सफल प्रयास नहीं किया गया। जिन किसानों के पास छोटी जमीन थी या जिनकी जोत थी, उनकी परवाह किए बिना उन्हें बड़ी जोत वाले किसानों के साथ प्रशिक्षित किया गया। जिसके लिए उन्हें मात्रा और उपयोग का अच्छा ज्ञान नहीं था। कीटनाशकों और कई प्रकार के उर्वरकों के अत्यधिक उपयोग के कारण प्रदूषण भी कई तरह से बढ़ गया है।
- पानी की खपतः हरित क्रांति में जिन फसलों का उपयोग किया गया था, वे अधिक उपज देने वाली फसलें थीं, लेकिन साथ ही उनकी पानी सोखने की क्षमता भी अधिक थी। इनमें से कुछ अनाज ऐसे भी थे जो पूरी तरह पानी की अधिक मात्रा पर निर्भर थे। इसका मतलब यह था कि जितना ज्यादा पानी होगा, उतनी ही ज्यादा पैदावार होगी। कम वर्षा वाले क्षेत्रों में सिंचाई के अन्य साधनों का अवसर मिला, जिनके माध्यम से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से भूमिगत जल का उपयोग किया जाता था। जिससे जलस्तर नीचे चला गया। जिसने अन्य समस्याओं को भी जन्म दिया।
- मिट्टी और फसल उत्पादन पर प्रभावः अधिक उपज देने वाली फसलों की अत्यधिक बुवाई और फसल चक्र के अनुचित उपयोग के कारण भूमि की उपज क्षमता में गिरावट आई है। किस फसल का उपयोग करना है, कौन सा पानी या कीटनाशक का उपयोग करना है, इसकी जानकारी के अभाव में भूमिगत पोशक तत्वों में कमी आई है। भूमि का पीएच विभिन्न प्रकार के रसायनों के उपयोग से निर्धारित होता है। भाव भी बढ़ा है। फसलों पर जहरीले कीटनाशकों के अत्यधिक उपयोग से लाभकारी गुणों की हानि और उपज में कमी आई है।
- स्वास्थ्य पर प्रभावः अधिक उपज के लालच में या किसान के ज्ञान के अभाव में अधिक से अधिक कीटनाशकों का प्रयोग किया जाने लगा। जिसके कारण मिट्टी की उपज शक्ति में कमी के साथ–साथ कई प्रकार के रोगों में वृद्धि हुई है। जिससे मानव समाज प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित हुआ है। कहीं भयानक बीमारियां पर्यावरण से छेड़छाड़ का नतीजा हैं।

निष्कर्ष

- हरित क्रांति की उपलब्धियों को देखते हुए हम इस निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं कि हमारे भारत में पहले से विकसित राज्य ही इस क्रांति का उपयोग कर पाए और अपने राज्य की उपज में वृद्धि की। ये क्षेत्र विकसित थे और अपना प्रतिनिधित्व करने में सक्षम थे।
- इस क्रांति में कुछ विशेष बिंदुओं पर कम ध्यान दिया गया जैसे कम भूमि वाले किसान, रसायनों और कीटनाशकों के उपयोग और मात्रा का ज्ञान, व्यवस्थित फसल चक्र का ज्ञान और जलवायु के अनुसार खेती का ज्ञान आदि।
- इस क्रांति के प्रतिनिधि को किसानों को उनकी आवश्यकता के अनुसार अलग–अलग समूहों में विभाजित करना चाहिए था और फिर उन्हें उनकी आवश्यकता के अनुसार शिक्षित करना चाहिए। जैसे बड़े किसानों को अलग करना और छोटे किसानों को अलग करना। मानसून जलवायु वाले क्षेत्रों को अलग से और शुष्क और अर्ध–शुष्क जलवायु वाले क्षेत्रों को अलग से शिक्षित किया जाएगा।
- जब कोई बड़ा कार्यक्रम होता है तो छोटी–छोटी गलतियां हो जाती हैं, लेकिन यह जरूरी नहीं है कि हम उन छोटी–छोटी गलतियों को नजरअंदाज कर दें। हमें अपनी पिछली गलतियों से सीख लेनी चाहिए और भविष्य में उन गलतियों को न दोहराने का प्रयास करना चाहिए।
- हमारा भारत एक कृषि प्रधान देश है। हमें अपनी कृषि और अपने किसान भाइयों पर गर्व होना चाहिए। हमें उनका तहे दिल से शुक्रिया अदा करना चाहिए कि ये हमारे लिए और पूरे भारत के लिए मेहनत करके अन्न उगाते हैं।

संदर्भ

1. शिव, वंदना. (2015). हरित क्रांति और पर्यावरणीय दुर्दशा : तीसरी दुनिया कृषि, पारिस्थितिकी और राजनीति (संस्कृति की भूमि) 01 जनवरी।
2. कॉनवे, गॉर्डन. (1999). द डबली ग्रीन रेवोल्यूशनः फूड फॉर ऑल इन द ट्वेंटी–फर्स्ट सेंचुरी (कॉमस्टॉक बुक) 17 फरवरी।

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

3. स्वामीनाथन, एम.एस. (2017). हरित क्रांति के 50 वर्षः शोध पत्रों का संकलनः 1 (एम.एस. स्वामीनाथनः द क्वेस्ट फॉर ए वर्ल्ड विदाउट हंगर) 23 मई।
4. किल्बीपैट्रिक. हरित क्रांति, राजनीति, प्रौद्योगिकी और लिंग की कथा।
5. https://www.drishtiias.com/hindi/to-the-points/paper3/green-revolution
6. https://www.drishtiias.com/hindi/to-the-points/paper3/green-revolution-in-india
7. https://www.nibsm.org.in/green-revolution-explained-in-hindi/
8. https://www.google.com/search?q=google+translate&rlz=1C1CHBD_enIN946IN946&oq=google&aqs=chrome.2.69i57j46i131i199i433i465i512j69i59j69i60l5.5119j0j7& sourceid=chrome&ie=UTF-8

22

भारतीय संस्कृति भारत देश की अमूल्य धरोहर

प्रो० सुधा सिंह
प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
गोकुलदास हिन्दू गर्ल्स कॉलेज, मुरादाबाद

भारतीय संस्कृति भारत देश की अमूल्य धरोहर है। अन्य देशों की संस्कृतियाँ तो समाज की धारा के साथ–साथ नष्ट होती जाती हैं किंतु भारत की संस्कृति आदि काल से ही अपने परंपरागत अस्तित्व के साथ अजर–अमर बनी हुई है। भारतीय संस्कृति की यह विशेषता है कि वह उदार एवं समन्वयवादी है। यही कारण है कि वह अन्य संस्कृतियों को भी अपने में समाहित कर लेती है किंतु अपनी मूल संस्कृति को अक्षुण्ण बनाए रखती है। संस्कृति शब्द का उद्‌गम संस्कार शब्द से माना जाता है जिसका अर्थ है वह क्रिया जिसके द्वारा मानव मन परिष्कृत एवं श्रेष्ठ बनता है। ''भारतीय संस्कृति में सर्वाधिक महत्व मन के शुभ संकल्पों व विचारों को दिया गया है। भाव की शुद्धता तथा संकल्पों और विचारों की पवित्रता से ही कर्म को अच्छा या बुरा माना जाएगा। जो मन है, यदि उसके संकल्प अशुभ हैं, अशिव हैं, अहंकार, मोह एवं आसक्ति में लिप्त हैं तो ऐसे कर्म व्यक्ति को संस्कारवान नहीं बनाते।''[1]

रामसजन पाण्डेय के अनुसार ''संस्कृति मानव के गतानुगतिक संस्कारों का वह सफल रूप है जिससे उसके सामाजिक आचार–विचार, पर्व–त्यौहार, रहनी–करनी, रीति–रिवाज, निति– कार्य, आध्यात्मकता आदि की प्रतीति है।''[2] संस्कृति अपनी प्राचीनता को लिए हुए नवीनता की तरफ अग्रसर होती है। परंपराएँ कभी भी नष्ट नहीं होती है बल्कि नवीन परंपराओं के संपर्क में आने पर कुछ प्राचीन तत्व नष्ट हो जाते हैं।

भारत में विविध धर्मों, विविध, रीति–रिवाजों, विविध खानपान, विविध वेशभूषा, विविध संगीत कला आदि के लोग रहते हैं किंतु इसका सांस्कृतिक समुच्चय और अनेकता में एकता का स्वरूप अन्य देशों के लिए आश्चर्य का विषय है। साहित्य समाज का दर्पण होता है यह कथन बिल्कुल सत्य है। क्योंकि साहित्य समाज की ही रचना है जैसा समाज होता है वैसा ही साहित्य होता है। किसी भी समाज को समझने के लिए उसका साहित्य पर्याप्त है, उसमें समाज का पूर्ण प्रतिबिंब परिलक्षित होता है। इस प्रकार जो कुछ अनादिकाल से सामाजिक जीवन में, आर्थिक जीवन में, पारिवारिक, राजनैतिक एवं धार्मिक जीवन में घटित होता है वह समस्त रूप से हमारी संस्कृति का अंग बन जाता है जो आगे आने वाली पीढ़ी को हस्तांतरित होती रहती है और इसका उत्तरदायित्व साहित्य पर है। संस्कृति और साहित्य का घनिष्ठ संबंध है बिना साहित्य के संस्कृति का सही परिज्ञान नहीं हो सकता इसी कारण साहित्य संस्कृति का अक्षय कोश है।

भारतीय संस्कृति को हृदयंग करने की शक्ति उसकी भाषा ही है और वह भाषा है 'हिंदी'। क्योंकि यदि हम भारतीय संस्कृति को अंग्रेजी भाषा अथवा किसी और अन्य भाषा के माध्यम से व्यक्त करें तो वह, हमारे अंदर वह भाव व अनुभूति नहीं उत्पन्न कर पाएगा अर्थात वह हमारे हृदय को नहीं छू पायेगा। भारतीय संस्कृति का प्रमुख माध्यम हिंदी भाषा है। इसका सीधा सा कारण है कि अधिकतर भारतीय हिंदी बोलते और समझते हैं। संस्कृति और साहित्य का अन्योन्याश्रित संबंध है। अंग्रेजी कवि मिल्टन ने कहा था कि ''मुझे आप किसी भी देश की भाषा सीखा दीजिए, उस देश में जाने की जरूरत नहीं है। मैं बता दूँगा कि वहां के लोग कैसे हैं? संकीर्ण विचारधारा के लोग हैं या उदार हैं क्योंकि साहित्य और भाषा देश और समाज का दर्पण होता है।''[3] बहु भाषा–भाषी और विभिन्न जातीयता वाले भारतीय साहित्य और संस्कृत से एक दूसरे को परिचित कराने में सिर्फ हिंदी ही सक्षम है क्योंकि यह यद्यपि किसी भी प्रांत की भाषा नहीं है फिर भी देश की आधी आबादी द्वारा बोली पढ़ी और लिखी जाती है और बाकी आबादी द्वारा समझी जाती है। भारत की भाषा होने के कारण इस देश की सांस्कृतिक विरासत को वहन करने की क्षमता इसमें है और यह अत्यंत सरल भी है। डॉ सुनीत कुमार चटर्जी ने तो यहाँ तक कहा था ''हिंदी समग्र भूमंडल की तीसरी भाषा है, विश्व की मानव संतान के पंचमांश की होनहार राष्ट्रभाषा है। हिंदी की अभिव्यंजना शक्ति अपूर्व है।'' समन्वयवादी महान विचारक, चिंतक हिन्दी कवि तुलसीदास भारतीय

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

संस्कृति के महान उन्नायक हैं। उनका रामचरितमानस भारतीय संस्कृति का अक्षयकोश है, भारतीयजन–जीवन की सुरक्षा अकेला रामचरितमानस के बल पर हो सकती है। रामचरितमानस में समता के आदर्श कि केवल कथनी ही नहीं वरन करनी भी है। तुलसीकृत रामचरितमानस एक आदर्श भारतीय संस्कृति का संवाहक है। जिसमें ऊँच–नीच, जाति –पांति का कहीं भी स्थान नहीं है बल्कि सबके साथ समन्वय की भावना है। जैसे शबरी के जूठे बेर खाना, निशाद को गले लगाना, जटायु का संस्कार करना आदि अनेक उदाहरण हैं।

भारतीय भाषाओं एवं हिंदी के संबंध में हमें रविंद्र नाथ टैगोर के निम्न विचार याद रखने की जरूरत है ''आधुनिक भारत की संस्कृति एक विकसित शतदल कमल के समान है जिसका एक–एक दल एक–एक प्रांतीय भाषा है और उसकी साहित्य संस्कृति है किसी एक को मिटा देने से उस कमल की शोभा ही नष्ट हो जाएगी। हम चाहते हैं कि भारत की सब प्रांतीय बोलियाँ, जिनमें सुंदर साहित्य की सृष्टि हुई है, अपने–अपने घर में (प्रांत में) रानी बन कर रहे। प्रांत की, जन–गण की हार्दिक चिंता के प्रकाश भूमि स्वरूप कविता की भाषा हो कर रहे और आधुनिक भाषाओं के हार की मध्यमणि हिंदी भारत–भारती होकर विराजती रहे। मेरे विचार में प्रांतीय भाषाओं के पुनर्जीवन से राष्ट्रभाषा हिंदी की कुछ क्षति नहीं होगी, उसका उत्कर्ष ही होगा।[5]

यद्यपि साहित्यिक दृष्टि से भारत की सभी भाषाएँ समृद्ध हैं। अवधी, ब्रज, मैथिली, बुंदेलखंडी, राजस्थानी आदि में विपुल साहित्य की रचना हुई है। आदिकाल, भक्तिकाल, रीतिकाल को पार करती हुई हिंदी जब वर्तमान युग में पहुँची तो वह खड़ी हो गई। यह एक विचित्र बात है कि अनेक भाषाओं के मंजन–मंथन के बाद जिस भाषा का निर्माण हुआ और जो सबसे सशक्त माध्यम के रूप में हमारे सामने हैं वह भाषा न कहलाकर 'बोली' कही गई– 'खड़ी बोली', जिसे आज भारतीय आर्य भाषा और हिंदी के रूप में जाना जाता है। हिंदी की सभी बोलियाँ, क्षेत्रीय भाषाएँ मिलकर एक हिंदी जातीय तंत्र का निर्माण करती हैं। भाषा हमें अपने आप से हमारी पहचान कराती है। भारत में अंग्रेजी के सामने सबसे बड़ी चुनौती हिंदी है। भारतीय संस्कृति में रहन–सहन वेशभूषा का महत्व सर्वाधिक है। शब्दों के अभिव्यक्ति की स्पष्टता हिंदी भाषा में झलकती है जो अंग्रेजी भाषा के माध्यम से असम्भव है। जैसे– मंगलसूत्र, सिंदूर, टीका, महावर, सगी बहन, फुफेरी बहन, मौसेरी बहन आदि। भाषा के संबंध में महात्मा गांधी का यह विचार देखने योग्य है'' यदि हम अंग्रेजी के आदी नहीं हो गए होते, तो यह समझने में हमें देर नहीं लगती की अंग्रेजी की शिक्षा का माध्यम होने से हमारी बौद्धिक चेतना जीवन से कटकर दूर हो गई है, हम अपनी जनता से अलग हो गए हैं, जाति के सर्वश्रेष्ठ विभागों का विकास रुक गया है और जो विचार हमें अंग्रेजी के माध्यम से मिले, उन्हें हम जनता में फैलाने में नाकामयाब रहे है। पिछले साठ वर्षों से हमने विचित्र–विचित्र शब्दों को केवल रटना सीखा है, तथ्य पूर्ण ज्ञान पचाने के बदले हमने शब्दों का उच्चारण सीखा है। जो विरासत हमें अपने बाप दादों से हासिल हुई उसके आधार पर नव निर्माण करने के बदले, हमने उस विरासत को भूलना सीखा है। इस दुर्गति की मिसाल सारी दुनिया के इतिहास में नहीं है। यह तो राष्ट्रीय शोक अथवा ट्रेजडी का विषय है। आज की पहली और सबसे बड़ी समाज–सेवा यह है कि हम अपने देश की भाषाओं की ओर मुड़े और हिंदी को राश्ट्रभाषा के पद पर प्रतिष्ठित करें। हमें अपने सभी प्रादेशिक कार्रवाइयाँ अपनी–अपनी भाषाओं में चलानी चाहिए तथा हमारी राष्ट्रीय कार्रवाइयों की भाषा हिंदी होनी चाहिए।''[6] अतः भारत की आत्मा को उसके संस्कृति को पहचानने के लिए हिंदी भाषा का ज्ञान अत्यंत आवश्यक है। भाषा वैज्ञानिकों ने हिंदी को 18 बोलियों का समूह माना है जो भारत के विस्तृत भू–भाग में बोली जाती हैं। ऐतिहासिक रूप से देखी जाए तो इन बोलियों में से कोई एक बोली किसी कालखंड विशेष में हिंदी का प्रतिनिधित्व करती हैं। सच्चे मन से यदि विचार–विमर्श हो तो भाषा संबंधी समस्याओं का निराकरण संभव है, दुराग्रही होकर नही। जरूरत है हिंदी के प्रति निःशंक होने की। हिंदी अपनाने से किसी का अहित नहीं होने वाला है।

संदर्भ

1. मोहन, डॉ0 नरेन्द्र. भारतीय संस्कृति. पृष्ठ **99.**
2. पाण्डेय, डॉ0 रामसजन. भक्तिकालालीन हिन्दी निर्गुण काव्य का सांस्कृतिक अनुशीलन।
3. श्रीवास्तव, डॉ0 संत कुमारी. भारतीय संस्कृति. पृष्ठ **43.**
4. शर्मा, शंकर दयाल. हिन्दी राष्ट्र भाषा, राजभाषा, जनभाषा. पृष्ठ **47.**
5. वही. पृष्ठ **44.**
6. वही।

23

दर्शन की सार्वभौमिकता

डॉ० सौरभ सक्सेना
चित्रकला विभाग
बा०ज०ग०प्र० पी०जी० कॉलेज, सुमेरपुर, उन्नाव
ईमेलः *saurabh.saxena@gmail.com*

सामान्य रूप से दर्शन शब्द देखने के लिए प्रयुक्त होता है किन्तु दर्शन शब्द लोक व्यवहार में प्रयुक्त होने वाले शब्द से अधिक व्यापक और गूढ़तम है इसका उत्तर उपनिषद में इस प्रकार मिलता है। स्पर्ण पात्र में सत्य का मुख आवृती है। इस ढ़क्कने को हटाइये जिससे सत्य का हमको दर्शन हो सके। इस प्रकार हम यह कहते हैं कि जीवात्मा क्या है? परमात्मा क्या है? जीवात्म का परमात्मा से क्या सम्बन्ध है। सृष्टि का कर्ता कौन है? हम कौन है? कहा से आए हैं? मरणोपरांत कहां जायेगे ? संसार में दुख ही दुख क्यों है? आदि विषयों का विवेचन करना दर्शन का प्रमुख उद्देश्य है। अत एव दार्शनिक व्यक्ति उसको कहा जा सकता है जिसने विश्व कल्याण की सृष्टि से ब्रह्माण्ड के रहस्य का ज्ञान अर्जित किया हो। भारतीय दर्शन उद्गम जीवन की उदासीनता और दुख से माना गया है। संसार के सभी प्राणी दुख से दुखी है। सृष्टि में दुख व्यापत है। अतएव दर्शन का परम लक्ष्य दुख से निवृत्त और पर आनन्द की प्राप्ति माना गया है। दुख नित्य नहीं है इसलिये मनुष्य आत्म ज्ञान द्वारा दुख से छुटकारा पा सकता है। भारतीय विचारको ने भारतीय सुख और भौतिक जगत की नखरता की अनुभूती का अनुभव बहुत पहले ही कर लिया था। अतः उसे मिथ्या घोषित किया और कहा कि यह दृश्य जगत किसी अदृश्य शक्ति से संचालित है। भारतीय दर्शन शास्त्र में विश्व के कल्याण हेतु जीवन के मूल्यों और अलौकिक अनुभूतियों को महत्व दिया गया है। जिसका उद्देश्य मनुष्य द्वारा उच्चतम अनुभूतियो का निरूपण हो इस प्रकार दर्शन जीव के गूढ़तम गुणो के विकास का उपकरण है। पाश्चात्य दर्शन पर दृष्टि डालने से विदित होगा कि वहा के दार्शनिक भौतिक सुख और जड़ जगत के रहस्य की खोज में ही खोये रहे। वे आत्म ज्ञान और अलौकिक अनुभूतियो को समझ ही नहीं सके उनका मानना है कि जब जीवन की सभी सुख सुविधाएं और वस्तुओ की प्राप्ति हमें विज्ञान से हो जाती है। तब मनुष्य के जीवन का पथ प्रदर्शक विज्ञान ही होना चाहिए। यद्यपि विज्ञान हमें जीवन की सभी सुख सुविधाएं प्रदान कर सकता है। किन्तु आत्मिक सुख शान्ति हमें वहिंजगत से नहीं अन्तजगत से मिल सकती है। भारतीय दर्शन समृग्रता की दृष्टि से विश्व का अवलोकन करता है मैक्समूलर के शब्दों में भारत में धर्म और दर्शन की एक शक्ति है जो सदैव अदम्य रही है। और आज भी रहेगी। उसकी एक अन्य विशेषता है कि वह किसी विशेष सम्प्रदाय या मत की थाती नहीं है। इसमें कट्टरता के दर्शन शायद ही कभी होते तो इसका किसी अन्य दर्शन की शाखा के सिद्धान्तों से विरोध नहीं है। भारतीय उपनिषदों का अनुवाद फारसी और लैटिन भाषा में किया गया जिसको पश्चात्य विधान फाडिक श्लेल ने इन उपनिषदो के सामने यूरोपीय तत्व ज्ञान को एक टिमटिमाते दिये की संज्ञा दी है। बाऊसेन के अनुसार उपनिषदों में जो दार्शनिक कल्पना है। वह भारत में तो अद्वितीय है सम्भवतः सारे विश्व में अतुलनीय है। इसका प्रभाव पाश्चात्य देशो में स्पष्ट देखा जा सकता है। भौतिक उन्नति समूह व सुख की आकांक्षा से भी तृप्त न होने वाले देश आज मानसिक शान्ति पाने वाले के लिये बैचेन है अमेरिका में तो और भी खुले आम बहुत आम भौतिक जीवन का उपहास उड़ाया जा रहा है भारत के सभी दर्शन शास्त्र आत्मज्ञान और आध्यात्म के उद्देश्य को लेकर आगे बढ़े है। मैक्सूलर ने हम भारत से क्या सीखा नामक ग्रन्थ में लिखा है। कि कुछ विशेषताएं ऐसी है। जिनमें कुछ भारत के निवासी यूरोपियों की तुलना में पीछे रह गये है। किन्तु कुछ विशेषता भारतीय आर्य की यूरोपियन की अनिवार्य रूप से भारत की गुरूता स्वाकार करनी पड़ी यदि मुझसे पूछा जाये कि किस देश ने अपने कुछ सर्वोत्तिम गुणों को सर्वाधिक महत्व पूर्ण प्रश्नों व समस्याओं का सर्वाधिक सुन्दर समाधान खोज निकाला हो तो मैं बिना किसी सोच विचार के भारत की ओर अंगुली उठा दूंगा इस प्रकार

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

पाश्चात्य विद्वानों की विचार धाराओ से भारतीय दर्शन का महत्व सूचित होता है। दर्शन विभिन्न अनुभूति का विश्लेषण और व्याख्या करता है। कला का दार्शनिक पक्ष सदैव प्रबल और जीवन्त रहा है। जीवन के स्वरूप और विश्व के रहस्य का विधिवत तार्किक चिन्तन ही दर्शन का मूल है। और दार्शनिक वही व्यक्ति है जिसने विश्व के रहस्य का साक्षात्कार किया हो। दर्शन संस्कृति की आत्मा है जिसमें समस्त ज्ञान का समन्वय होता है। यही नहीं दर्शन में साहित्य और कला की अभिव्यक्ति होती हो देवराज के अनुसार "दर्शन सांस्कृतिक जीवन की केन्द्रिय क्रिया जो जीवन के चरम मूल्यों का निर्माण करती है।[1] आज आधुनिक मनुष्य के मन में दर्शन की कोई समुचित धारणा नहीं है। इसीलिये वह अपनी किसी महत्वपूर्ण क्रिया को उचित स्थान नहीं दे पाता। ब्रजगोपाल तिवारी का मत है "कि जिज्ञासा मनुष्य को गहन विचार करने के लिये प्रेरित करती है जिसके फलस्वरूप दर्शन शब्द का जन्म होता है।"[2] डॉ0 वाड ने लिखा है कि दर्शन का अर्थ है "अनुभव के उन सब क्षेत्रों या पहलुओं को जिन्हें साधारण लोग अलग–अलग रखते है। एक साथ करके देखना"[3] वाचस्पति गैरोला के अनुसार "भीतर सूक्ष्मताओं का अनवेषण परीक्षण कराने वाले शास्त्रो को दर्शन कहते हैं।"[4] दर्शन विभिन्न विचारों में सामाजस्य स्थापित करता है। तथा यह जानने प्रयास किया जाता है कि जीवन के किन मूल्यों को कहाँ और क्या स्थान होना चाहिये। दर्शन का मुख्य कार्य जीवन की उच्चतम सम्भावनाओ का निरूपण करना है।

दर्शन विभिन्न अनुभूति की व्याख्या करता हो वो मनुष्य को सत्य का दिग्दर्शन कराता है। दर्शन से आध्यात्मिक शान्ति मिलती हो और इसे परम सुख और आनन्द का साधन माना गया है– प्राय लोगो का आध्यात्म पर विश्वास न होने के कारण यह समझा जाता हैं। कि आध्यात्म का जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं है। आधुनिक काल में भौतिक विज्ञान और सामाजिक विज्ञान में महान उन्नति होने के कारण वैज्ञानिक दार्शनिक का साथ–साथ चलना कठिन हो गया है। दर्शन का जितना अधिक महत्व भारत वर्ष और एशियायी देशो में उतन किसी पाश्चात्य देश में नहीं है। दर्शन का जीवन से गहरा सम्बन्ध है– तथा समाज को एक सूत्र में वाधने का अपूर्व साधन है डॉ0 इन्द्र चन्द्र शास्त्री दर्शन के विषय में लिखते है कि दर्शन जीवन का पक्ष है।"[5] दर्शन का मानव जीवन पर गहरा प्रभाव रहा है उसका स्थान किसी सम्प्रदाय के संकुचित उद्देश्य तक नहीं रहा अपितु मानव जीवन पर गहरा प्रभाव रहा है। दर्शन जीवन में आध्यात्म तत्व का अन्वेशण करता है। इसका मूल आधार ईश्वर की परम सत्ता को स्थापित करना हो दर्शन शास्त्र के अनुसार यह दृश्य जगत किसी अदृश्य जगत और अलौकिक शक्ति से ओत प्रोत हो यद्यपि यह सत्य है। अलौकिक देविय व अदृश्य शक्ति की प्रतीत हमें कही भी नही होती। किन्तु हम यह नहीं कह सकते है कि इस प्रकार का अनुभव होता ही नहीं है। प्राचीन ऋषियो, मुनियो, सूफी, सन्तो व ईसाई धार्मिक सन्तो को स् स्पष्ट रूप से धार्मिक चेतना सम्बन्धित अनेक अनुभव हुये उसमें साधारण विचारों और भावनाओ का कोई स्थान नहीं है। दर्शन में विशेष बल अन्तः दृश्टि और आत्म दर्शन को दिया जाता है। तथा उसे जान का साधन मानते है। यहीं की कला में परिवर्तन न होने के कारण उसकी सबसे बड़ी क्षमता जीवन दर्शन और पुरानी भाव धारा पर श्रद्धा है जिसका प्रभाव कभी क्षीण नहीं होता है। उनमें सामाजिक मर्यादा लोकहित धर्म और दर्शन की विषद व्याख्या हुयी है। हिन्दू, जैन और बौद्ध की कला कृतिया भारतीय कला की अक्षय निधि है दर्शन का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक और विशाल है। मैक्सूलर का विश्वास है कि "भारत का दर्शन शास्त्र ही यहा का सर्वोच्च है।"[6] मनुष्य की सभ्यता और संस्कृति के उत्कर्ष में दर्शन का विशेष योगदान रहा है। और अनेक मनुष्यों को शक्ति और विश्व वन्धुत्व की भावना की ओर अग्रसर किया अर्थशास्त्र के निर्माता कौटिल्य का कथन है। कि दर्शन सब विधओं के लिये दीपक है। सब कार्यों के अनुष्ठान का साधन मार्ग है।"[7] भारत वर्ष दर्शन शास्त्र सदा अध्ययन का स्वतन्त्र तथा महत्वपूर्ण विषय रहा है। साथ ही अन्य विद्याथियों की प्रगति में सहायता देता आया है।

कला का दर्शनिक पक्ष सदैव प्रबल और जीवन्त रहा है। दर्शन का अर्थ केवल व्यक्ति का आचरण व कर्तव्यों के संग्रह से नहीं है बल्कि मोझ प्राप्ति की लालसा से भी रहा है। बल्लभ चार्यो ने भक्ति कला साधना को मोझ प्राप्ति का सरल और सुबोध मार्ग माना हैं डा0 सम्पूर्णानन्द के अनुसार "कला साधना मनुष्य को क्षुद्र भावनाओं से ऊँचा उठाती है। भारतवर्ष में दर्शन और कला की अपनी अदम्य शक्ति है। यहाँ दर्शन को कला का मूल माना गया है।"[8] भारत की सभी कलायें अध्यात्म और दर्शन से प्रभावित रहा है। देव मन्दिर और मूर्तियों का निर्माण यहा मानव जीवन के आध्यात्मिक उत्कर्ष के लिये किया गया है।

दर्शन विभिन्न अनुभूति का विश्लेषण और व्याख्या करता है। किन्तु सामान्य लोग आज इस शब्द का प्रयोग किसी वर्ग या व्यक्ति विशेष विचार के लिये प्रयुक्त करने में संकोच नहीं करते दर्शन शब्द अपने में सार्वभौम दर्शन जगत के असंख्य रूपो का उपस्थित करता है। तथा जीवन की सम्भावनाओं और सृष्टि के असंख्य सम्बन्धों की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट करता है इस प्रकार दर्शन हमे जीवन की क्षुद्र स्थितियों से ऊपर उठाकर समस्त विश्व को एक साथ देखने की कोशिश करता है।

सन्दर्भ

1. देवराज. संस्कृति का दार्शनिक विवेचन. पृष्ठ **14.**
2. देवराज. संस्कृति का दार्शनिक विवेचन. पृष्ठ **21.**

3. देवराज. संस्कृति का दार्शनिक विवेचन. पृष्ठ **214.**
4. वाचस्पति, गैरोला. भारतीय दर्शन. पृष्ठ **11.**
5. उपाध्याय, विष्णु देव. दर्शन. पृष्ठ **32.**
6. उपाध्याय, विष्णु. दर्शन. पृष्ठ **32.**
7. उपाध्याय, बलदेव. भारतीय दर्शन. पृष्ठ **07.**
8. सक्सेना, एस.एन. दृश्यकला एवं दृष्टि कोण. पृष्ठ **77.**

24

भारत में पर्यावरण की समस्याएं और समाधान

प्रो० मीनाक्षी शर्मा
प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान
गोकुलदास हिन्दू गर्ल्स कालेज, मुरादाबाद

डा० प्रेमलता कश्यप
असिस्टेंट प्रोफेसर, चित्रकला विभाग
गोकुलदास हिन्दू गर्ल्स कालेज, मुरादाबाद

सारांश

समूचे विश्व के सामने आज पर्यावरण के प्रदूषण की समस्या अनेक विकास रूपों में सामने आ रही है। तत्कालिक लाभों के लालच में मानव ने स्वयं अपने भविष्य को दीर्घकालीन संकट में डाल दिया है। पर्यावरण प्रदूषण का यह प्रकोप स्थानीय व क्षेत्रीय न होकर विश्वव्यापी होता जा रहा है। समाजशास्त्री टॉस ने लिखा है कि–''पर्यावरण कोई भी वह बाहरी शक्ति है जो हमें प्रभावित करती है।''

भारत एक समृद्ध सांस्कृतिक देश है जिसमें न केवल अपने बल्कि विश्व के पर्यावरण को लेकर एक गहरी संचेतना रही है लेकिन नवीन युग में पर्यावरण प्रदूशण में यह देश (भारत) पीछे नहीं रहा है। स्वतन्त्रता से पूर्व विकसित हुआ प्रकृति दोहन का यह कुचक्र स्वाधीनता के बाद और तीव्र होता गया। औद्योगिक एवं तकनीकी विकास तीव्र जनसंख्या वृद्धि शहरीकरण आदि के कारण पर्यावरण के दबाव में लगातार वृद्धि होने लगी और आज जब हम 21वीं सदी में प्रवेश कर चुके हैं, उस समय सबसे महत्त्वपूर्ण प्रश्न पर्यावरण को विकृत होने से बचाना तथा उसे सन्तुलित बनाये रखना है।

विकास आवश्यक है किन्तु पर्यावरण के मूल्यों पर नहीं। आज भारत की महती आवश्यकता है 'विनाश रहित विकास'।

मुख्य बिन्दु

विकराल, संचेतना प्रस्तावना, दीर्घकालीन, दोहन, औद्योगिक 6–विकृत।

सामान्य जीवन की प्रक्रिया में पर्यावरण की समस्याएँ जन्म लेती हैं। बहुत सी ऐसी पर्यावरण की समस्याएँ हैं जो हमारे स्वास्थ्य एवं दिनचर्या को काफी हद तक प्रभावित करती हैं। यह समस्याएँ प्रकृति के कुछ तत्वों के अपनी मौलिक अवस्था में न रहने और विकृत हो जाने से उत्पन्न हो जाती है। इन तत्वों में जलवायु मिट्टी आदि प्रमुख है। पर्यावरणीय समस्याओं से मनुष्य और अन्य जीवधारियों को अपना सामान्य जीवन जीने में कठिनाई होने लगती है और कई बार जीवन–मरण की समस्या भी सामने आ जाती है। पर्यावरण शब्द 'परि तथा 'आः' उपसर्ग में वरण शब्द को जोड़कर निष्पन्न हुआ है। जिसका अर्थ हुआ चारों ओर से वरण अथवा आवरण अधिकार अथवा भरण करना। पर्यावरण अंग्रेजी के शब्द ऐनवायरमेण्ट का हिन्दी अनुवाद है जो दो शब्दों एनवायरन' और 'मेन्ट' से मिलकर बना है जिसका अर्थ आवृत्त करना है अर्थात् जो चारों और से घेरे हुए है। वह पर्यावरण है।'[1]

पर्यावरण का मानव की समृद्धि से गहरा जुड़ाव है। यह पर्यावरण में जीता है. उसका उपयोग करता है और उसके अवक्रमण में भी प्रमुख भूमिका निभाता है। मोटे तौर पर वह जो श्वांस लेता है, जल ग्रहण करता है, भोजन करता है, आवास बनाता है या अन्य आर्थिक एवं सामाजिक क्रियाएं करता है वे सभी पर्यावरण द्वारा प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से नियंत्रित होती है।

प्रकृति में सभी तत्वों का संतुलन प्रकृत्या ही होता रहता है। यदि हम प्राकृतिक नियमों का उल्लंघन नहीं करे तो किसी को कोई कठिनाई नहीं होती है, परन्तु मनुष्य प्रकृति को अपनी इच्छा के अनुसार बदलने और उस पर नियंत्रण रखने का अहम रखता है।

विश्व की प्राचीनतम तथा सनातन संस्कृति हमारे भारत की ही वैदिक संस्कृति है। हमारे अथर्ववेद (12/1/12) का उद्घोष है "माता भूमि पुत्रोऽहं पृथिव्याः। हमारे तत्वदर्शी एवं दूरदर्शी वैदिक ऋषियों ने गम्भीर चिन्तन के बाद जो मानव जीवन दर्शन हमें दिया है, उसमें सभी तत्वों में देव–बुद्धि और चराचर में ईश्वर दृष्टि रखने की प्रेरणा है।

तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या व आर्थिक विकास के कारण भारत में कई पर्यावरणीय समस्याएँ उत्पन्न हो रही है और इसके पीछे शहरीकरण व औद्योगीकरण में अनियंत्रित वृद्धि बड़े पैमाने पर कृषि का विस्तार तथा तीव्रीकरण तथा जंगलों का नष्ट होना है।

भारतदेश की जनसंख्या वर्ष 2018 तक 1.26 अरब तक बढ़ जाएगी, अनुमानित जनसंख्या का संकेत है कि 2050 तक भारत संसार में सबसे अधिक आबादी वाला देश होगा और चीन का द्वितीय स्थान होगा। दुनिया के क्षेत्रफल का 2.4 प्रतिशत परन्तु विश्व की जनसंख्या का 18 प्रतिशत धारण कर भारत का अपने प्राकृतिक संसाधनों पर दबाव काफी बढ़ गया है। कई क्षेत्रों पर पानी की कमी मिट्टी का कटाव और कमी, वनों की कटाई, वायु और जल प्रदूषण के कारण बुरा असर पड़ता है।

किसी देश में पर्यावरण के क्षरण का प्राथमिक कारण जनसंख्या का तीव्र विकास है जो प्राकृतिक संसाधनों और पर्यावरण को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करता है। तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या और पर्यावरण में गिरावट सतत विकास की चुनौती प्रस्तुत कर देती है। अनुकूल प्राकृतिक संसाधनों का अस्तित्व या अभाव, सामाजिक आर्थिक विकास की प्रक्रिया को तेज अथवा धीमा कर सकते हैं।

तीन मूलभूत जनसांख्यिकीय कारक जन्म–मृत्यु तथा लोगों का प्रवासन व अप्रवासन, जनसंख्या की वृद्धि, संयोजन तथा वितरण को प्रभावित करते हैं तथा इसके कारण तथा प्रभाव से सम्बन्धित महत्वपूर्ण प्रश्न प्रस्तुत करते हैं। जनसंख्या में वृद्धि और आर्थिक विकास भारत में कई गंभीर पर्यावरणीय आपदाओं में योगदान दे रहे हैं। इनसे भूमि पर भारी दबाव भूमि क्षरण, वन, निवास का विनाश और जैव विविधता के नुकसान पैदा होते हैं। उपभोग के बदलते स्वरूप ने ऊर्जा की बढ़ती मांग को प्रेरित किया है। इसका अन्तिम परिणाम वायु प्रदूशण, ग्लोबल वार्मिंग, जलवायु परिवर्तन, पानी की कमी और जल प्रदूषण के रूप में होता है।

"भारत में वायु प्रदूषण मुख्यतः उद्योगों एवं परिवहन की देन है जिसमें लगातार वृद्धि होती जा रही है।" वायु प्रदूषण की समस्या अधिकांशतः नगरों तथा इसके निकटवर्ती क्षेत्रों तक सीमित है तथा विशाल ग्रामीण क्षेत्र इस समस्या से एक सीमा तक बचा हुआ है, किन्तु धीरे–धीरे यह प्रदूषण ग्रामीण अंचलों में भी पैर फैला रहा है। उद्योगों एवं वाहनों से निकलता धुआँ, विशैली गैसों को दूरवर्ती क्षेत्रों तक फैला रहा है। प्राकृतिक स्वच्छकर्ता के रूप में वनस्पति का कटते जाना इस समस्या को और भी अधिक गम्भीर बना देता है।[3]

भारतीय शहर वाहनों और उद्योगों के उत्सर्जन से प्रदूषित है। सड़क पर वाहनों के कारण उड़ने वाली धूल भी वायु प्रदूषण में 33 प्रतिशत तक योगदान करती है। बंगलौर जैसे शहर में लगभग 50 प्रतिशत बच्चे अस्थमा से पीड़ित हैं। भारत में 2005 के बाद से वाहनों के लिए भारत स्टेज दो (यूरो 11) के उत्सर्जन मानक लागू है।

भारत में वायु प्रदूषण का सबसे बड़ा कारण परिवहन की व्यवस्था है। लाखों पुराने डीजल इंजन वह डीजल जला रहे हैं जिससे यूरोपीय डीजल से 150 से 190 गुणा अधिक गंधक उपस्थित है। बेशक सबसे बड़ी समस्या बड़े शहरों में है जहाँ इन वाहनों का घनत्व बहुत अधिक है। केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के प्रतिवेदन में स्पष्ट किया गया है कि दिल्ली में वाहनों की संख्या इतनी अधिक हो गई है कि वहाँ की वायु में 692 किग्रा कार्बन मोनो आक्साइड 250 किग्रा नाइट्रोजन ऑक्साइड का समावेश हो गया है तथा यहाँ का वातावरण दम घोटने वाला होता जा रहा है।

उद्योगों से फैलने वाला वायु प्रदूषण दिन–प्रतिदिन अधिक होता जा रहा है। अकेले मुम्बई नगर में 4000 औद्योगिक इकाइयाँ हैं। वायु प्रदूषण में कलकत्ता अत्यधिक प्रदूषित नगर है। यहाँ वायु में सल्फर डाई ऑक्साइड तथा धूलकणों की मात्रा बहुत अधिक है। आगरा में स्थित ताजमहल पर मथुरा में स्थापित तेलशोधक कारखाने से विपरीत प्रभाव पड़ने की आशंका वैज्ञानिकों एवं पुरातत्व वेत्ताओं ने की है।

वायुमण्डल के संदर्भ में भोपाल गैस त्रासदी" का उल्लेख करना आवश्यक है। भोपाल में स्थित यूनियन कार्बाइड इण्डिया के संयन्त्र से 2–3 दिसम्बर 1984 की रात्रि को गैस का रिसाव इतने विस्तृत पैमाने पर हुआ कि हजारों लोग मौत के मुँह में समा गये। शेष विभिन्न प्रकार की विकलांगता के शिकार हुए। प्राकृतिक आपदाओं और घटनाओं जैसे जंगल में आग लगना, आग के पहाड़ों का फटना आदि से भी प्रदूषण फैलता है। इसके अतिरिक्त लड़ाई के हथियारों में यूरेनियम का उपयोग, टैंकर मोटरकारों, बसों वगैरह से तेल गिरने औद्योगिक अपशिष्ट के उपयोग और तकनीक के उपयोग के कारण भी पर्यावरण में प्रदूषण पैदा होता है। उद्योगों की चिमनियों बढ़ते वाहनों एवं अन्य कारणों से वायुमण्डल में अनेक गैस मिश्रित हो रही है। जिसमें सल्फर डाई ऑक्साइड, कार्बन मोनोआक्साइड नाइट्रोजन के विभिन्न ऑक्साइड मुख्य है। वाहनों से निकला धुँआ वायुमण्डल में असंतुलन करता है।"[4]

राष्ट्रीय पर्यावरण अभियांत्रिक शोध संस्थान के वैज्ञानिकों के अनुसार देश का लगभग 70 प्रतिशत भूगर्भीय जल मानवीय उपयोग के लिए अनुपयुक्त हो चुका है। देश की अधिकांश नदियों का जल प्रदूशित हो चुका है, विशेषतः उन नदियों का जिनके किनारे विशाल औद्योगिक नगर स्थित है और जिनका अपरिमित दूषित अपशिष्ट इनमें आकर गिरता है। "मानव कृत परिवर्तनों से जल की वास्तविक या सम्भावित उपयुक्तता में हानिकरण ही जल प्रदूषण है अथवा प्राकृतिक जल में किसी अवांछित बाह्य पदार्थ का प्रवेश जिससे जल की गुणवत्ता में अवनति आती हो, जल प्रदूषण कहलाता है।

ध्वनि–प्रदूषण भी एक ज्वलन्त समस्या बन चुकी है। आजकल गाँव, नगरों, शहरों में इतना ज्यादा शोरगुल वाहनों की लम्बी कतारें व उनके हॉर्न, लाउडस्पीकर की ध्वनि शादी विवाह में डीजे आदि का बजना ये सब ध्वनि प्रदूषण के कारक हैं। भारत में ध्वनि

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

प्रदूषण के प्रति सदैव से उदासीनता रही है। यही कारण है कि नगरीकरण में वृद्धि के साथ–साथ वाहनों की संख्या में वृद्धि से तथा कारखानों से होने वाले शोर में अत्यधिक वृद्धि होती जा रही है।[6]

निष्कर्ष

पर्यावरण अपने आप में इतनी बड़ी समस्या है जिसको आसानी से खत्म तो नहीं किया जा सकता है। परन्तु सोच को बदलते हुए छोटे–छोटे उपाय कर इस समस्या को जड़ से खत्म भी किया जा सकता है और जिससे भारत को फिर से स्वच्छ और संरक्षित कर सकते हैं। जो स्वच्छ भारत का सपना हमारे वर्तमान प्रधानमंत्री माननीय श्री नरेन्द्र मोदी जी ने देखा है। इसे बचाने के महत्त्वपूर्ण बिन्दु हैं–

- वाहनों का कम से कम उपयोग करना जिससे तेल की बर्बादी रोकी जा सके।
- मशीनों का उपयोग कम करना तथा हाथ से बनी वस्तु का उपयोग अधिक करना।
- सौर ऊर्जा से चलने वाले यन्त्रों का उपयोग करें।
- खेतों में जैविक खाद का प्रयोग करें।
- अधिक मात्रा में पेड़–पौधे लगायें।
- नदियों में मल–मूत्र मृत शरीर के बहाव पर रोक।

आज ये सब पर्यावरणीय समस्याएँ हमारे सामने मुँह खोले खड़ी हैं विकास की अन्धी दौड़ के पीछे मानव प्रकृति का नाश करने लगा है। सब कुछ पाने की लालसा में वह प्रकृति के नियमों को तोड़ने लगा है। प्रकृति तभी एक साथ देती है जब तक उसके नियमों के मुताबिक उससे लिया जाय। आधुनिक तकनीकि संसार में बहुत सी पर्यावरण की समस्या है जो हमारी जीवन शैली को प्रभावित करती है। पर्यावरण की सभी समस्याओं को इस ग्रह के सभी व्यक्तियों के द्वारा तत्काल आधार पर सुलझाने की आवश्यकता है। वर्तमान समय में प्रत्येक व्यक्ति की स्वयं की जिम्मेदारी के अलावा भी उसे राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय किये जा रहे प्रयासों में यथाशक्ति सहायता करनी चाहिए।

सन्दर्भ

1. छिल्लर, डॉ० सुशील कुमार., छिल्लर, डॉ० मंजूलता. (2011). पर्यावरण अध्ययन. प्रकाशन राहुल पब्लिकेशन्सः मेरठ प्रथम संस्करण. पृष्ठ **01.**
2. वही. पृष्ठ **03.**
3. यादव, केदारनाथ सिंह., यादव, रामजी. (2007). पर्यावरण शिक्षा. प्रकाशन अर्जुन पब्लिश हाउसः नई दिल्ली. प्रथम संस्करण. पृष्ठ **66.**
4. सिंह, डॉ० एफ0बी0. पर्यावरण मुद्दे एवं नीतियाँ. प्रकाशन मयूर प्रेसः इटावा. प्रथम संस्करण. पृष्ठ **79.**
5. सक्सेना, ए०वी०. (2008). पर्यावरणीय अध्ययन. प्रकाशन एच०पी० भार्गव बुक हाउसः आगरा. प्रथम संस्करण. पृष्ठ **103.**
6. यादव, केदारनाथ सिंह., यादव, रामजी. (2007). पर्यावरण शिक्षा. प्रकाशन अर्जुन पब्लिश हाउसः नई दिल्ली. प्रथम संस्करण. पृष्ठ **73.**

25

भारतीय कला में नारी का स्थान

अनामिका सक्सेना
शोधार्थी, चित्रकला विभाग
बी. एस. एस. एजूकेशन सेन्टर कानपुर

नारी का इतिहास सृष्टि के आरम्भ से ही अस्तित्व मान है। शतपथ ब्राह्मण में वर्णित है कि सृष्टि के प्रारम्भ में आत्मा ही थी, जिसे पुरूष की संज्ञा प्रदत्त थी। वह पुरूष रूपी आत्मा अकेली भ्रमण नहीं कर सकती थी अतः उसने सहयोगी एवं साथी की इच्छा की और वही से पुरूष दो भागों में विभाजित हो गए। नर और नारी के रूप में। यही नारी अंश अतीत से ही मानव की प्रेरणा बिन्दु रही। जीवन की सार्थकता नर और नारी के आपसी सम्बन्ध पर निर्भर है। आदिकाल से सभ्य देशों में यही प्रयत्न होता चला आ रहा है कि नर और नारी के वास्तविक सम्बन्ध में विकृत न आने पाते। नारी पुरूष तत्व का आधार है बिना उसके मानव अपने जीवन में एक बहुत बड़े अभाव का अनुभव करता है संसार के साहित्य एवं चित्र विद जिस सीमा तक नारी चित्रण में सफल हो सके हैं उतनी ही मात्रा में उनका देश और साहित्य उन्नत तथा प्रगतिशील समझा गया है। यह अतिशयोक्ति नहीं कि भारत इस दिशा में अनुग्रह है। निस्संदेह पावन भूमि के ऋषि–मुनियों दार्शनिकों तथा महाकवियों ने नारी सौन्दर्य में पवित्र ब्रह्मा अनुभूति की झांकी देखी और उस अलौकिक छवि को महामाया आदि शक्ति सीता राधा भगवती आदि नामों में उतार लिया। जिस तरह आज बीसवीं शताब्दी में उसे अपनी महानतम शक्ति का आभास है उसी तरह उसे वैदिक युग में अंधकार और प्रकाशन का पूर्ण ज्ञान था उस समय विदृशी मैत्री ने परम पुरूष से प्रार्थना की थी तमसो मां ज्योतिर्गमय, वैदिककाल की बहुत सी नारियों को मंत्र दृष्टा ऋषि की उपाधि से अलंकृत किया गया था।

आदि युग से ही नारी के दो रूप प्रमाणित होते हैं एक शुद अलौकिक दूसरा भौतिकता मूलक और एक तो हमें स्वर्ग की ओर ले जाता है दूसरा नरक का सीधा मार्ग प्रशस्त कराता है आध्यात्मिक तत्व ज्ञानी महात्मा संत कबीर ने भी लिखा है।

माया है दुई भांति–की देखी ठोक बजाय।
एक मिलावे नाम ते एक नरक ले जाय।।

बौद्ध युग में भी नारी का आध्यात्मिक जागरण शांति और कल्याण के वातावरण में तथागत के सत्य और अंहिसा का साथ देता रहा है। मठों संग्राम और बिहारो में नारी ने भिक्षुणों का परिधान धारण कर अपनी चिंतन शक्ति, जागरूकता का कायाकल्प किया। यशोधरा गौतमी संघमित्रा आदि ने भारतीय संस्कृति के सृजन में योग दिया। गुप्त राजवंश युग में शकुंतला की अलौकिकता की सृष्टि कर महाकवि ने नारी के पावन सौंदर्य का मनोरम वर्णन प्रस्तुत किया है। भारतीय कलाओं की आदि भूमि सत्यम शिवम सुन्दरम है। भारतीय साहित्य कभी भी शिवेतर नहीं बन सका यही कारण है कि जीवन के प्रत्येक स्तर में भारतीयों ने अलौकिकता का दर्शन किया है। उनके वेद, दर्शन, रामायण, महाभारत, भागवत सबके सब अलौकिक है। इस अलौकिक पृष्ठभूमि में एक बहुत बड़ी शक्ति है नारी वैदिक कालीन साहित्य ने पुष्प सलिल सरस्वती के तट पर आये दम्पत्ति के अधारों पर स्पंदित स्वाहा, के मधुर संगीत के ब्रह्म चिंतन में स्वर्ण युग की अलौकिक किरण देखी। भारतीय इतिहासकारों ने इस युग को अत्यंत धनी और वैभवशाली बतलाया है। नारी शाशक्त सौंदर्य की अभिव्यक्ति है और उसका प्रतिक्षण परिवर्तित होने वाला रूप ही कला के प्रेरक बिन्दु है।

भारतीय जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सौन्दर्य की उपासना की गई। असुन्दर के प्रति विमुक्ता और सौन्दर्य का सृजन तथा उसका संभाग भारतीय सभ्सता का आधार रहा है। वैदिक कालीन सभ्यता से महाकाव्य काल तक का इतिहास सृजनात्मक प्रवृत्तियों का प्रतिबिम्ब प्रस्तुत करता रहा है। चाहे साहित्य हो या चित्र या शिल्प सभी में सृजनात्मक स्वरूप का ही दर्शन होता है। उन सृजित विषयों में सौन्दर्य, राग रस सब कुछ विद्यमान हैं। सर्वांग स्वरूप को आलोकित कर हम यही कह सकते हैं कि भारतीय अतीत का इतिहास सौंन्दर्य युक्त कलामय जीवन का प्रतिरूप है। चित्रकला की प्राचीनता का प्रमाण तो हमारे धर्म ग्रन्थ ही है। भारतीय चित्रकला

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है, चित्रकला सम्बन्धी उल्लेख उपनिषदों में मिलते है। वैसे तो कलाओं की सीमा अत्यंत विस्तृत है महामुनि वात्सायन के कामसूत्र में चौसठ प्रमुख कलाओं का उल्लेख आता है। किन्तु उसमें भी चित्रकला की प्रमुखता सिद्ध होती है। शची रानी गुट्टू ने लिखा है कि विष्णुधर्मोत्तरा पुराण में एक उक्ति क्लाना प्रवर चित्रम् अर्थात कलाओ में चित्रकला को सर्वोत्तम है। जिन खंडो में चित्रों का उल्लेख मिलता है उसका नाम ही चित्रसूत्र है।[1]

भारतीय सभ्यता में कला का विस्तृत अर्थ उजागर होता है आनन्द की सीमा तक ही नहीं बल्कि परमानन्द को सुलभ कराने का माध्यम माना गया है। भारतीय कला विदो ने सदा से ही कला में निहित तत्व का ज्ञानार्जन किया है तभी तो यह श्रेष्ठता विधमान है। कलाकार की कृतियों में साहित्यिक, मानसिक व बौद्धिक विकास का स्वरूप स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। भारतीय संस्कृति का लक्ष्य परम तत्व की प्राप्ति है यही कारण है कि कला इस लक्ष्य प्राप्ति का माध्यम बनी और हमारे देश के महान विभूतियों ने विद्वानो ने कला की विश्रांत भोग मैं नहीं बल्कि परम लक्ष्य यानी परम तत्व को प्राप्त करने में माना है। कला की प्राचीनता स्पष्ट है ऋग्वेद में हमें कला के प्रवाह का ज्ञान मिल जाता है नाना कलाओं के उदाहरण वेदो में प्राप्त है। चित्रकला का उदभव यज्ञ वेदिकाओं की रेखा कृतियों से हुआ है। बागमय में वर्ण लिपि और चित्र लिपि का स्वरूप, ज्ञान, हमें प्रमाण के रूप में मिलते है। इसी चित्रकला का भी उदभव हुआ और भविष्य में यही कला जन जीवन की प्राण बन गयी। कला का अर्थ बड़ा व्यापक है। प्रसिद्ध कला समीक्षक कुमार विमल ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'कला विवेचन' में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के विचारों के दृष्टिांनतो के आधार पर कला को महामाया का चिन्मय विलास कहां गया हैं।[3]

प्राचीनों के कलागत दृष्टिकोण में तीन बातें प्रमुख है कला के आवरण में तत्व बाद, कला में कल्पना का तत्व और कला की ऐतिहासिक परम्परा उन्होंने कला को महाशिव को आदि शिक्षा शक्ति से सम्बन्ध माना है। ललिता स्तवराज से पता चलता है कि जब शिव को लीला के प्रयोजन की अनुभूति होती है। तब महाशक्तिरूपा महामाया जगत की सृष्टि करती है। अतः शिव की लीला सखी होने के कारण महामाया को ललिता कहा गया है और यह माना गया है कि इन्ही ललिता के लालित्य से ललित कलाओं की सृष्टि हुई है।[4] मूल रूपेण कला सौन्दर्य अनुभूति से परमानन्द की प्राप्ति का साधन है। फिर सौन्दर्य के सृजनात्मक माध्यम के रूप में नारी ही हमारे समक्ष आती है निसंदेश सृजन की अनोखी क्षमता वाली नारी मानव के लिए प्रेरणा स्त्रोत बनी और चित्रविदों ने भी नारी को सौन्दर्य का प्रतिरूप माना तथा उसी से प्रेरित होकर अपनी कृतियों को जन्म दिया गया है ऐसा लगता है जैसे कलाकार और उनकी कृतियों के सृजन में नारी ही पर्याप्त प्रेरणा स्त्रोत बनी रही है।

तभी तो भारतीय सभ्यता और संस्कृति में इन कलाओं को तथा नारी को विशिष्ट स्थान प्राप्त है। विशेषकर आज ही नहीं प्राचीन युग से ही चित्रकला हमारे जीवन की अभिव्यक्ति का माध्यम बनी रही। चित्रकला ने भारतीय जनजीवन को संस्कारमय रूप से सवारने में जितना योग दिया अन्य ने नहीं। चूकि भारतीय जनजीवन में पुरूष नारी सभी कलामय वातावरण से सम्मोहित थे। फिर हमारे धर्म शास्त्र वेद वेदांग ही कैसे अछूते रहते। यही चित्रकला हमारे संस्कृति का आधार बन गई है चाहे वह धर्म से युक्त हो चाहे किसी कर्म या संस्कार से।

प्रत्येक देश की कला मैं वहां की सभ्यता एवं संस्कृति स्पष्ट प्रतिबिबिंत होती है क्योंकि कला वह माध्यम है जिसके द्वारा वहां की सभ्यता, वस्त्र विन्यास, धन धान्य, वैभव ऐश्वर्य, रहन–सहन, सामाजिक स्तर सब कुछ ज्ञात किया जा सकता है। धार्मिक जीवन के संस्कार दैनिक एवं संस्कृति का वास्तविक स्वरूप सब कुछ कला के द्वारा दृष्टिगोचर हो जाता है नारी का इसमें विशेष सहयोग है इस सत्य से हम विमुख नहीं हो सकते वास्तव में काम का आधार कला भी एक ही है। काम के लिए कला प्रेरक है वास्तव में सृष्टि जनन क्रिया की काम कला है।

धार्मिक ग्रन्थों से यह ज्ञात होता है कि ब्रह्मा भी जब सृष्टि की रचना करने में असफल हो गए तब उन्होंने सहयोग के लिए शक्ति की उपासना की और शक्ति ने बिन्दु रूप धारण किया उसके उपरान्त शिव तेज स्वरूप होकर उसने प्रवेश कर गए इन दो वस्तुओं के सहयोग से नाद तत्व का जन्म हुआ। सही नाद तत्व और बिन्दु के सहयोग एक अवस्था को हम अर्धनारीश्वर कहते है यही संयुक्त बिन्दु पुरूष और स्त्री के आकर्षक का कारण बना इसीलिए इसे काम की संज्ञा दी गई हमारा धर्म शास्त्र इस बात का प्रमाण प्रस्तुत करता है कि उपयोग दो बिन्दुओं के अतिरिक्त श्वेत बिन्दु नर और रक्त बिन्दु स्त्री दो अन्य बिन्दु होते है। यह दोनों बिंदु मिलकर ही कला का सृजन करते है। तभी तो कला के निर्माण में स्त्री की प्रमुख भूमिका है। भारतीय संस्कृति की पोषित भारतीय नारी ही है जिसके मनोहर सौंदर्य में नाना गुण समाहित होते हैं। विभिन्न गुणों के कारण ही नारी को विभिन्न संज्ञा से विभूषित किया गया है और उनके अनेक रूपों का उन विभिन्न रूपों के मुद्राओं का चित्रांकन भारतीय चित्रकला के प्राण भारतीय चित्रकला में चित्रित नारी मुद्राएं एवं उनके रोचक स्वरूप चित्रकला की अमानत है। नारी के अभिधेयो को उजागर करने में पूर्ण समर्थ है समय समय पर चित्राकित जैन गाथा में भी नारी अंकन देखने को मिलता है यही नहीं भिति पटो की चित्रकारी में भी नाना शैलियों में नारी अपना प्रतिनिधित्व करती दिखलाई गई है।

नर का उस पर स्वामित्व होता है जिसके कारण वह नारी कहलाती है। नर शब्द के जिस प्रत्य से नारी शब्द बनता है उसका अर्थ नर के अधिपत्य में रहने वाली से है इस शब्द से सृष्टि के एक प्राणी विशेष का रूप सामने आता है जो भक्ति काल में भी प्राय

उसी अर्थ में प्रयोग होता था जिस अर्थ में.... आज साधारणतया माता शब्द का प्रयोग होता है यह एक ज्ञातव्य विषय है कि भक्ति काल में जहां जहां स्त्री निंदा है वहां वहां प्रायः स्वत्र नारी शब्द का प्रयोग हुआ है वह संयोग से यौन सम्बन्ध से प्रतीक के रूप में ग्रहण हुआ है ऋग्वेद में नारी को मैना कहा गया है क्योंकि वह पुरूष के द्वारा सम्मान प्राप्त करती है दूसरा जाति वाचक शब्द है स्त्री जिसका अर्थ संस्कृति व्याकरण अनुसार है। लज्जा शीलता के कारण भी स्त्री की संज्ञा दी गई है जब नारी अपने को पुरूष के साथ मिलती है तब योद्धा कहलाती है आजकल तो नारी को पुरूष की सहयोगिनी मानने का प्रचार हो रहा है जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में यह आशा की जाती है कि वह पुरूष के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चले उसके प्रत्येक कार्य वह मात्र हाथ ही ना बटाए बल्कि उसका पथ प्रशस्त करें यही कारण है कि आज के साहित्य बिन्दु उसे मुक्त करके मानवी का गौरव दिलाने के लिए प्रयत्नशील हैं भक्ति योग में भी नारियों के श्रेष्ठ कर्म का उल्लेख मिलता है कि नारियों ने शौर्य प्रदर्शन करके चित्ताओ में अपने को समर्पित करके धर्म व समाज का नेतृत्व करके पुरूष समाज को गौरवान्वित किया। यह नारी योद्धा रूप ही तो है क्योंकि वह सौंदर्य बुनती या बिखेरती है अतः उसे वामा कहा गया है। महिला शब्द भी जाति वोधक है यह मह धातु से बना है। यह का अर्थ होता है पूजा। जो समाज में पूजित हो इस शब्द से समाज में नारी की प्रतिष्ठा का आभास होता है। शप्तशती में नारी को वरना कहा गया है। सौभाग्यादि च यतिक चिददश्यते वरना जने।

उत्सव त्वप्रसादेन तेन जाप्यमिदशुभम।[4] स्त्री की प्रकृति में चार विशेषताएं होती हैं जिन पर रसिक हृदय मुक्त हुआ करते हैं प्रेम ममता आकर्षण भावुकता जिनमें से प्रेम मृदुत्व व तनुत्व कुशलता यह 2 गुण तो नारी के शरीर से सम्बन्ध रखते है अंगना शब्द का अर्थ है जिसके बड़े प्रसन्न हो स्त्री का एक नाम है जो उसके अंग विशेष नितंब की तुलसा से नारी सौंदर्य को प्रकाशित करता है इसी प्रकार करमोरू शब्द से प्रकट होता है नारी का भाग हाथी की सूंड के सदृशय कठोर हो संस्कृत के महाकवि कालिदास मर्यादा पुरूषोत्तम रामचन्द्र जी से सीता को कहलाते हैं।

यहां महाकवि ने करमोरू और मृगपेक्षणी दो सम्बन्धों का प्रयोग किया है साथ ही दूसरा संबोधन नेत्र सौंदर्य को प्रकट करता है बाम लोचना का अर्थ हे सुन्दर नेत्रों वाली इसका दूसरा भाव है।[5] श्री दुर्गासप्तशती अर्थकीलकम श्लोक 12 बाम कामो लोचने अर्थात जिसके नेत्रों में काम तरंगित होता है कांता का अर्थ मोहक और आकर्षक लगने वाली है उसमें काम की प्रबलता रहने के कारण ही दसे कामिनी भी कहते हैं तन्वी कृश होने के कारण कहलाती है मद का प्रकरण होने के कारण नारी परमदा कहलाती है। और मानापमान का विचार करने के अपाग (कटाक्ष) से देखती है। किसी बात को नादानी के कारण उल्टा समझ लेना नारी स्वाभाव है इसी से उसे पतीपदशिनी कहा जाता है।

सुंदरी की संज्ञा से नारी को विभूषित किया गया है पुरूष द्वारा विकास के माध्यम से ग्रहीत होने के कारण वधू कहलाती है केश सज्जा में सीमांत का स्थान रहने के कारण उसे सीमंती कहा गया है।

प्रियुसु सौभाग्य पराहि चारूता। अर्थात सौंदर्य की सार्थकता इसी में है कि वह प्रिय को अपनी और आकर्शित कर ले अमर होश में एक स्थान पर नारी को मलकाशिनी कहा गया है वास्तव में नारी के व्यक्तित्व में संभवत मादकता है यह शब्द उसी ओर संकेत करता है। जिसमेमस्ती प्रकट होती रहती है वरवरणिनी का अर्थ है जिसका रंग आकर्षक हो।

सन्दर्भ

1. गुटू, शशी रानी. कला दर्शन. पृष्ठ **20.**
2. द्विवेदी, हजारी प्रसाद. प्राचीन भारत के कलात्मक विनोद. पृष्ठ **8–9.**
3. कुमार, विमल. कला विवेचन. पृष्ठ **26–27.**
4. दुर्गा, सप्तशती. अर्थ कोलकम् श्लोक. – **12.**
5. महाकवि, कालीदास. कुमार सम्भव. पंचम सर्ग।

26

वर्तमान परिवेश में भारतीय संस्कृति

श्रीमती आराधना कुमारी
एसोसिएट प्रोफेसर, इतिहास विभाग
महिला सेवा सदन डिग्री कॉलेज, प्रयागराज
ईमेलः *draradhna14@gmail.com*

भूमण्डलीकरण से तात्पर्य है समस्त विश्व की एक ''सार्वभौमिक ग्राम'' के रूप में परिकल्पना। आज भूमण्डलीकरण प्रत्येक क्षेत्र का मुख्य विषय बन गया है क्योंकि इसने समाज के प्रत्येक क्षत्रे को अत्यन्त प्रभावित किया है और अर्थशास्त्र राजनीति, तकनीक, संस्कृति, शिक्षा, हर क्षेत्र को व्यापक रूप से अपनी गिरफ्त में ले लिया है। भूमण्डलीकरण की इस होड़ में मानवीय पहलू के जिस पक्ष पर गहन एवं व्यापक प्रभाव पड़ा है यह है संस्कृति। संस्कृति संस्कारों को परिणति है। संस्कार वह है जो मनुष्य को भीतर बाहर से शुद्ध बनाये, उसे उत्कर्ष और सुख प्रदान करें। संस्कृति वस्तुतः व्यक्ति समाज और राष्ट्र की पहचान होती है। संस्कृति का आशय मानव की समाजार्थिक राजनीतिक आर्थिक भौतिक और कलात्मक जीवन को समस्त उपलब्धियों की समग्रता से है।

हमारे भारतीय मनीषियों ने सम्पूर्ण विश्व के कल्याण और संसार के सुचारू रूपेण संचालन हेतु समय–समय पर अनेक नीतियों का प्रणयन किया, जिसमें से एक भूमण्डलीकरण की नीति भी है। भारत प्राचीन काल से सम्पूर्ण विश्व को कुटुम्ब मानता रहा है। इसका प्रमाण है भारत ने स्वार्थवश किसी भी देश पर आधिपत्य जमाने का प्रयास नहीं किया और न हठात् किसी पर अपनी सोच या संस्कृति थोपी है। ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' को भावना उसे इतना बल देती रही कि वह अपने आक्रमणकारियों को भी अपने में आत्मसात् करता गया क्योंकि उसकी दृष्टि रही ''सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः। सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुखःखभाग भवेत्।।''

भारतीयों ने अपनी मूलभतू संस्कार–परायणता अर्थात् त्याग एवं सत्यता के मूलभूत गुणों को कभी नहीं छोड़ा। हमारी शिक्षा पद्धति हमें नैतिक मूल्यों को त्यागकर प्रगति करने का पाठ नहीं पढ़ाती है। विश्व बन्धुत्व की धारणा, अनेकता में एकता, धार्मिक सहिष्णुता, सद्भाव, सह–अस्तित्व समन्वयवादी मूल्यों आदि को वैदिक काल से ही ग्रहण किया गया। यह सारे मूल्य भारतीय संस्कृति को अप्रतिम बनाते है क्योंकि इनमें निहित दर्शन सामन्जस्य एवं विवेक दृष्टि से विविध दुखों से मुक्ति के लक्ष्य को प्राप्त करने का साधन है। हमारे प्राचीन दर्शन के कारण ही हमारी संस्कृति की विश्व में पहचान है। भूमण्डलीकरण और आर्थिक उदारीकरण ने वर्तमान समय में प्रौद्योगिकी और बाजार के साथ साथ ही संस्कृति और नैतिकता के क्षेत्र में भी हस्तक्षेप किया है। भूमण्डलीकरण की तथाकथित सांस्कृतिक समन्वय की धारणा ने भारत के सांस्कृतिक पहलू को बुरी तरह से उद्देलित किया है।

किसी भी देश के बहुमुखी विकास के लिए आवश्यक है कि देश में पर्याप्त मात्रा में मानव संसाधन उपलब्ध हो, जो प्रकृति प्रदत्त संसाधनों का समुचित उपयागे कर सकें। मानव संसाधन के विकास में सर्वप्रथम स्थान शिक्षा का है। किसी भी राष्ट्र की पहचान उसकी शिक्षा और संस्कृति से हो होती है। वस्तुतः शिक्षा और संस्कृति अन्योन्याश्रित है। जब तक भारतीय संस्कृति का स्वरूप निर्धारित नहीं होता तब तक शिक्षा को भी उचित आधार उपलब्ध नहीं हो सकता और मनुष्य के व्यक्तित्व का समग्र विकास नहीं हो सकता। आर्थिक सामाजिक और राजनीतिक स्थितियों एक जैसी नहीं होती किन्तु संस्कृति का प्रवाह चिरकालिक तथा शाश्वत होता है। शिक्षा मानव विकास को रोढ़ है। शिक्षा समाजीकरण को एक प्रक्रिया ही नहीं है बल्कि सांस्कृतिक मूल्यों को आगामी पीढ़ियों तक पहुँचाने तथा विभिन्न समस्याओं का सर्वोत्तम हल ढूँढने का भी सबसे अच्छा माध्यम है।

विद्यार्जन से व्यक्ति आत्मनिर्भरता तो प्राप्त करता ही है, साथ ही परिवार और समाज के निर्माण में भी योगदान करता है। प्राचीन काल में शिक्षा का लक्ष्य ज्ञान, प्रकाश और आन्तरिक सुख की प्राप्ति था पर आज के भौतिकवादी युग में शिक्षा के स्वरूप में जो परिवर्तन आया, उसी के कारण शिक्षा का लक्ष्य भी बदल गया। शिक्षा बौद्धिक एवं नैतिक विकास के लिए न होकर व्यावसायिक

हो गयी है। आज अधिकाधिक धनार्जन करना, सुख–समृद्धि के साधन ढूँढना और निरन्तर प्रगति करना ही मानव का लक्ष्य है और उन्हें वह शिक्षा के माध्यम से प्राप्त करना चाहता है।

भूमण्डलीकरण की इस वर्तमान व्यवस्था में शिक्षा और सांस्कृतिक विरासत को अक्षुण्ण बनाए रखना ही सबसे बड़ी चुनौती है। वर्तमान समय में भूमण्डलीकरण एवं अन्तर्राष्ट्रवाद के नाम पर पश्चिमी सभ्यता एवं संस्कृति हमारी भारतीय संस्कृति पर प्रभुत्व जमाती जा रही है। आधुनिक संचार क्रान्ति इसे तीव्रता प्रदान कर रही है। इस सांस्कृतिक आक्रमण को रोकने के लिए और अपनी सांस्कृतिक विरासत को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए अपने देश के जनमानस के लिए शिक्षा की ऐसी व्यवस्था की जानी चाहिए, जिसमें सांस्कृतिक आधार मूल्य इतने सुदृढ़ हो कि किसी भी प्रकार के बाहरी आक्रमण से वे अपनी सुरक्षा कर सकें। ऐसा करना किसी संकुचित मानसिकता का परिणाम नहीं अपितु इसलिए आवश्यक है, क्योंकि सुदृढ़ राष्ट्रवाद ही एक स्थायी और सौहार्दपूर्ण अन्तर्राष्ट्रवाद को प्रोत्साहन दे सकता है। जब तक हम लोग अपनी सांस्कृतिक विरासत का सम्मान स्वयं नहीं करेंगे तब तक न ही हम अन्य देशों को उचित सम्मान दे सकेंगे और न ही अन्य देशों से वह सम्मान प्राप्त कर सकेंगे। अतः शिक्षा का लक्ष्य और स्वरूप भारतीय संस्कृति को विश्वव्यवस्था का अंग बनाते हुए उसके राष्ट्रीय स्वरूप को सुरक्षित करना भी होना चाहिए।

आज पाश्चात्य सभ्यता एवं संस्कृति का अन्धानुकरण इस तेजी से हो रहा है कि हम अपने हो नैतिक, सांस्कृतिक और सामाजिक मूल्य भलू ते जा रह है। आज जहाँ विज्ञान एवं तकनीक के क्षेत्रों में हम आश्चर्यजनक उपलब्धियों के युग में रह रहे है और विकास ने पूरी दुनिया को समेटकर एक भूमण्डलोकत गाँव का रूप दे दिया है वहीं मानवीय मूल्यों, संवेदनाओं सामाजिक सरोकार आदि के संदर्भ में हमने बहुत कुछ खोया भी है। एक स्वस्थ राजनीतिक समाज और विकासमान व्यक्ति के प्रत्येक कार्य के पीछे कोई नैतिक बल या प्रेरणा होनी चाहिए क्योंकि जिस क्षण व्यक्ति अपनी आत्मा को सचेतन आवाज को स्वार्थ के वशीभतू होकर कुचल देता है उसी क्षण उसका पशुत्व प्रबल हो उठता है और सभी समस्याओं के प्रति उसके विचार एवं दृष्टिकोण दूषित हो उठते है।

भारत की परम्परागत शिक्षा प्रणाली में गुरु आश्रम में सहशिक्षा का आदर्श प्रस्तुत किया जाता था। जहाँ राजा से रंक सभी एक साथ शिक्षा प्राप्त कर सकते थे। वहीं गुरु–शिष्य परम्परा के माध्यम से गूढ़ज्ञान, शिष्यों की पात्रता, ग्राहकता व योग्यता का परीक्षण करके हो अगली पीढ़ी को स्थानान्तरित किया जाता था, इसलिए इसका उपयोग भी सृजनात्मक संयत एवं नैतिक होता था। किन्तु वर्तमान समय की शिक्षा प्रणाली मैकाल की नीति पर आधारित है जो जीवन की कला सिखाने वाली शिक्षा नहीं है, यह तो केवल डिग्री दिलाने वाली शिक्षा है। इस शिक्षा व्यवस्था में नैतिकता कोसों दूर है। यह शिक्षा एक ऐसे अन्धकार युग की ओर ले जा रही है जिसमें मानवता पशुता में परिवर्तित हो रही है। प्राचीन भारतीय ऋषियों ने शिक्षा को शासन तथा आर्थिक प्रभाव से मुक्त रखा था पर आज युवावर्ग का एकमात्र लक्ष्य बहुराष्ट्रीय कम्पनियों में नौकरी पाना ही रह गया है। आज के अधिकांश नवयुवकों में न तो देश की समस्याओं और चुनौतियों से जुझने का साहस है, न आत्मविश्वास हो।

आज शिक्षा नीति के मूल में स्पष्ट दर्शन और विचारों का समावेश होना चाहिए जो विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास कर सके, जो सिर्फ ज्ञान का ही वर्द्धन न करें अपितु विद्यार्थियों में एक ऐसी सोच का विकास करें जिससे वे नई–नई समस्याओं को आलोचनात्मक रूप से सोचने में समर्थ हो। आज शिक्षा व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए कि हम अपनी संस्कृति को अक्षुण्ण रखते हुए बाह्य सांस्कृतिक प्रभावों से प्रभावित हुए बिना अन्य देशों के वैज्ञानिक विकासों और खोजों से लाभ उठाए। आज हम आधुनिकता के बहाव में ऐसा वह चुके हैं कि हमारी परम्पराएं स्मृति मात्र वन गयी है। हम अपनी संस्कृति की सुवासित फुलवारी को किसी भी प्रकार के परिवर्तन से बचाए रखें यह हमारा हो दायित्व है। परम्परा और आधुनिकता का उचित समन्वय ही हमारी संस्कृति का मूल परिचय है। भूमण्डलीकरण की व्यवस्था अपने साथ जो संस्कृति लायी है वह है उपभोक्ता संस्कृति जिसमे सब कुछ बिकाऊ है आदर्श मूल्य और यहाँ तक कि विचार भी मैं यह कदापि नहीं कहती कि अन्य देशों के आचार विचार और संस्कृति को अपनाना अनुचित है। वस्तुतः विजातीय गुणों के सम्मिश्रण से ही समाज में गतिशीतला आती है और नई स्फूर्ति का संचार होता है। पर वर्तमान परिप्रेक्ष्य में प्राचीन सांस्कृतिक मूल्यों को सामाजिक परिवर्तन में भी अक्षुण्ण रखना आवश्यक है। हमें विश्वस्तर पर अपनी पहचान बनाने के लिए दूसरे राजनीतिक आर्थिक मूल्यों और विचारों को अधिक से अधिक समझना होगा तभी हम अपने सांस्कृतिक मूल्यों की स्थापना विश्वस्तर पर कर सकेंगे।

संदर्भ

1. (2000). जर्नल ऑफ द इन्टर–यूनिवर्सिटी सेन्टर फॉर हयूमेनिटीस एण्ड सोशल साइसेंज एजूकेशन एण्ड वेल्यसू. वाल्यूम–7.
2. राबर्टस्, आर. (1999). ग्लोबलाइजेशन. सोशल थियरी एण्ड ग्लोबल कल्चर।
3. मधुकर, इन्दिरा. (2003). इम्पैक्ट ऑफ ग्लोबलाइजेशन ऑन एजूकेशनः लर्निंग टू लिव टूगेदर. आथर्स प्रेसः दिल्ली।
4. सुन्दरम्, वी0. इम्पैक्ट ऑफ ग्लोबलाइजेशन ऑन इण्डियन कल्चर. (http://www.boloji.com/perspective/223.htm)
5. कौल, सनत. हायर एजूकेशन इन इण्डियाः सीजिंग द ऑपरच्यूनिटी. (http://www.icrier.org/pdf/wp-179.pdf)

27

श्री अरविन्द और पाश्चात्य दर्शन

डॉ० अदिती गोस्वामी
असिस्टेंट प्रोफेसर (गेस्ट फैकल्टी), शिक्षाशास्त्र विभाग
महिला सेवा सदन डिग्री कॉलेज, प्रयागराज
ईमेलः *aditigoswami1717@gmail.com*

सारांश

आंतरात्मिक जीवन अमर अनंतकाल, नित्य एवं प्रगतिशील परिवर्तनशील है जबकि आध्यात्मिक चेतना नित्य और अंनत में निवास करती है तथा देश काल से सृष्टि मात्र से बाहर स्थित हो जाना। अपनी अंतरात्मा का पूर्ण रूप में जानने और आंतरात्मिक जीवन बिताने के लिये मनुष्य को समस्त स्वार्थपरता का त्याग करना होगा किन्तु आध्यात्मिक जीवन के लिये अंह मात्र से मुक्त हो जाना होगा।

''यदि मनुष्य को इस बात की केवल एक झलक भी मिल जाये कि कितने अनन्त भोग कितनी सर्वांग पूर्ण शक्तियाँ सहज लब्ध ज्ञान के कितने ज्योतिमर्य क्षितिज, हमारी सत्ता को कितने विस्तृत शान्तिपूर्ण क्षेत्र उन प्रान्तों में हमारी प्रतीक्षा कर रहे हैं जिन्हें अभी तक हमारे जैव क्रम–विकास ने अधिकृत नहीं किया है तो वे सब कुछ छोड़ देगे और तब तक कभी चैन से नहीं बैठेगे जब तक इन सम्पदाओं का वे आयात नही कर लेते परन्तु पथ संकीर्ण है, द्वार दुर्भेद्य है और प्रकृति के पहरेदार भय अविश्वास और संशय मौजूद है जो हमें सामान्य चरागाहों की ओर से पैर माड़े ने से मना करते हैं।''[1]

–श्री अरविंद

संसार में आध्यात्म की ज्योति भारत ने प्रज्जवलित की ज्ञान और यागे की पिपासा को जगाया किन्तु स्वयं लम्बे समय तक विदेशी आक्रमणों और अंधाधुंध कल में जकड़ा भारत तामसिक निद्रा में सोता रहा ऐसे में विद्रोह आरम्भ हो गया जो जरूरी भी था। इसी समय में दार्शनिकों एवं समाज सुधारकों ने भारत को जगाकर वेदों की ओर ले जाने का प्रयास करने लगे वहीं अंग्रेजों ने अंग्रेजी शिक्षा और विज्ञान की ओर। नये भारत के लिए जहाँ संस्कृति की नीवं को मजबूत किया जा रहा था वहीं दूसरी ओर विज्ञान का द्वार भी खुल रहा था।[2]

इसी संक्रमण काल में भारतीय संस्कृति में पूर्णता का प्रतीक कमल (अरविन्द) ने खिलना आरम्भ किया। श्री अरविन्द ने भारत की बिखरी हुई आध्यात्मिक शक्तियों को एकत्रित करना आरम्भ कर दिया क्योंकि श्री अरविन्द मनुष्य को अंदर से बदलना चाहते थे। मानव की दृष्टि बर्हिमुखी होती हूँ वह समस्याओं का समाधान बाहर खोजता है जबकि वह उसके अन्दर स्थित है। उनका कहना था ''संसार में हो या देश में सच्ची एकता तभी आयेगी जब आदमी अपने ऊपरी जीवन में नहीं वरन् आन्तरिक जीवन में रहना आरम्भ करेगा उसे अपनी अन्तरात्मा को जानना होगा।''[3]

भारतीय संस्कृति और दर्शन सबसे पहले स्वयं को जानने पर बल देती है और श्री अरविन्द सब प्राणियों के अन्दर छुपी महत्तर चेतना को बाहर निकालना चाहते हैं जो उनके सामान्य जीवन की सीमा से बड़ी है तथा जिसकी सहायता से वे एक उच्चतर और अधिक व्यापक जीवन में भाग लेने के अधिकारी बन सकते हैं। वास्तव में यही चेतना सभी असाधारण व्यक्तियों में जीवन को शासित करती है तथा उसकी परिस्थितियों और साथ ही इन परिस्थितियों के प्रति उनकी वैयक्तिक प्रतिक्रिया को भी व्यवस्थित करती है।[4]

विज्ञान और कला कौशल के विकास ने पश्चिम के सांस्कृतिक जीवन में एक अद्भूत स्थिति पैदा कर दी। वहाँ दर्शन में बौद्धिक चिन्तन ही अर्थ और इति माना जाता तथा बौद्धिक चिन्तन और अनुमान के द्वारा ही सत्य का पता लगाया जा सकता है।

आध्यात्मिक अनुभव भी तभी प्रामाणिक माना जा सकता है जब वह बुद्धि की कसौटी पर खरा उतरे और यह ठीक भारतीय भावना के विपरीत है।

''मतिविभ्रम विज्ञान का शब्द है और जड़तत्व के साथ हमारे तल्लीन हो जाने के कारण जो सत्य हमसे ओझल हो गये हैं उनकी हमारे पास अब भी अनियमित रूप से आने वाली झलकों के लिए वह प्रयुक्त होता है; और आकस्मिक संयोग कहते है। कलाकारिता के अनुपम स्पर्शी को जो उस परम और विश्वव्यापी मेधा शक्ति के कार्य के अन्दर दिखायी देते हैं जिसने मानो अपनी सचेतन सत्ता के चित्रपट के ऊपर जगत के विषय में योजना बनायी है और उसे कार्यान्वित किया है।''[5] पश्चिम जगत में बाह्य ऐश्वर्य विपुल होने पर भी जीवन संकट अनुभव करता है। इच्छाएं, आवश्यकताएं बढ़ जाती हैं और धन सम्पत्ति के अधिकार के बिना जीवन खतरे में दिखायी देता है। सुख, ऐश्वर्य के सभी साधन उपलब्ध है परन्तु मानव स्वयं को सुखी नहीं कर पा रहा इसके विपरीत जीवन की भीड़–भाड़ और संघर्ष से मानसिक रोग बढ़ने लगा।

'जीवन की अशान्ति का मूल कारण मानवीय बुद्धि की अपूर्णता है और जिस क्षण बौद्धिक निग्रह शिथिल हो जाता है भीतर से स्वयं प्रकाश ज्ञान अपने आप उदित हो जाता है जो भाव मन को एक अपूर्ण शान्ति आरै आनन्द से भर देता है।[6] पश्चिम दर्शन में बौद्धिक चिन्तन और अनुमान के द्वारा ही सत्य का पता लगाया जा सकता है। आध्यात्मिक अनुभव भी तभी प्रमाणिक माना जा सकता है जब वह बुद्धि की कसौटी पर खरा उतरे और यह ठीक भारतीय भावना के विपरीत है।

पश्चात्य चिन्तन अब जीवन के लिये कार्यकारी नहीं रहा वह अब वस्तुओं के सिद्धान्त को ही खोजता रहता है आध्यात्मिक अनुभूति को नहीं श्री अरविन्द कहते हैं ज्ञान का जो आदिमत्रं थे वही अन्तिम भी होना चाहिए। परमात्मा, प्रकाश स्वतंत्रता और अमरत्व आदि आकाक्षाएं पूरी भी होगी मानव अनेक बार इस महान आदर्शों से उदासीन होकर प्रत्यक्षवादी तथा जड़वादी हो जाता है।[7]

सृष्टि में क्रम से विकास होता है वास्तव में जड़ में से वनस्पति प्रकट नहीं हो सकती। यदि जड़ में पहले से ही जीवन निहित न होता पाश्चात्य विकासवाद इस तथ्य को स्वीकार नही करता और इसी कारण उसके लिए अनेक कष्ट उपस्थित हो जाते हैं। श्री अरविन्द के अनुसार ''यह सम्भावना चाहे कितनी असम्भव दिखाई देती है। वास्तव में ऐसा नही है। आध्यात्मिक दृष्टि से जगत में जैसी ब्रह्मी चते ना में अधिकाधिक अंश वृहरित होते हैं। वैसा ही मानव ने विकास किया और अतिमानसिक चेतना के अवतरण से तो उसके लिए नया आकाश खुल जायेगा। उसके लिए प्रकृति के मौलिक रूपान्तर की सम्भावना सक्रीय हो जोयगी''।[8] भौतिक शक्ति, मानसिक शक्ति, नैतिक शक्ति और सबसे ऊपर आध्यात्मिक शक्ति जो तमाम शक्तियों का अक्षय स्राते है। श्री अरविन्द के दर्शन का आधार है।

निष्कर्ष

श्री अरविन्द के अनुसार ''मैने यह कहा है कि विज्ञान की भावना प्राचीन काल से ही विद्यमान है। भारत में तथा अन्य देशों में भी ऊपर उठकर वहाँ एक पहुँचने की चेष्टा की गयी थी पर जिस बात की ओर ध्यान नही दिया गया वह थी 'वह साधना' जिससे उस विज्ञान के साथ जीवन का अखण्ड सम्बन्ध हो जाता और उसे समस्त प्रकृति को यहाँ तक कि इस भौतिक प्रकृति को भी रूपान्तरित करने के लिए नीचे उतारा जा सकता।''[9] श्री अरविन्द व्यापक तथा समन्वित जीवन दृष्टि रखते हैं जो दार्शनिक और यौगिक का समन्वय है। व्यक्ति को अपने विकास मार्ग का अनुसरण करते हुए समाज और जगत को विकसित करना चाहिए।

संदर्भ

1. श्रीमाता जी. (1992). श्री अरविन्द आश्रम ट्रस्ट पाण्डिचेरी. ISBN-978-81-7058-275-5 'शिक्षा'. पृष्ठ **45.**
2. श्री अरविन्द. (2018). श्री अरविन्द आश्रम ट्रस्ट पाण्डिचेरी. ISBN-978-93-5210-156-6 'विचारमाला और सूत्रावली'. पृष्ठ **1.**
3. (2015). श्री अरविन्द आश्रम ट्रस्टः पुदुच्चेरी. ISBN-978-81-7060-155-5 'श्री अरिवन्द और उनका आश्रम'. पृष्ठ **7.**
4. खरे, प्रिया सोनी. (2001). वर्तमान भारत में महर्षि अरविन्द के शिक्षा दर्शन की उपादेयता'. शोध–पब्रन्ध।
5. श्रीमाता जी. (1992). श्री अरविन्द आश्रमः पाण्डिचेरी. ISBN-978-81-7058-275-5 'शिक्षा'. पृष्ठ **39.**
6. श्री अरविन्द. (2018). श्री अरविन्द आश्रम ट्रस्टः पाण्डीचेरी. ISBN-978-93-5210-156-6 'विचारमाला और सूत्रावली'. पृष्ठ **3.**
7. श्री अरविन्द. (2014). श्री अरविन्द आश्रम ट्रस्टः पाण्डिचेरी. ISBN-978-93-5210-049-1 'इस जगत की पहेली'. पृष्ठ **17–23.**
8. खरे, प्रिया सोनी. (2001). वर्तमान भारत में महर्षि अरविन्द के शिक्षा दर्शन की उपादेयता'. शोध–प्रबन्ध।
9. खरे, प्रिया सोनी. (2001). वर्तमान भारत में महर्षि अरविन्द के शिक्षा दर्शन की उपादेयता'. शोध–पब्रन्ध।

28

औद्योगिक क्षेत्र तथा कृषि उत्पादों का एक अध्ययन जिला फर्रुखाबाद के संदर्भ में

डॉ० मनीषा सक्सेना
असिस्टेंट प्रोफेसर, अर्थशास्त्र विभाग
लक्ष्मी यदुनंदन महाविद्यालय,
कायमगंज, फर्रुखाबाद।

सारांश

इस लेख में उत्तर प्रदेश के कानपुर शहर से 140 किलोमीटर दूर जिला फर्रुखाबाद के उद्योग और उनसे मिलने वाले रोजगार के बारे में विस्तृत जानकारी दी गई है। फर्रुखाबाद उत्तर प्रदेश का एक जनपद है तथा दिल्ली से लगभग 338 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है एवं राजधानी लखनऊ से 170 किलोमीटर दूर है। जिला फर्रुखाबाद पवित्र नदी गंगा, रामगंगा किनारे स्थित है। इसे छोटे काशी के नाम से भी जाना जाता है। फर्रुखाबाद जिला कई औद्योगिक इकाइयों से घिरा हुआ है, जैसे इसके उत्तर में बदायूं एवं शाहजहांपुर, पूर्व में हरदोई, पश्चिम में इटावा, मैनपुरी तथा दक्षिण में कन्नौज जनपद स्थित है। फर्रुखाबाद में 03 तहसील हैं एवं 07 विकासखंड है। 02 नगर पालिका परिषद है 04 नगर पंचायत हैं।

फर्रुखाबाद की व्यावसायिक स्थिति पर अध्ययन करने से पहले फर्रुखाबाद की स्थापना के बारे में चर्चा करते हैं कि फर्रुखाबाद की स्थापना नवाब मोहम्मद खां बंगश ने की थी, जिसने इसे 1714 में शासक सम्राट फर्रूखसियर के नाम पर रखा था। यह क्षेत्र 2181 वर्ग किलोमीटर में बसा हुआ है। इसकी आबादी 18,85 000 है। लगभग पूरे फर्रुखाबाद जिले में हिंदी भाषा का ही प्रयोग होता है। फर्रुखाबाद जिले में 1007 ग्राम है, इस जिले की 2011 की जनगणना के अनुसार पुरुषों की संख्या 1006000 है एवं महिलाओं की जनसंख्या 879000 है। पुरुष साक्षरता दर 77.61 प्रतिशत है जबकि महिला साक्षरता दर 68.82 प्रतिशत है।

फर्रुखाबाद की अर्थव्यवस्था मैं सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योगों का महत्वपूर्ण योगदान है। यह जिला पूंजी निवेश उत्पादन और रोजगार की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। इस जिले की प्राकृतिक संपदा अर्थात भूमि की उर्वरा शक्ति बहुत उपयुक्त है। जल के निकाय उचित होने के कारण मिट्टी की उर्वरता बहुत अच्छी है। यह जिला अनेकों प्रकार की कृषि उपज से भरपूर है, जिसके कारण इस जिले में रोजगार एवं स्वरोजगार प्राप्त किया जा सकता है। देश में आलू की पैदावार में प्रथम स्थान होने के साथ–साथ यहां पर गेहूं, तिलहन, दालें ,खरबूजे इत्यादि की फसल भी प्रचुर मात्रा में होती है। इस जिले में अनेकों प्रकार के उद्योग धंधे है। कुछ उद्योगों का वर्णन किया गया है जो निम्न है–

जिला फर्रुखाबाद के प्रमुख उद्योग

जिला फर्रुखाबाद में अनेक ऐसे उद्योग है जैसे आलू, गन्ना, गेहूं, सूरजमुखी इत्यादि, जो उन्नत कृषि की ही देन है और कुछ उपज और व्यवसाय तो ऐसे हैं जो इस जिले को पूरे देश में विशेश बनाते हैं जैसे कि–

(1) आलू उत्पादन
(2) चीनी मिलें
(3) तंबाकू व्यवसाय
(4) जरी कपड़ा
(5) ब्लॉक पेंटिंग

(6) वस्त्र छपाई एवं रंगाई इत्यादि

(7) फर्रुखाबादी दालमोठ नमकीन

आलू उत्पादन

सर्वप्रथम हम फर्रुखाबाद के आलू उत्पादन की बात करेंगे। इस शहर को पटेटो सिटी के नाम से भी जाना जाता है। इस क्षेत्र के किसानों की मुख्य फसल आलू है, अतः फर्रुखाबाद में आलू उत्पादन का प्रमुख स्थान है। फर्रुखाबाद जिले में एशिया की नंबर वन आलू मंडी स्थित है, जिसका नाम है सातनपुर मंडी है जो लगभग 50 एकड़ भूमि में बनी है इस मंडी में लगभग 10 करोड़ की लागत से सीसी सड़क एवं नालियां बनाई गई है और सड़क का निर्माण पेपर ईंट के द्वारा किया गया है। इस मंडी में लगभग 400000 पैकेट की आवक प्रतिदिन होती है। जनपद फर्रुखाबाद के आलू का दूसरे प्रांतों में निर्यात किया जाता है। जनपद में आलू की पैदावार बहुत बड़ी संख्या में है। व्यापार मंडल के अनुसार फर्रुखाबाद जिले में भारी मात्रा में लगभग 60 कोल्ड स्टोरेज भी है जिसमें किसान अपना आलू भंडारण करता है। इसके बावजूद भी पूरी मात्रा में आलू भंडारण नहीं हो पाता।

फर्रुखाबाद जिले में आलू की अनेकों प्रजातियां पाई जाती है जैसे– कि लाल गुलाल, चिपसोना, पुखराज कंचन, 3797, कुफरी, ख्याति, सिंदूरी आदि फसलें अधिकांश मात्रा में उत्पादित की जाती है। आलू का भाव भी आलू की प्रत्येक किस्म के साथ घटती बढ़ती स्थिति में लगभग 310,500,600,900,1000 प्रति पैकेट तक बिक जाता है।

किसान अधिकांशतः अपना आलू मंडी में ही भेजता है जिससे उसे उचित दाम पर अपनी फसल बेचने का मौका मिलता है और उसे अपनी खेती का ज्यादा से ज्यादा मुनाफा प्राप्त हो जाता है और मंडी से किसानों का सारा आलू खरीद कर व्यापारी भारत के सभी मंडियों में सप्लाई कर देते हैं।

चीनी मिलें

फर्रुखाबाद क्षेत्र की दूसरी सबसे बड़ी कृषि गन्ना है। फर्रुखाबाद में गन्ना प्रचुर मात्रा में उत्पादित होता है जो देश के विभिन्न स्थानों पर निर्यात भी किया जाता है। गन्ने की बहुत उन्नत खेती होने के कारण इस क्षेत्र मे गुड का व्यापार भी काफी प्रचुर मात्रा में होता है। गन्ने की बहुतायत खेती के कारण ही फर्रुखाबाद शहर से लगभग 35 किलोमीटर दूर स्थित तहसील कायमगंज मैं किसान सहकारी चीनी मिल लिमिटेड कायमगंज फर्रुखाबाद के नाम से स्थापित है जो कि कायमगंज रेलवे स्टेशन से मात्र 1.5 की किलोमीटर की दूरी पर है यह मिल लगभग 47 साल पुरानी सहकारी चीनी मिल है। कायमगंज स्थित सर सरकारी चीनी मिल का 9 जनवरी 1974 को तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने शिलान्यास किया था। इसके बाद 10 नवंबर 1975 को तत्कालीन मुख्यमंत्री हेमवती नंदन बहुगुणा ने इसका शुभारंभ किया था। उस समय जब चीनी मिल प्रारंभ हुई तो गन्ना विभाग ने किसानों को बीज उपलब्ध कराया अन्य फसलों के मुकाबले गन्ने की खेती के ज्यादा से ज्यादा फायदा होने से धीरे–धीरे गन्ना किसान बढ़ते चले गए जब चीनी मिल लगाई गई थी उस समय 12,500 क्विंटल दैनिक पेराई क्षमता के अनुरूप ही किसान गन्ना उगा पाते थे। जिसमें दिन प्रतिदिन बढ़ोतरी होती गई।

तंबाकू व्यवसाय

यह सत्य है कि तंबाकू खाने से जीवन रुक जाता है लेकिन यह भी कटु सत्य है कि तंबाकू से ही एक बड़ी आबादी की जिंदगी चलती है। भारत सरकार ने बेशक तंबाकू खाने वालों के लिए एक स्लोगन बना दिया है कि तंबाकू खाना हानिकारक है, परंतु आज भी पूरे उत्तर प्रदेश में तंबाकू वेन नहीं की जा सकी है, क्योंकि इससे लाखों घरों की चूल्हे जल रहे हैं, चाहे वह किसान हो व्यापारी हो या फुटकर विक्रेता। भारत के विभिन्न राज्यों में तंबाकू का उत्पादन तो होता है लेकिन फर्रुखाबाद और लगभग इसके 100 किलोमीटर क्षेत्र में किसानों के द्वारा उत्पादित तंबाकू की गुणवत्ता अन्य जगहों की अपेक्षाकृत काफी अच्छी होती है, इसी कारण फर्रुखाबाद, विशेष रुप से कायमगंज का तंबाकू व्यवसाय पूरे देश में एक अलग ही पहचान बनाए हुए हैं। इस फसल को उगाने के लिए लगभग 1 साल का समय लगता है एक बीघा खेत में लगभग 4 मन 248 किलोग्राम तक तंबाकू हो जाती है जिसमें अनुमानित लागत 12 से 15000 तक आती है इसके बाद लगभग 20 से 25000 तक की फसल बिक जाती है और कुल 5 से 10,000 तक बच जाते हैं। इस जिले का तंबाकू व्यवसाय देश की जीडीपी बढ़ाने में भी काफी सहयोग करता है।

जरी कपड़ा, वस्त्र छपाई एवं रंगाई

जिला फर्रुखाबाद वस्त्रौ में जरदोंजी के काम के लिए भी राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सुप्रसिद्ध है इस जिले में जरदोजी का कार्य बड़े पैमाने पर होता है। यहां के लहंगे, सूट, साड़ी, दुपट्टा इत्यादि पर जरदोजी का विशेष कार्य किया जाता है जो काफी कीमती भी होता है। जरदोजी के इस कार्य में सरकार को काफी विदेशी मुद्रा भी अर्जित करवाई। कई फिल्मी हस्तियों ने भी फर्रुखाबाद के लहंगे सूट साड़ी को फिल्मों के माध्यम से इसका प्रचार भी किया है। जरदोजी का कार्य एक प्रकार की हाथ की कशीदाकारी है जो बेशकीमती कपड़ों पर जरी के धागे इत्यादि के द्वारा तैयार किया जाता है इस कार्य में फर्रुखाबाद के अनगिनत बेरोजगारों को रोजगार प्राप्त हुआ हैं जो वहां के स्थानीय लोगों को जीवन यापन में सहायक होता है। इसमें अधिकांशतः था सोने व चांदी के धागों का इस्तेमाल किया जाता है और डिजाइन को खूबसूरत रूप से उकेरा जाता है।

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

फर्रुखाबाद वस्त्रों की रंगाई और छपाई के लिए भी पूरे देश में प्रख्यात है। वस्त्रों के ऊपर निश्चित पैटर्न या डिजाइन के अनुसार रंग चढ़ाने की प्रक्रिया को वस्त्र की छपाई कहते हैं। एक अच्छी छपाई उसे कहा जाएगा जिसमें रंग सूट के साथ एकाकार हो जाए ताकि घर्षण से या धुलाई करने पर भी रंग बिल्कुल न छूटे और रंग हमेशा पक्का रहे। छपाई और रंजन (dyeing) एक दूसरे से संबंधित तो है परंतु इसके कार्य अलग–अलग है। रंजन की क्रिया में संपूर्ण सूट को एक ही रंग में समानता के साथ रंग दिया जाता है जबकि छपाई की प्रक्रिया में 1 से अधिक रंग केवल कुछ चुने हुए स्थानों पर ही लगाए जाते हैं। प्रिंटिंग की क्रिया में कास्ट के टप्पे नक्काशी की हुई धातु की प्लेटें रोलर या सिल्क स्क्रीन आदि का उपयोग किया जाता है। छपाई करने के लिए इस्तेमाल करने वाले रंजक इतने गाढ़े होते हैं कि वे अत्यंत सूक्ष्म नलिका क्रिया द्वारा फैल न सके एवं छपाई का बूटा सुंदर एवं स्पष्ट बन सके छपाई के अलग–अलग प्रकार भी होते हैं जैसे कि बेलन छपाई, सिलेंडर प्रिंटिंग, स्क्रीन छपाई इत्यादि यह छपाई और रंगाई का कार्य फर्रुखाबाद की खूबसूरती को बढ़ाता है और अनेकों लोगों को रोजगार भी प्राप्त कराता है।

ब्लॉक पेंटिंग

फर्रुखाबाद अपनी ब्लॉक पेंटिंग के लिए भी काफी प्रख्यात है। ब्लॉक पेंटिंग लकड़ी और पीतल से बनी होती है। इन ब्लॉकों का उपयोग कंबल कवर चादर साड़ी सूट स्टॉल आदि सहित विभिन्न वस्तुओं पर किया जाता है। यहां के बने उत्पादों की न केवल भारत में बल्कि अमेरिका ब्राजील और कई एशियाई और यूरोपीयन देशों में भी बहुत मांग है। इसलिए फर्रुखाबाद की रंगाई छपाई एवं नमूने कहीं दूसरी जगह पर देखने को नहीं मिल सकते यहां की रंगाई छपाई व नमूनों की देश व विदेश में बहुत माँग है और देश की अर्थव्यवस्था में भी बहुत सहयोगी है।

फर्रुखाबाद दालमोठ एवं नमकीन

फर्रुखाबाद की दालमोठ इस जनपद की पहचान है। फर्रुखाबाद की दालमोठ यहां के दूसरे उद्योगों की भांति ही काफी प्रचलित है। अपने देश में ही नहीं अपितु विदेशों मैं भी यहां की दालमोठ का निर्यात होता है। यहां की दालमोठ स्वास्थ्य की दृष्टि से भी उत्तम है जनपद की नमकीन को मूंगफली के तेल एवं हींग इत्यादि डालकर स्वादिष्ट एवं स्वास्थ्य वर्धक बनाया जाता है। जिला फर्रुखाबाद में कई जगह छोटी–छोटी फैक्ट्रियां लगी हुई हैं जहां पर दालमोठ की अनेकों वैरायटी बनाई जाती हैं। शुद्ध मसालों के द्वारा तैयार की जाने वाली दालमोठ एवं नमकीन देश–विदेश तक के लोगो की पहली पसंद है इस व्यवसाय के द्वारा भी स्थानीय लोगों को रोजगार प्राप्त है।

उद्योगों के प्रोत्साहन हेतु शासकीय प्रयास एवं विभिन्न योजनाएं

फर्रुखाबाद के उद्योगों को बढ़ावा देने के लिए कृषि प्रमुख कारक है। कृषि से संबंधित फर्रुखाबाद में अनेकों उद्योग हैं जो पूरे देश में काफी लोकप्रिय हैं। फर्रुखाबाद आलू का सबसे बड़ा उत्पादक होने के कारण पूरे एशिया में प्रथम स्थान रखता है यद्यपि भारतीय सरकार फर्रुखाबाद की विभिन्न फसलों अर्थात आलू, गन्ना, गेहूं, ज्वार, बाजरा, मक्का इत्यादि पर समय–समय पर किसानों को कुछ नई तकनीकों का प्रशिक्षण देता रहता है परंतु भारतीय सरकार को अभी और अधिक इस ओर ध्यान देने की आवश्यकता है जैसे कि– कायमगंज में आलू चिप्स फैक्ट्री का निर्माण करने के लिए व्यापारी वर्षों से सरकार से लिखित रूप में मांग कर रहे हैं कि अधिकाधिक आलू का उत्पादन होने के कारण फर्रुखाबाद जनपद को चिप्स फैक्ट्री लगाई जाए परंतु अभी तक सरकार ने इसकी घोषणा करने के बावजूद भी इस ओर ध्यान नहीं दिया जिसका व्यापार मंडल को रोश है।

इसी प्रकार चीनी मिल जो कायमगंज में स्थित है, बरसों पुरानी मशीने जो एकदम जर्जर हालत में होती जा रही है, से ही कार्य किया जा रहा है जिसमें नवीनीकरण और शीघ्र कार्य करने के लिए नई मशीनों की आवश्यकता है जिसका बजट अभी तक पास नहीं हो पा रहा है और मिल भी धीरे–धीरे घाटे में जा रही है पिछले सत्र में 8564 किसानों ने 5118 हेक्टेयर भूमि पर गन्ने की खेती करके 3326700 क्विंटल गन्ने की पैदावार की और जर्जर चीनी मिल से 1416000 कुंतल गन्ने की पेराई हुई इससे केवल 140000 क्विंटल ही चीनी बन पाई हमेशा की तरह इस वर्ष भी मिल को घाटा ही झेलना पड़ा 19 लाख 10 हजार 700 क्विंटल गन्ना किसानों को कोलू क्रश पर ओने पौने दामों पर बेचना पड़ा जिससे किसानों को भी काफी घाटा हुआ यदि सरकार इस ओर ध्यान देती है तो मिल की क्षमता में ट वृद्धि होगी और निश्चित रूप से ही चीनी और गुड़ उत्पादन में वृद्धि होगी और क्षेत्र के किसानों को भी विशेष लाभ मिल सकेगा।

तंबाकू व्यवसाय के लिए भी भारतीय सरकार को कुछ उपाय ढूंढने होंगे क्योंकि दिल्ली और अन्य राज्यों में लगे प्रतिबंध से सबसे ज्यादा नुकसान यहां के किसानों को हुआ है जो तंबाकू[1] 2000 में बिक रही थी वही तंबाकू आज 12 सो रुपए मन खरीदने को कोई व्यापारी तैयार नहीं है। सभी छोटे तंबाकू व्यवसाई बर्बादी की कगार पर हैं। 90 प्रतिशत तंबाकू के गोदाम बंद किए जा चुके हैं और मजदूर आदि भुखमरी के कगार पर आ पहुंचे हैं यद्यपि तंबाकू स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है परंतु सरकार को चाहिए कि वह विदेशी सिगरेट को भी देश में आने ना दें और उस पर भी बैन लगाए।

यहां यह बताना उचित होगा की कायमगंज की वास्तविक तंबाकू का स्वास्थ्य पर कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ता क्योंकि यहां की तंबाकू से निकोटीन निकालकर इस्तेमाल किया जाता है और दवाइयां भी बनाई जाती है।

अतः यह कहना गलत नहीं होगा कि फर्रुखाबाद जिला अनेकों विशेषताओं से भरा हुआ है बस जरूरत है तो सरकार को इस ओर ध्यान देने की। इस जिले में अनेकों ऐसे कार्य हैं जिनसे लघु और कुटीर उद्योगों को बढ़ावा दिया जा सकता है एवं अनेकों बेरोजगारों को रोजगार व स्वरोजगार देने में सहयोग मिल सकता है। यदि सरकार इस जिले को वित्तीय सहायता प्रदान करती है तो व्यापारियों में और अधिक जागरूकता बढ़ेगी और व्यापार में उन्नत होगी जो राजस्व में सहयोग करेगी।

संदर्भ

1. https:///farrukhabad.nic
2. https://nppfarrukhabad.com
3. https://www.farrukhabadonline.in
4. https://www.krishisahara.com
5. www.amarujala.com
6. https://www.amarujala.com

29

माध्यमिक स्तर पर सरकारी एवं प्राइवेट विद्यालयों के शिक्षकों की आर्थिक एवं शैक्षिक स्थिति का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ० सरोज पाण्डेय

दयानन्द महिला प्रशिक्षण महाविद्यालय, कानपुर

सारांश

शिक्षक राष्ट्र के निर्माता होते है वे ही भावी राष्ट्र की आधार शिला तैयार करते है। शिक्षक ही छात्रों का सर्वांगीण विकास कर प्रगतिशील एवं सम्पन्न राष्ट्र का मार्ग प्रस्तुत करते है। स्नातक, परास्नातक तथा प्रशिक्षण शिक्षा प्राप्त करने के बाद शिक्षक जीविकोपार्जन के लिए अवसर योग्यता एवं क्षमता के अनुसार सरकारी एवं प्राइवेट विद्यालयों में जो शिक्षक कार्यरत है उनकी आर्थिक एवं शैक्षिक स्थिति क्या है तथा इनसे सम्बन्धित कौन–कौन सी समस्याएँ हैं इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखते हुए शोधकर्ता ने माध्यमिक स्तर के सरकारी एवं प्राइवेट विद्यालयों के शिक्षकों की आर्थिक एवं शैक्षिक का जानने का प्रयास किया है। शोधकर्ता ने अध्ययन के लिए 100 शिक्षकों को न्यादर्श के रूप में चयन किया है जिनमें 50 सरकारी विद्यालयों से तथा 50 प्राइवेट विद्यालयों से शोधकर्ता ने स्वनिर्मित प्रश्नावली का प्रयोग किया है शोधकर्ता सर्वेक्षण विधि पर आधारित है। परिणाम यह दर्शाते है कि सरकारी विद्यालयों के शिक्षक प्राइवेट विद्यालयों के शिक्षकों से अधिक प्रशिक्षित हो तथा सरकारी विद्यालयों के शिक्षकों की आर्थिक स्थिति प्राइवेट विद्यालयों के शिक्षकों की आर्थिक स्थिति से बेहतर है।

प्रस्तावना

मानव समाज में शिक्षक का स्थान अतिमहत्वपूर्ण है यदि अध्यापकों के बिना हम प्रगतिशील एवं सम्पन्न राष्ट्र की कल्पना करें तो यह असम्भव होगा क्योंकि राष्ट्र को प्रगति के पथ पर लाने वाले शिक्षक ही होते है। बिना अध्यापकों के सहयोग से समाज एवं राष्ट्र की उन्नति हो ही नहीं सकती है। राष्ट्र की उन्नति तभी सम्भव है जब देश के नागरिक श्रेष्ठ हो। उत्तम नागरिकों का निर्माण तभी सम्भव है जब देश में उच्च एवं आदर्श चरित्र वाले शिक्षक हो। शिक्षक ही छात्रों का सामाजिक, मानसिक तथा बौद्धिक सर्वागीण विकास करके आदर्श नागरिक का निर्माण करते है। राष्ट्र का उत्थान एवं पतन शिक्षकों के ज्ञान, अनुभव एवं आदर्शों पर निर्भर करता है। यदि शिक्षक वर्ग मार्ग से विचलित हो जाय तो राष्ट्र का विकास सम्भव नहीं है। मैकाइवर ने ठीक ही लिखा है–

''राष्ट्र का गुण उनकी सामाजिक इकाइयों का गुण है, अर्थात् सामाजिक इकाइयों का सामूहिक जीवन के कृत्य सन्तोष पर शोध कार्य किया। सन् 2001 में रेब्रो एवं भार्गव ने माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों के कृत्य सन्तोष पर शोध कार्य किया।

उद्देश्य

प्रस्तुत शोध के निम्नलिखित उद्देश्य है–

1. सरकारी एवं प्राइवेट विद्यालयों के शिक्षकों की आर्थिक स्थिति का तुलनात्मक अध्ययन।
2. सरकारी एवं प्राइवेट विद्यालयों के शिक्षकों की शैक्षिक स्थिति का तुलनात्मक अध्ययन।

परिकल्पना

प्रस्तुत शोध की परिकल्पनाएं निम्नलिखित है–

1. सरकारी एवं प्राइवेट विद्यालयों के शिक्षकों की आर्थिक स्थिति में कोई अन्तर नहीं है।
2. सरकारी एवं प्राइवेट विद्यालयों के शिक्षकों की शैक्षिक स्थिति में कोई अन्तर नहीं है।

परिसीमा

प्रस्तुत शोध में शोधकर्ता ने उन्नाव जनपद के 15 सरकारी तथा गैर सरकारी माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों का चयन किया है।

न्यादर्श

प्रस्तुत शोध में शोधकर्ता ने 15 सरकारी तथा 15 प्राइवेट माध्यमिक विद्यालयों के 50–50 शिक्षकों को न्यादर्श के रूप में चुना गया है।

उपकरण

प्रस्तुत शोध में शोधकर्ता ने स्वनिर्मित प्रश्नावली का प्रयोग किया है जिसमें कुल 30 प्रश्न है। प्रश्नावली के प्रारम्भिक 15 प्रश्न आर्थिक स्थिति से तथा बाद के 15 प्रश्न शैक्षिक स्थिति से सम्बन्धित है। प्रश्नों को दो बिन्दु 'हाँ' और 'नहीं' में बाँटा गया है। प्रश्नावली की वैद्यता तथा विश्सनीयता विशेषज्ञों से परामर्श एवं पुनः परीक्षण के माध्यम से निकाली गयी है।

सांख्यिकी प्रविधियाँ

प्राप्त तत्वों का वर्गीकरण एवं विश्लेषण प्रतिशत के आधार पर किया गया है।

विश्लेषण

आर्थिक क्षेत्र

15 सरकारी तथा 15 प्राइवेट माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत 50–50 शिक्षकों की आर्थिक स्थिति का परिणाम प्रश्नावली के अनुसार–

तालिका संख्या–1

प्रश्न संख्या	सरकारी शिक्षकों के प्राप्तांक	प्रतिशत प्राप्तांक	प्राइवेट शिक्षकों के प्राप्तांक	प्रतिशत प्राप्तांक
1	50	100	00	00
2	35	70	32	64
3	40	80	14	28
4	40	80	23	26
5	35	70	41	82
6	45	90	09	18
7	42	84	18	36
8	40	80	26	52
9	36	72	10	20
10	32	64	14	28
11	15	30	41	82
12	38	76	29	58
13	41	8	37	74
14	24	48	07	14
15	41	82	37	74
योग	**554**		**338**	

विश्लेषण

सरकारी माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों की आर्थिक स्थिति को ज्ञात करने के लिए प्राप्त प्राप्तांकों के प्रतिशत के अनुसार सरकारी स्कूलों के शिक्षकों को समय से वेतन प्राप्त होना, प्राप्त वेतन से घर के खर्चो का संचालन करना, आवश्यक आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकना, प्रमुख उत्तरदायित्वों जैसे–बच्चों की पढ़ाई एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति सन्तोषजनक होना आदि से सम्बन्धित प्रश्नावली में शिक्षकों के प्राप्त प्राप्तांकों का प्रतिशत 30 प्रतिशत से 100 प्रतिशत तक पाया गया। अतः कह सकते है कि सरकारी विद्यालयों में कार्यरत शिक्षक अपनी मुख्य आवश्यकताओं की पूर्ति सामान्यता कर लेते है अर्थात् सरकारी विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों की आर्थिक स्थिति सामान्य जीवन व्यतीत करने के लिए ठीक है।

जबकि प्राइवेट विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों की आर्थिक स्थिति का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि उन्हें वेतन सरकार

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

द्वारा प्राप्त नहीं होता है, परन्तु वेतन समय पर मिलता है। सरकार निर्धारित वेतन प्राप्त न होने से पैसे के अभाव में अन्य व्यवसाय या अन्य कार्य जीविका हेतु करने पड़ते है। प्राइवेट विद्यालयों के शिक्षक दैनिक खर्च, भोजन, कपड़ा, बच्चों की शिक्षा एवं स्वास्थ्य आदि दायित्वों की पूर्ति उचित प्रकार से नहीं कर पा रहे है। उनका भविष्य भी सुरक्षित नहीं है। प्रश्नावली से प्राप्त प्राप्तांकों एवं प्रतिशत से ज्ञात होता है कि प्राइवेट विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों की आर्थिक स्थिति दयनीय एवं विचारणीय है।

शैक्षिक क्षेत्र

15 सरकारी तथा 15 प्राइवेट माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत 50–50 शिक्षकों की शैक्षिक स्थिति का परिणाम प्रश्नावली के अनुसार–

तालिका संख्या–2

प्रश्न संख्या	सरकारी शिक्षकों के प्राप्तांक	प्रतिशत प्राप्तांक	प्राइवेट शिक्षकों के प्राप्तांक	प्रतिशत प्राप्तांक
16	48	96	49	90
17	38	76	15	30
18	50	100	26	52
19	28	56	24	48
20	24	48	35	70
21	29	58	42	84
22	18	36	37	74
23	28	56	40	80
24	29	58	40	80
25	19	38	40	80
26	40	80	48	96
27	37	74	40	80
28	43	86	47	94
29	14	28	32	64
30	12	24	37	54
योग	**457**		**542**	

विश्लेषण

सरकारी माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों की शैक्षिक स्थिति का अध्ययन सम्बन्धी प्रश्नों का विश्लेषण करने पर ज्ञात होता है कि लगभग सभी शिक्षक प्रशिक्षित है उनकी शिक्षण में अभिरूचि है, अब शिक्षकों के कार्य से प्रसन्न है। शिक्षक सांस्कृतिक कार्यक्रमों तथा अन्य पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं में रूचि रखते है। वे स्वीकारते है कि शिक्षा वृद्धि हेतु प्रशासनिक स्वीकृति एवं प्रोत्साहन मिलता है। अभिभावक बच्चों की शिक्षा सम्बन्धी समस्याएं लेकर आते है। अधिकांश शिक्षक अपने व्यवसाय से सन्तुष्ट है।

जबकि प्राइवेट माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों से प्रश्नावली से प्राप्त प्राप्तांकों के आधार पर पाया गया कि अधिकांश शिक्षक प्रशिक्षित नहीं है। शिक्षण कार्य में रूचि है तथा पाठ् सहगामी क्रियाओं में बढ़चढ़ कर हिस्सा लेते है। परन्तु सरकार द्वारा स्वीकृति तथा प्रोत्साहन न मिलने के कारण अन्य व्यवसाय में जाने के लिए प्रयासरत है तथा उचित अवसर मिलने पर अन्य व्यवसाय का चुनाव करने के इच्छुक है।

निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध कार्य से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए–

सरकारी तथा प्राइवेट माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की आर्थिक स्थिति में भिन्नता है। सरकारी माध्यमिक विद्यालयों में शिक्षकों की आर्थिक स्थिति प्राइवेट विद्यालयों के शिक्षकों से बेहतर है क्योंकि सरकारी विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों का सरकार

द्वारा निर्धारित वेतन, स्थाई नौकरी, चिकित्सा सुविधा, बच्चों की निःशुल्क शिक्षा तथा अन्य सम्बन्धित सुविधाएं मिलती है जिससे उनका सामाजिक स्तर अच्छा है।

प्राइवेट माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की आर्थिक स्थिति निम्न एवं सन्तोषजनक न होने के कई कारण है जैसे सरकार द्वारा निर्धारित वेतन प्राप्त न होना, कम पारिश्रमिक होने के साथ ही काम के घण्टो का अधिक होना, मानसिक शोषण अन्य सुविधाएं जैसे– आवास, चिकित्सा, बच्चों की निः शुल्क शिक्षा व्यवसाय न होना, नौकरी का अस्थाई होना आदि जिससे ये शिक्षक अपने दायित्वों की पूर्ति भली–भाँति नहीं कर पाते तथा उनका सामाजिक स्तर भी अच्छा नही है।

सरकारी माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों की शैक्षिक स्थिति भी प्राइवेट विद्यालयों में कार्यरत शिक्षकों से भिन्न है। सरकारी विद्यालयों के अध्यापकों की शैक्षिक योग्यता सरकार द्वारा निर्धारित है। अतः शिक्षक, स्नातक, परास्नातक तथा प्रशिक्षित है उन्हें सुविधाएँ मिलने के कारण शिक्षण कार्य में रूचि है।

जबकि प्राइवेट विद्यालयों में कार्यरत शिक्षक हाईस्कूल से परास्नातक तक शिक्षित है, लेकिन 25 प्रतिशत ही प्रशिक्षित है यद्यपि प्रशिक्षित शिक्षकों का प्रतिशत सरकारी विद्यालयों से कम है तथापि प्राइवेट शिक्षक की योग्यता सरकारी विद्यालयों के शिक्षकों से अच्छी है परन्तु कार्य की सुविधाएं न मिलने के कारण प्राइवेट विद्यालयों के शिक्षक अन्य व्यवसाय को अपनाने को उत्सुक रहते है।

सुझाव

प्रस्तुत शोध के निष्कर्षों के आधार पर आने वाले समय में हम निम्न बिन्दुओं को शोध के विषय के रूप में चुन सकते हैं–

(1) उच्च शिक्षा व माध्यमिक शिक्षा के शिक्षक/शिक्षिकाओं का आर्थिक स्थिति में अन्तर का तुलनात्मक अध्ययन।

(2) उच्च शिक्षा के सहायता प्राप्त, सरकारी व स्ववित्त पोशी महाविद्यालय के शिक्षक/शिक्षिकाओं के आर्थिक स्थिति का तुल्नात्मक अध्ययन।

सन्दर्भ

1. कपूर, उर्मिला. शैक्षिक तकनीकी।
2. गैरेट, हेनरी. शिक्षा एवं मनोविज्ञान में सांख्यिकी।
3. पाठक एवं त्यागी. भारतीय शिक्षा एवं उसकी समस्यायें।
4. भटनागर, सुरेश. शिक्षा मनोविज्ञान।
5. मेहरोत्रा, प्रेम नारायण. शैक्षिक सांख्यिकी अध्ययन।
6. शर्मा, आर0ए0. शिक्षा अनुसंधान।
7. विभिन्न समाचार पत्र एवं पत्रिकाएं।
8. कपिल, एच0के0. अनुसंधान विधियाँ (हर प्रकाश भार्गव पुस्तक प्रकाशन–आगरा)।
9. डॉ0 गुप्ता, एस0पी0. आधुनिक शिक्षा मनोविज्ञान (शारदा पुस्तक– इलाहाबाद)।
10. डॉ0 गुप्ता, एस0पी0. आधुनिक शिक्षा मनोविज्ञान (शारदा पुस्तक– इलाहाबाद)।
11. डॉ0 सिंह, अरूण कुमार. उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान (शारदा पुस्तक भवन–इलाहाबाद)।
12. डॉ0 सिंह, अरूण कुमार. शैक्षिक अनुसंधान विधियाँ (मोतीझील बनारसी दास–पटना)।
13. डॉ0 सिंह, लाभ व डॉ0 तिवारी, गोविन्द. असमान्य मनोविज्ञान (तिवारी कोठी बेलनगंज–आगरा)।
14. डॉ0 सारस्वत, मालती. शिक्षा मनोविज्ञान (आलोक प्रकाशन– इलाहाबाद)।
15. डॉ0 सारस्वत, मालती. भारतीय शिक्षा का विकास व सामयिक समस्यायें (कैलाश प्रकाशन–इलाहाबाद)।
16. पाठक, डी0पी0. भारतीय शिक्षा व उसकी समस्यायें (विनोद पुस्तक मन्दिर–आगरा)।
17. बुच, एम0बी0. 4th सर्वे आफ रिसर्च इन एजूकेशन–I (NCERT- Delhi).
18. भार्गव, महेश. आधुनिक मनोविज्ञान परीक्षण एवं मापन (विनोद पुस्तक मन्दिर– आगरा)।
19. राय, पारसनाथ. अनुसंधान परिचय (विनोद पुस्तक मन्दिर–आगरा)।
20. शर्मा, आर0ए0. शिक्षा के तकनीकी आधार (सूर्या प्रकाशन–मेरठ)।
21. सुखिया, एस0पी0 मेहरोत्रा, पी0वी0 व मेहरोत्रा, आर0एन0. शैक्षिक अनुसंधान के मूल तत्व (विनोद पुस्तक मन्दिर–आगरा)।

30

सेवारत व असेवारत महिलाओं के किशोर बालक/बालिकाओं की संवेगात्मक परिपक्पता का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ० साधना मिश्रा

दयानन्द महिला प्रशिक्षण महाविद्यालय, कानपुर

सारांश

सर्वांगीण विकास का तात्पर्य है सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास होता है जो शिक्षा के द्वारा होता है। आज की शिक्षा बाल केन्द्रित है। बालक राष्ट्र की सम्पत्ति है तथा राष्ट्र के भावी कर्णधार भी है। शासन की बागडोर इन्ही बालकों के हाथों आना है। राष्ट्र का उत्थान एवं पतन इन्हीं के हाथों है इस महत्व को ध्यान में रखकर सर्वांगीण विकास पर ध्यान दिया जाता है। मैगड़गल ने 14 मूल प्रवृत्तियाँ बतायी है तथा प्रत्येक के साथ एक संवेग का पूर्ण परिष्कृत सम्बन्ध बताया है। विकास के साथ संवेगों में परिवर्तन होता है। बाल्यावस्था को संवेगों के विकास की विशिष्ठ अवस्था कहा गया है क्योंकि इस अवस्था में जो अनुभव होते है वह किशोरावस्था के संवेगात्मक विकास की नींव डालते है।

जन्म से मृत्यु की प्रक्रिया इस संसार में अबाध गति से निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है शिशु जन्मोपरान्त अपनी माँ के आँचल की सुमधुर छत्रछात्रा में विकसित होता है। वह क्रमशः बाल्यावस्था किशोरावस्था एवं प्रौढ़ावस्था का अनुसरण करता हुआ अन्त में वृद्धावस्था में पदापर्ण करता है। इसके बाद शरीर में स्थित अद्‌भुत आत्मशक्ति इस नाशवान शरीर को त्याग देती है। इस प्रकार जीवन प्रक्रिया का अन्त हो जाता है।

प्रस्तावना

मानव–मनोशारीरिक प्राणी है अतः विचारों एवं व्यवहारों में परिवर्तन कर परिस्थितियों के साथ समायोजन करने के साथ–साथ वह विभिन्न परिस्थितियों को अपने अनुकूल निर्मित कर सकने की क्षमता अपने आप में विकसित करता है।

सर्वांगीण विकास का तात्पर्य है सम्पूर्ण व्यक्तितव का विकास होता है जो शिक्षा के द्वारा होता है। आज की शिक्षा बाल केन्द्रित है। बालक राष्ट्र की सम्पत्ति है तथा राष्ट्र के भावी कर्णधार भी है शासन की बागडोर इन्हीं बालकों के हाथों आना है राष्ट्र का उत्थान एवं पतन इन्हीं के हाथों है इस महत्व को ध्यान में रखकर सर्वांगीण विकास पर ध्यान दिया जाता है। मैगड्गल ने 14 मूल प्रवृत्तियाँ बतायी है तथा प्रत्येक के साथ एक संवेग का पूर्ण परिष्कृत सम्बन्ध बताया है। विकास के साथ संवेगों में परिवर्तन होता है। बाल्यावस्था को संवेगों के विकास की विशिष्ठ अवस्था कहा गया है क्योंकि इस अवस्था में जो अनुभव होते है वह किशोरावस्था के संवेगात्मक विकास की नीवं डालते है।

जर्सीड ने संवेगात्मक परिपक्वता की परिभाषा बताते हुये लिखा है कि संवेगात्मक परिपक्वता का तात्पर्य व्यक्ति में स्वयं सहायता करने की क्षमता स्वतन्त्रता जीवन में सुख व दुख और उनका सामना करना होता है। संवेगात्मक परिपक्वता में कई गुण होते है ये गुण सम्पूर्ण व्यक्तित्व को प्रभावित करते हैं।

पियर्स ने 1957 में माताओं के व्यवहारों के अध्ययन में यह निष्कर्ष निकाला कि माताओं के व्यवहार का बालक के स्वभाव पर प्रभाव पड़ता है।

बेससटेंस ने 1960 में अपने अनुसंधान में यह सिद्ध कर दिया कि बालकों के विकास एवं व्यक्तित्व निर्माण के सम्बन्ध में माँ की भूमिका महत्वपूर्ण होती है।

1972 में मटटू ने अध्ययन द्वारा बताया कि औसत बुद्धि के किशोर लड़के, लड़कियों की अपेक्षा अधिक संवेगात्मक समायोजन रखते है। मध्यम सामाजिक आर्थिक स्तर के किशोर वर्ग के बच्चे उच्च वर्ग के किशोरों की अपेक्षा कम अच्छा समायोजन रखते है।

1985 में रंजना चौधरी ने एक अध्ययन में बताया कि अति आत्मविश्वासी व अल्प आत्माविश्वासी किशोरों की संवेगात्मक स्थिरता में सार्थक अन्तर था संवेगात्मक परिपक्वता पर बुद्धि, सामाजिक, आर्थिक स्तर का भी प्रभाव पड़ता है।

वैसे बालक पर माता–पिता दोनों का प्रभाव पड़ता है परन्तु बालक सबसे पहले माँ के सम्पर्क में आता है माँ का योगदान बालक के व्यक्तित्व के कई अध्ययनों को स्वीकार करता है। आज स्त्री राष्ट्र व मानव जीवन की समस्याओं के परिणाम स्वरूप पुरूषों का सहयोग कर रही है यह बात विचार योग्य है कि स्त्री यह दोहरी भूमिका कैसे निभा रही है। इस दोहरी भूमिका में वह बच्चों पर ध्यान दे पा रही है या नही, क्योंकि इससे बच्चों का व्यक्तित्व प्रभावित हो रहा है।

जेनको और माइकल ने अपने अध्ययन में बताया कि सेवारत महिलाओं के बच्चे पढ़ाई में अच्छे अंक प्राप्त करते है।

अपने यहाँ की वर्तमान परिस्थिति को देखते हुए यह आवश्यक हो जाता है कि इस बात का ज्ञान होना आवश्यक है कि महिलाओं का सेवारत होना उनके दृष्टिकोण को परिवार व समाज को किस सीमा तक प्रभावित करता। शैक्षिक, आर्थिक तथा सामाजिक परिस्थितियों में परिवर्तन के कारण स्त्री घर से बाहर जाती है उसका सेवारत होना उसके बच्चों को प्रभावित करता है या नही।

उपर्युक्त अध्ययनों का विवेचन करने पर ज्ञात होता है कि माता का सेवारत व असेवारत होना बालक के व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षों को प्रभावित करता है। इसलिए इस अध्ययन में सेवारत व असेवारत महिलाओं की सन्तानों के संवेगात्मक परिपक्वता का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है।

उद्देश्य

1. सेवारत महिलाओं के बालक/बालिकाओं की संवेगात्मक परिपक्वता का तुलनात्मक अध्ययन।
2. असेवारत महिलाओं के बालक/बालिकाओं की संवेगात्मक परिपक्वता का तुलनात्मक अध्ययन।
3. सेवारत व असेवारत के बालक/बालिकाओं की संवेगात्मक परिपक्वता का तुलनात्मक अध्ययन।

परिसीमायें

1. इस समस्या में कानपुर शहरी की 100 सेवारत व असेवारत महिलाओं को अध्ययन के लिये चुना गया।
2. इस समस्या में कक्षा 9 से 12 तक के बालक तथा बालिकाओं पर अध्ययन किया गया।

न्यादर्श

इस समस्या में सविचार न्यादर्श का प्रयोग किया गया है इसमें चार विद्यालय लिये गये हैः–

1. सेवारत महिलाओं की 25 किशोर बालिकायें।
2. सेवारत महिलाओं के 25 किशोर बालक।
3. असेवारत महिलाओं की 25 किशोर बालिकायें।
4. असेवारत महिलाओं के 25 किशोर बालक।

प्रयुक्त उपकरण

प्रस्तुत समस्या में प्रश्नावली का प्रयोग किया गया है इसमें संवेगात्मक परिपक्वता के लिये यशवीर सिंह द्वारा निर्मित प्रश्नों को 5 वर्गों में विभाजित किया गया है।

1. संवेगात्मक अस्थिरता 10
2. संवेगात्मक दमन 10
3. सामाजिक कुसमायोजन 10
4. व्यक्तित्व विघटन 10
5. नेतृत्व हीनता 08

सारणी सं0–1– परिणाम एवं विश्लेशण

सेवारत महिलाओं के किशोर बालक/बालिकाओं की संवेगात्मक परिपक्वता

	न्यादर्श (N)	मध्यमान (M)	प्रमाणिक विचलन (S.D)	क्रान्तिक निष्पत्ति (C.R)
बालिकायें	25	103.7	18.08	3.5102
बालक	25	87.3	14.8	

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

निष्कर्ष

उपर्युक्त सारणी में सेवारत महिलाओं के 50 किशोर बालक व बालिकाओं की संवेगात्मक परिपक्वता का मध्यमान क्रमशः 103.7 व 87.3 है तथा प्रमाणिक विचलन क्रमशः 18.08 व 14.8 है तथा दोनों के बीच की क्रान्तिक निष्पत्ति 0.05 स्तर पर 3.5102 है जो कि उत्तरपुस्तिका के अनुसार दोनों में सार्थक अन्तर को प्रदर्शित करती है अतः हमारी प्रथम परिकल्पना की सेवारत महिलाओं के किशोर बालक/बालिकाओं में संवेगात्मक परिपक्वता के अन्तर को स्पष्ट करती है जो अस्वीकृत होती है।

परिणामों से स्पष्ट होता है कि सेवारत महिलाओं के बालकों की संवेगात्मक परिपक्वता की अपेक्षा अच्छी है। संवेगात्मक परिपक्वता सामाजिक समायोजन का परिचायक है। परिपक्वता अधिक होने पर समायोजन अधिक अच्छा होता है। सेवारत महिलाओं के बालकों/बालिकाओं की अपेक्षा बाहर पर्याप्त अवसर मिलते है जिससे सामाजिक सुसमायोजन अच्छी तरह से होता है और बालिकायें घर में ज्यादा समय बिताती है इसलिये बाहरी वातावरण में कम समायोजन हो पाता है।

सारणी सं0– 2

असेवारत महिलाओं के किशोर बालक/बालिकाओं की संवेगात्मक परिपक्वता का तुलनात्मक अध्ययन

	न्यादर्श (N)	मध्यमान (M)	प्रमाणिक विचलन (S.D)	क्रान्तिक निष्पत्ति (C.R)
बालिकायें	25	106.5	15.2	3.16
बालक	25	120.5	16.1	

निष्कर्ष

उपर्युक्त सारणी में असेवारत महिलाओं के 25 किशोर बालकों की संवेगात्मक परिपक्वता का मध्यमान 106.5 व 120.5 है तथा प्रमाणिक विचलन 15.2 व 16.1 है तथा क्रान्तिक निष्पत्ति 3.16 है जो दोनों के बीच सार्थक अन्तर स्पष्ट करता है। अतः हमारी दूसरी शून्य परिकल्पना असेवारत महिलाओं के किशोर बालक/बालिकाओं की संवेगात्मक परिपक्वता में नही है अस्वीकृत होती है अतः बालक/बालिकाओं की संवेगात्मक परिपक्वता में अन्तर है।

परिणामों से स्पष्ट होता है कि असेवारत महिलाओं के बालकों को संवेगात्मक परिपक्वता बालिकाओं की तुलना में कम अच्छी है क्योंकि असेवारत महिलायें घर में अधिक समय व्यतीत करती है। बालिकायें एक सीमित समय के लिये बाहर रहती है और अधिकांश समय घर पर ही रहता है अतः माता–पिता व वरिष्ठ सदस्यों की शिक्षा–दीक्षा एवं संवेगात्मक परिपक्वता का स्तर सुधर जाता है। बालक प्रायः बाहर जाते है मित्रों एवं समवयस्कों के साथ पर्याप्त समय व्यतीत करते है इससे सामाजिक समायोजन तथा संवेगात्मक परिपक्वता में पिछड़ जाते है।

सारणी सं0– 3

सेवारत महिलाओं के बालक/बालिकाओं तथा असेवारत महिलाओं के बालक/बालिकाओं की संवेगात्मक परिपक्वता का तुलनात्मक अध्ययन

	न्यादर्श (N)	मध्यमान (M)	प्रमाणिक विचलन (S.D)	क्रान्ति निष्पत्ति (C.R)
सेवारत महिलाओं के बालक/बालिकाओं	50	104.5	19.0	2.34
असेवारत महिलाओं के बालक/बालिकाओं	50	113.5	19.00	

निष्कर्ष

उपर्युक्त सारणी में सेवारत महिलाओं के 50 किशोर बालक/बालिकाओं को न्यादर्श के रूप में लिया गया है। सेवारत महिलाओं के बालक/बालिकाओं का मध्यमान 104.5 तथा असेवारत महिलाओं के बालक/बालिकाओं का मध्यमान 113.5 है तथा प्रमाणिक विचलन 19.0 व 19.5 है तथा दोनों के बीच क्रान्तिक निष्पत्ति 2.34 है अतः 0.05 स्तर पर सार्थक अन्तर है अतः दोनों समूहों के बीच अन्तर है क्योंकि दोनों के समूहों में अन्तर है। सेवारत महिलाओं के बालक/बालिकाओं की संवेगात्मक परिपक्वता में और असेवारत महिलाओं के बालक/बालिकाओं की संवेगात्मक परिपक्वता में संवेगात्मक परिपक्वता में अन्तर स्पष्ट दिखाई देता है। सारणी नं0 3 के परिणाम के अनुसार असेवारत महिलाओं के बालक/बालिकाओं की अपेक्षा सेवारत महिलाओं के बालक/बालिकाओं की संवेगात्मक परिपक्वता अच्छी है। पिता के साथ सेवारत महिलायें घर के बाहर रहती है जिसके कारण बालक/बालिकाओं को स्वयं प्रत्येक स्थिति को समझने के लिये नेतृत्व करने की क्षमता रखते है जबकि असेवारत महिलाओं के बच्चे माँ पर निर्भर होते है। अतः संवेगात्मक परिपक्वता तथा नेतृत्व की क्षमता का गुण कम पाया जाता है।

सुझाव

इस शोध–परिणाम के पश्चात् यह निष्कर्ष निकलता है कि सेवारत महिलाओं के बच्चों एवं असेवारत महिलाओं के बच्चों में संवेगात्मक भिन्नता पायी गई। जहाँ एक तरफ सेवारत महिलाओं के बच्चे संवेगात्मक रुप से असेवारत महिलाओं के बच्चों से ज्यादा मजबूत है एवं परिपक्व है। अतः यह सुझाव है कि आने वाले समय में हम निम्न बिन्दुओं पर शोधकार्य कर सकते हैं –

(1) सरकारी, गैर सरकारी स्कूल के शिक्षकों के बच्चों के मध्य संवेगों की अध्ययन।

(2) माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा के शिक्षकों के बच्चों के मध्य संवेगों का अध्ययन।

संदर्भ

1. दत्त, ओझा शंकर., मेहता, टी0एस0. (1927). जनसंख्या शिक्षा– सिद्धांत एवं तत्व जनसंख्या केन्द्र. उत्तर प्रदेश लखनऊ।
2. कपिता, एच0के0. (1992). अनुसंधान विधियाँ. विनोद पुस्तक मन्दिरः आगरा।
3. गुप्ता, एस0पी0. भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास व समस्यायें. शारदा पुस्तक भवनः इलाहाबाद।
4. गैरेट, एच0ई0. शिक्षा और मनोविज्ञान में सांख्यिकी का प्रयोग।
5. राय, पारसनाथ. अनुसंधान परिचय. लक्ष्मी नारायन अग्रवालः आगरा।
6. राव, डी0 गोपाल. पापुलेशन एजुकेशन।
7. शर्मा, अशोक कुमार. (1993). उत्तर प्रदेश क्विज बुक पुस्तक महलः दिल्ली. जून।
8. ओबराय. इसेसियल्य ऑफ कम्प्यूटर।
9. बाजपेयी, एस0आर0. सामाजिक अनुसंधार तथा सर्वेक्षण. किताब घरः कानपुर।
10. बुच. एम0पी0. ए0 सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजूकेशन।
11. गैरेट, एच0ई0. शिक्षा और मनोविज्ञान में सांख्यिकी का प्रयोग. वाकिल्स. फेफर एण्ड साइमन्स लिमिटेडः बम्बई।
12. जग्गी, वी0पी0. इन्ट्रोडक्ट्री कम्प्यूटर साइंस. एकैडिमिक इण्डिया पब्लिशर्सः नई दिल्ली।
13. जैन, वी0के0. कम्प्यूटर फार बिगनर्स. पुस्तक महलः नई दिल्ली।
14. कपिल एण्ड कं0. अनुसंधान विधियाँ. हर प्रसाद भार्गवः आगरा।
15. पत्रिका, (अ) विज्ञान प्रगति, मई, 1997.
    (ब) एक बुक ऑफ कम्प्यूटर (एस.पी. कुरक्षेत्र)।
16. शर्मा, आर0एन0. शिक्षा अनुसंधान।
17. शर्मा, एम0सी0. कम्प्यूटर परिमाप. बी.पी.बी. पब्लिकेशन्सः नई दिल्ली।
18. वर्मा, प्रीति. एवं अन्य. मनोविज्ञान एवं शिक्षा में सांख्यिकी।

31

धर्म और पर्यावरण का संबंध

डॉ० रवि कुमार
मुरादाबाद
ईमेलः *drravi.kumar11223@gmail.com*

सारांश

भारतीय धर्म एवं संस्कृति में प्रकृति एवं पर्यावरण को पूजनीय माना गया है। भारतीय संस्कृति में तुलसी की पूजा और पीपल हमें अनेकों रोगों से लड़ने की क्षमता प्रदान करती है। कोविड–19 के दौरान हमने तुलसी और पीपल की सार्थकता को जाना इसके साथ–साथ हमारा कोई भी अनुष्ठान बिना लौंग, इलायची, जयाफल आदि के पूर्ण नहीं होता है। यह सभी औषधि के रुप में हमारी रसोई में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। केले और नारियल की पूजा भी इसी का प्रमाण हैं। केले में जहाँ भरपूर लोहा व ऊर्जा प्राप्त होती है। वह अतिसार का भी रामबाण इलाज करता है। नारियल का पानी हमें तुरन्त ऊर्जा और प्लेट्स बढ़ाने के लिये कारगर साबित होता है। उपर्युक्त तथ्य मात्र सामान्य जन्म के द्वारा प्रयोग किये जाने वाले हैं अगर हम सही से दृष्टि डाले तो हमारे आस–पास जो प्राकृतिक वातावरण है वो हमारी मानसिक व शारिरीक शक्ति को मजबूती प्रदान करता है इसलिए धर्म और वातावरण का अटूट सम्बन्ध ा हैं। विद्ववानों के अनुसार भगवान शब्द का अर्थ भ–भूमि, ग–गगन, व–वायु, अ–अग्नि, न–नीर बताया है। अर्थात् हम प्रकृति द्वारा प्रदत्त शक्तियों के बिना जीवन यापन नहीं कर सकते इसलिए भारतीय संस्कृति में इनकों बचाने के लिये हमारे पूर्वजों ने धर्म से जोड़ दिया। धर्म से जोड़ने के कारण ही वर्तमान में हम पीपल और तुलसी जैसे अनेकों पेड़–पौधों का लाभ ले रहे हैं।

पर्यावरण शब्द दो शब्दों 'परि' व 'आवरण' से मिल कर बना है जिसका अर्थ 'परि'–चारों ओर 'आवरण' 'घेरा' अर्थात 'हमें चारों ओर से घेरने वाला' ही पर्यावरण है। विश्व के आधुनिकीकरण के साथ ही पर्यावरण को हो रहा नुक्सान एक नई समस्या के रूप में उभर कर सामने आया है। भारत एक धर्मनिरपेक्ष देश है जहां विभिन्न धर्मों के लोग एक साथ रहते हैं। भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता इस तथ्य का प्रमाण है कि भारत में सर्वधर्म समभाव को सदैव आदर की दृष्टि से देखा गया है। समस्त धर्मों का मानव जाति के लिए एकमात्र शाश्वत सत्य एवं संदेश है 'जीओ और जीने दो'। यह संबंध न केवल मानव समुदाय से, बल्कि प्रत्येक चर, अचर, जीव, जड़ प्रकृति एवं पर्यावरण से भी संबंधित है। धर्म एवं पर्यावरण का गहरा संबंध है। विश्व के सभी धर्मों में निरर्थक जीव हत्या को निशेध माना गया है। हिन्दू, ईसाई, मुस्लिम, जैन एवं बौद्ध धर्म सभी में धर्मावलंबियों ने प्रकृति को पुष्पित, पल्लवित एवं प्रफुल्लित रूप में देखने का प्रयास किया है।

हिन्दू धर्म

हिन्दू धर्म में प्रकृति को देवी के रूप में प्रतिष्ठापित किया गया है। वेदांत दर्शन में कहा गया है कि आप शांति, वायु शांति, अग्नि शांति, पृथ्वी शांतिरू सर्वांग शांति अर्थात प्रकृति के सभी उपादानों की उपासना सर्वत्र शांति के लिए की गई है। इस प्रकार कहा गया है कि यदि प्रकृति का अत्यधिक दोहन या शोषण होता है तो पर्यावरण दूषित होता है तथा पर्यावरण के प्रदूशित होने से मनुष्य मात्र का भी जीवन संकट में पड़ सकता है। हमारे पौराणिक शास्त्रों यथा वेद, उपनिषद, पुराण आदि में अग्नि, जल, वायु, भूमि आदि की पूजा एवं उपयोगिता का प्रावधान रखा गया है। इसके अतिरिक्त पीपल, तुलसी आदि के पेड़–पौधों को देवतुल्य समझ कर उनकी आराधना एवं पूजा का विधान रखा गया। अग्नि, जल वायु पृथ्वी को अर्ध्य देने से तथा यज्ञों के माध्यम से आहूति देने पर इंद्रदेव प्रसन्न होकर वर्षा करते हैं, ऐसी मान्यता हिन्दू धर्म की मानी गई है, जो किसी न किसी रूप में वातावरण को शुद्ध करने से जुड़ी हुई थी।

इस्लाम

इस्लाम में भी प्रकृति को संजोने, संवारने के कृत्य को प्रत्येक मुस्लिम का कर्त्तव्य माना गया है। इस्लाम में भी जीव हत्या को निषेध तथा पेड़–पौधों की रक्षा करने की हिदायत दी गई है। कुरान में अनेक स्थानों पर ऐसे संकेत मिलते हैं कि ईश्वर/अल्लाह एवं जीवों के बीच प्रेम का अटूट संबंध है। कुरान यह भी मानता है कि खुदा, आकाश पर रहता है तथा वहां होने वाले किसी भी नुक्सान से उसे चोट पहुंचती है तथा इससे होने वाले हानिकारक प्रभावों से खुदा के बंदों को भी पर्यावरणीय प्रदूषण भोगना पड़ता है। इस्लाम धर्म के अनुयायी भारतीय बादशाहों ने भी अपने घरों में तुलसी को आदरभाव से रखा। हजरत मोहम्मद साहब स्वयं खजूर के पेड़ के निकट बैठकर अपने अनुयायियों को शिक्षा प्रदान किया करते थे। अकबर बादशाह तो होम, यज्ञ, वेद, सूर्य प्रणाम एवं तुलसी तथा पीपल पूजा में विश्वास करता था। इसी प्रकार शाहजहां ने मोर का शिकार करने वाले अफसरों के हाथ कटवा दिए थे।

ईसाई धर्म

ईसाई धर्म भी सदा अङ्क्षहसा का पक्षधर रहा है। ईसा मसीह स्वयं जीवों पर दया, अङ्क्षहसा, करुणा एवं मैत्री में विश्वास करते थे। ईसा मसीह भौतिकवादी व्यवस्था के विपरीत थे। उनके अनुसार मानव के स्वार्थ एवं दूषित विचारों एवं आविष्कारों से वातावरण प्रदूषित हो जाता है। मानव मात्र से प्रेम करना, जीवों पर दया करना, प्रकृति को पूजनीय मानना एवं ङ्क्षहसा से दूर रहना ही ईसाई धर्म के प्रमुख सिद्धांत हैं।

जैन धर्म

जैन धर्म में प्रत्येक व्यक्ति को पंचव्रतों को पूर्ण करना पड़ता है, ये हैं–सत्य, अङ्क्षहसा, अस्तेय, ब्रह्मचर्य एवं अपरिग्रह। जैन धर्म का प्रत्येक अनुयायी वनों के प्रति संवेदनशील होता है। जैन धर्म के प्रायरू सभी धर्म गुरुओं ने वनों में तपस्या की थी तथा पेड़–पौधों एवं प्रकृति को संरक्षित रखने तथा पर्यावरण के शुद्धिकरण में विश्वास व्यक्त किया था।

बौद्ध धर्म

बौद्ध धर्म के प्रवर्तक भगवान बुद्ध को बड़ वृक्ष के नीचे ही ज्ञान प्राप्त हुआ था।

सिक्ख

सिक्ख धर्म के अनुसार, संसार में स्थित सभी वस्तुएँ ईश्वर की इच्छा के अनुरूप ही कार्य करती हैं तथा ईश्वर उनकी रक्षा करता है। सिक्ख धर्म की शिक्षा दिखावे के लिये किये गए व्यय का निशेध करती है। सिक्ख धर्म के पवित्र ग्रंथ 'गुरु ग्रंथ साहिब' के अनुसार, सभी जीव–जंतु, वृक्ष, नदी, पर्वत, समुद्र आदि को ईश्वर का रूप माना गया है।

यहूदी

हिब्रू बाइबिल तोराह में प्रकृति के संरक्षण के लिये अनेक नैतिक बाध्यताएँ दी गई हैं। तोराह के अनुसार, "जब ईश्वर ने आदम को बनाया, उसने उसे स्वर्ग के बगीचे दिखाए और कहा मेरे कार्यों को देखो, कितना सुंदर है ये? मैंने जो भी बनाया है वह सब तुम्हारे लिये है। तुम्हें इसकी रक्षा करनी है और यदि तुमने इसे नष्ट किया तो तुम्हारे बाद इसे ठीक करने वाला कोई नहीं होगा।" इस प्रकार यहूदी धर्म में भी पर्यावरण संरक्षण को विशेश महत्त्व दिया गया है।

बिश्नोई समाज

राजस्थान में बिश्नोई समाज में प्रकृति प्रेम का अनूठा उदाहरण मिलता है। खेजड़ी वृक्ष की रक्षा के लिए खेजडली गांव में 363 बिश्नोईयों द्वारा अपने प्राणों का त्याग करने की घटना अन्यत्र नहीं मिलती है। बिश्नोई समाज भारतीय संस्कृति एवं परम्पराओं का जीवंत संवाहक है जिसमें पेड़ न काटने, जानवरों की एवं पक्षियों की रक्षा करने तथा प्राणी मात्र की रक्षा करने का संकल्प लिया जाता है। बिश्नोई धर्म के धर्मगुरु जम्भेश्वरजी ने अपने 21 नियमों (20+1) में प्रकृति को संरक्षित करने का अनूठा प्रयास किया। उपनिषदों में पृथ्वी को परमात्मा का शरीर, स्वर्ग को मस्तिष्क, सूर्य एवं चंद्रमा को आंखें तथा आकाश को मन माना है। पेड़–पौधे काटने तथा जल स्रोतों को प्रदूषित करने से परमात्मा को चोट पहुंचती है।

पर्यावरण संरक्षण हेतु धार्मिक संस्थाओं द्वारा प्रयास

ऊपर दिये गए बिंदुओं से यह पता चलता है कि विश्व के सभी धर्मों में पर्यावरण को संरक्षित करने की बात कही गई है। प्रकृति के संरक्षण के लिये विभिन्न धार्मिक समूहों द्वारा वैश्विक या स्थानीय स्तर पर कई प्रयास किये जा रहे हैं। पाकिस्तान में स्थित कब्रगाहों में प्राचीन वृक्षों की प्रजातियाँ पाई जाती हैं क्योंकि इनको काटना गुनाह माना जाता है, लेबनान के मैरोनाईट चर्च ने हरीसा के जंगलों को पिछले 1,000 वर्षों से संरक्षित रखा है, थाईलैंड के बौद्ध भिक्षुओं ने संकटग्रस्त जंगलों की रक्षा हेतु वहाँ छोटे–छोटे विहारों की स्थापना की है तथा उसे को पवित्र जंगल घोषित किया गया है। इसके अलावा जर्मनी के 300 चर्चों ने स्थानीय समुदायों के सहयोग से सौर ऊर्जा प्रणाली अपनाई है तथा वृहत स्तर पर इसका लगातार प्रचार–प्रसार किया जा रहा है। अमेरिका में रहने वाले अफ्रीकी मूल के लोगों द्वारा क्वान्ज़ा त्यौहार प्रकृति संरक्षण का एक उपयुक्त उदाहरण है। वर्ष 1986 में इटली के शहर असीसी में विश्व वन्यजीव कोश द्वारा 'असीसी घोषणा' का आयोजन किया गया। इसमें विश्व के पाँच

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

प्रमुख धर्मों (इसाई, हिंदू, इस्लाम, बौद्ध तथा यहूदी) के प्रतिनिधियों को आमंत्रित किया गया था ताकि वे इस मुद्दे पर सुझाव प्रस्तुत कर सकें कि उनके धर्मों में प्रकृति संरक्षण हेतु क्या प्रावधान है तथा किस प्रकार वे योगदान कर सकते हैं। WWF तथा ARC के सहयोग से 'लिविंग प्लैनेट कैंपेन' नामक एक मुहिम शुरू की गई। इसके तहत विश्व के प्रमुख धर्मों ने पर्यावरण संरक्षण हेतु कार्य करने की प्रतिबद्धता प्रदर्शित की तथा उनकी इस प्रतिबद्धता को 'जीवंत पृथ्वी के लिये पवित्र उपहार' का नाम दिया गया। इस अभियान के तहत वकालत, शिक्षा, स्वास्थ्य, भूमि, संपत्ति, जीवनशैली तथा मीडिया के क्षेत्र में पर्यावरण संरक्षण को प्रोत्साहित करना शामिल है। इस प्रतिबद्धता के तहत जैन धर्म ने अंतर्राष्ट्रीय जैन व्यापार पुरस्कार प्रारंभ किया है। इसके तहत उन कंपनियों को पुरुस्कृत किया जाता है जिन्होंने पर्यावरणीय प्रभावों को कम करते हुए प्रगति की है। इसी प्रकार स्वीडन के लूथरन चर्च के सहयोग से स्वीडन में नेशनल फॉरेस्ट स्टेवर्डशिप काउंसिल की स्थापना की गई। इसी तरह विभिन्न स्तर पर सभी धर्मों के सहयोग से पर्यावरण संरक्षण के लिये अनेक कार्य किये जा रहे हैं।

32

भारत–रोम व्यापार का सांस्कृतिक प्रभाव (अमरावती की बौद्ध कला के विशेष सन्दर्भ में)

डॉ० अरविन्द कुमार राय
असिस्टेंट प्रोफेसर, प्रा०इ०,सं० एवं पुरातत्व विभाग
ना०पी०जी० कॉलेज, जंघई, जौनपुर, उत्तर प्रदेश
ईमेलः *drarvindrai1@gmail.com*

सारांश

अमरेश्वर शिव के नाम पर बसी अमरावती प्राचीन धान्यकटक का नया नाम है। प्रस्तुत स्थल आन्ध्रप्रदेश के गुण्टूर जिला मुख्यालय से 21 मील की दूरी पर कृष्णा नदी के दाहिने तट पर स्थित है। इससे आधे मील की दूर पर, पश्चिम की ओर 'धरणिकोट' नामक वह स्थल है, जिसे 'धान्यकटंक' के नाम से सातवाहन नरेशों की राजधानी होने का सुयोग मिला था। इसके साथ ही यह स्थल अधीतकलीन बौद्ध महास्तूप के लिए भी प्रख्यात थी, किन्तु अद्यतन प्रायः अपने मूल स्थान पर अब कुछ भी शेष नहीं है।

काल के गर्त में डूबे अमरावती की कलानिधि को प्रकाश में लाने का श्रेय कर्नल मेकेंजी को है, जिन्होंने 1997 ई० में इस स्तूप के ध्वंशावशेषों को देखा था। विभिन्न कालों एवं अलग–अलग गवेशकों द्वारा किये गये सर्वेक्षण एवं समुत्खनन के फलस्वरूप यहाँ से बहुसंख्यक कला निधियाँ प्रकाश में आयीं। अद्यतन ये निधियाँ संसार के विभिन्न संग्राहलयों में सुरक्षित है।

जहाँ तक अमरावती स्तूप के तिथि का प्रश्न है, विषय सम्बन्धी अभिलेखों की अमरावती में विद्यमानता तथा भरहुत कला से यहाँ की आरम्भिक कृतियों की सादृश्यता के आधार पर अमरावती कला की प्राचीनता दूसरी शताब्दी ई०पू० मानना समीचीन प्रतीत होता है। विभिन्न राजाओं, व्यक्तियों तथा शिल्पियों के प्रभूतदान एवं सहयोग से निर्मित अमरावती का यह प्रसिद्ध स्तूप तेरहवीं शताब्दी तक सुरक्षित था, प्रस्तुत स्थिति की संज्ञापना अमरेश्वर मन्दिर स्तम्भ पर उट्टंकित 1182 तथा 1234 ई० के अभिलेखों से होती है। विभिन्न कलाकृतियों एवं उन पर उट्टंकित अभिलेखों के लिपि शास्त्रीय विवेचन, विषयवस्तु और मूर्ति शिल्प के विश्लेषण के उपरान्त विद्वानों ने यहाँ लगभग पाँच शताब्दियों तक चले सक्रिय निर्माण कार्य पर प्रकाश डालने का प्रयास किया है। सी० शिवराममूर्ति ने अपरातवी की कला के चार युग भेद स्वीकार किए है–

1. *प्रथम युग – (200 ई० पू०–100 ई०पू०)*
2. *द्वितीय युग – (100 ई०पू० – 100 ई०)*
3. *तृतीय युग – (100 ई०–150 ई०*
4. *चतुर्थ युग – (200 ई० – 250 ई०)*

मुख्य बिन्दु

धान्यकटक, श्रेणी, आवेशनीनो, पारदर्शी, संघाटी, अवगुठंन, स्टेला, मलमल, अभिजात्य, जेतवन, शवथी, गवाक्ष, टेर।

प्रस्तावना

अमरावती के इस महास्तूप के रूप सम्बर्द्धन मे राजवर्ग से लेकर सामान्य वर्ग तक के व्यक्तियों ने अपना सहयोग प्रदान किया था। यहाँ से समुपलब्ध अभिलेखों के अन्तः साक्ष्यों के परिशीलन से सुव्यक्त हो जाता है कि अमरावती कला के उन्नयन में

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

शिल्प श्रेणियों एवं व्यापारियों का अत्यधिक योगदान था। द्वितीय शताब्दी ई०पू० के 'आवेशनीनों' नामक दो अभिलेख तथा शिल्पियों के चिन्हों से युक्त अनेक अभिलेखों से अभिज्ञात होता है कि उक्त श्रेणियाँ यहाँ कार्य कर रही थीं। इन अभिलेखिक साक्ष्यों के आधार पर हमें यह कहने में कोई कठिनाई नहीं है कि कृष्णा धाटी की इस स्तूप के कलात्मक उन्नयन में एक नगरीय अर्थव्यवस्था का योगदान था, जो व्यापार और शिल्प पर निर्भर कती थी।

इस कला के प्रेरक तत्वों में उस समुदाय विशेष द्वारा दिये गये दान के अतिरिक्त रोम के व्यापार का व्यापक प्रभाव, विशेष तथा ''तृतीय एवं चतुर्थ युग'' की कला में परिलक्षित होता है। यह वही समय था, जब सातवाहनों की साम्राज्य लक्ष्मी सौन्दर्य, सम्पत्ति और यश के परमोच्च शिखर पर विराजमान थी। साम्राज्य का वैभव पूर्वी और पश्चिमी समुद्र के बीच व्याप्त था। इस समय (द्वितीय, तृतीय शताब्दी ई०) दक्षिण पूर्वी तटीय प्रदेशों से रोम के साथ प्रगाढ़ व्यापारिक सम्बन्ध था।

भारत के वस्त्र विशेषयता सूती वस्त्र 'मलमल', प्रसाधन सामग्री, आभूषण आदि रोम के बाजारों में बिका करते थे और इन वस्तुओं के बदले अपार स्वर्ण भारत आ रहा था। यूनानी लेखक प्लीनी लिखता है कि रोम के निवासी भारतीय सामानों को बहुत अधिकत चाहते थे, शायद ही कोई ऐसा वर्ष हो जब भारतीय व्यापारी रोम से कम से कम साढ़े पाँच करोड़े न प्राप्त करते हो।

'पेरिप्ल्स' ने ऐसे अनेक बन्दरगाहों का उल्लेख किया है, जिनसे भारतीय व्यापार हो रहा था। इनमें से कुछ बन्दरगाहों का पुरातात्विक उत्खनन हुआ है। इनमें अरिकामेडु के बारे में विस्तृत जानकारी मिली है। 1945 ई० के उत्खनन से यहाँ एक ऐसे विशाल रोमन बस्ती का पता चला है, जो एक व्यापारिक केन्द्र थी, और जिसके निकट एक बन्दरगाह था। सम्भवतः यहाँ रोम–निवासियों की रूचि तथा उनके द्वारा दिये गये नमूनों के अनुसार, निर्माण होता था तथा पुनः उन्हें रोम भेजा जाता था। रोमन मिट्टी के बर्तनो, माला के दानों, काँच तथा पकी हुई मिट्टी की मूर्तियों के अवशेष देखने से प्रतीत होता है कि रोम–निवासी अरिकामेडु का उपयोग पहली शताब्दी ई०पू० से ईसा के दूसरी शताब्दी के प्रारम्भ तक करते रहे थे।

दक्षिण से प्राप्त होन वाले बहुसंख्यक रोमन सिक्के इस तथ्य के सक्षम साक्षी है कि व्यापक पैमाने पर रोम के साथ भारत का व्यापार चल रहा था, जिसमें भारत का पलड़ा भारी था। अतः यदि प्लिनी ने यह शिकायत की थी कि भारतीय व्यापारी रोम की राष्ट्रीय आय का एक बहुत बड़ा भाग हथिया लेते हैं, तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं। अन्ततः भारतीय सौख्य की वस्तुओं की लोलुपता एवं व्यापक मांग के कारण जो धन रोम अपव्य कर रहा था 'निरो' को इसे रोकने के लिए भारतीय वस्तुओं पर प्रतिबन्ध लगाना पड़ा, किन्तु यह प्रतिबन्ध सिर्फ जन सामान्य के लिए था, उच्च वर्ग के लोग अभी भी भारतीय वस्तुओं का निर्वाध प्रयोग कर रहे थे।

निश्चय ही रोम के साथ इस अनुकूल व्यापार का लाभ भारत ने उठाया। अधिक समृद्धि के इस नये स्रोत का पूर्ण उपयोग धार्मिक संस्थाओं को दिये गये अनगिनत दानों, राजाओं द्वारा सम्पादित अश्वमेघ जैसे खर्चीले यज्ञों तथा सर्वाधिक रूप से औद्योगिक एवं व्यापारिक श्रेणियों के फैले हुये तन्त्र के रूप में हुआ। सारे भारत में वणिक समुदाय समृद्ध हुआ। अस्तु वैभव और अभिजात्य संस्कृति का प्रभाव कला पर पड़ना स्वाभाविक था।

स्तूपों के अलंकरण में शिल्पियों द्वारा दिया गया दान अनतः महत्वपूर्ण रहा है। यहाँ तक की सॉची के उत्तरी तोरण द्वारा यह सातवाहन नरेश के शिल्पी प्रमुख आन्न्द का दिया गया दान तथा विदिशा के हाथी दाँत के शिल्पकारों का उल्लेख प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त अमरावती के अभिलेखों में प्राप्त होने वाले अभारतीय नाम, टेर से प्राप्त होने वाली हॉथी दाँत की प्रतिमा के आधार यह सुझााव रखा गया है कि यहाँ पर विदेशी शिल्पियों का कोई उपनिवेश था। यवन शिल्पियों का यहाँ निवास यह सिद्ध करता है कि नगरीय जीवन का यहाँ वर्चस्व रहा होगा। जिसका प्रभाव यहाँ की कला पर दिखाई देना तो अपरिहार्य ही था। इस युग की कला विशेषतः अमरावती की 'तृतीय–चतुर्थ युग' की कला एक नवीन आयाम प्रस्तुत करती है, जो निश्चय ही उथल–पुथल वाले सामाजिक जीवन की ओर संकते करती है। यहाँ भावबोध एवं अंग विन्यास की दृष्टि से एक विदेशी मूल्य से प्रभावित समाज का दृश्य प्राप्त होता है।

यूँ तो विदेशी नागरिकों की उपस्थिति का मान साँची की कला से ही प्राप्त होने लगते हैं, तथापित अमरावती और नागार्जुनकोण्डा की कला में इनकी उपस्थित के कारण यदि स्थापत्य पर अन्तर आया तो वह कला पर दृष्टिगत नहीं होता तथापि इसके कारण जो सामाजिक जीवन प्रभावित हुआ यहाँ की कला में नितान्त स्पष्ट है। इस युग (विशेषता चतुर्थ युग– 200ई०–250ई०) की कला को विद्वानों ने अपने पूर्ववर्ती युग की अपेक्षा उतार के लक्षण के रूप में व्याख्यायित किया है, जिसमें अब पहले जैसी गतिशीता न थी। इस काल की कला में सॉची की शारीरिक गुरूता के स्थान पर क्षीणकाया की अभिव्यंजना दिखाई देने लगती है। वस्त्रों के प्रदर्शन में भी यहाँ के कलाकार ने पारदर्शी संघाटी के प्रदर्शन में विशेष रूचि दिखाया है, और उन पर मोतियों के हार एवं झुग्गों की बहुलता दिखाई देने लगती है। यहाँ सटे मकर मुखों से निस्सृत मोतीयों के गुच्छों की अनुकृति इस काल की अमरावती कला भी नीजी देन है।

विद्वानों ने इस चतुर्थ युग की कला में उतार के लक्षण भले ही देखा हो, किन्तु जैसा कि डा० अनामिका राय का विचार है, कि कला का यह तृतीय तथा चतुर्थ युग पूर्णतया एक नगरीय जीवन को दर्शाता है। विशेष रूप से चतुर्थ स्तर, जहाँ रोम के व्यापार का पूरा प्रभाव दिखाई देता है। बुद्ध के चचेरे भाई नन्द की पत्नी सुन्दरी अनेकशः विदेशी केश विन्यास में दिखाई देती है। आलोचित

प्रसंग में वह स्थल विशेष महत्वशील बन बैठता है जहाँ वह हाथ में दर्पण लेकर बैठी है। यह दृश्य इतना अधिक लोकप्रिय था कि अफगानिस्तान के बैग्राम से भी इसी प्रकार का दृश्य फलक प्राप्त होता है। दोनों ही दृश्यों में इतनी अधिक समानता है कि ये दोनों ही एक ही कला परम्परा से उद्‌भूत जान पड़ते हैं।

बैग्राम से लेकर नागार्जुनकोण्डा तक इस दृश्य का रूपांकन ही शिल्पियों की एक सशक्त परम्परा को द्योतित करता है। यहाँ यह प्रश्न नहीं है कि इस दृश्य का अंकन किसके प्रभाव से हुआ, अपितु महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि कला की यह परम्परा अफगानिस्तान से लेकर अमरावती तक फैली हुई थी, जो एक नगरीय सौन्दर्यपरक दृष्टिकोण को उद्‌घाटित करती है।

ब्रिटिश संग्रहालय में सुरक्षित फलक (सं० 77) जहाँ नन्द की पत्नी सुन्तदरी दर्पण देखते अंकित है तथा माया देवी, इन दोनो की वेश–भूषा पूर्णतया नगरीय है, दूसरे फलक जहाँ एक प्रहरी दम्पत्ति उट्‌टंकित हैं। दोनों ही युगलों की वेश–भूषा पर रोमन प्रभाव परिलक्षित होता है। ब्रिटिश संग्रहालय (सं० 79) में एक स्त्री पूर्णतया विदेशी केश विन्यास तथा वेश–भूषा में अंकित है। इसी प्रकार नागार्जुनकोण्डा की कला में वेश–भूषा, तथा अवगुंठन युक्त विदेशी स्त्रियॉ अंकित हैं।

अमरावती की कला में लोक जीवन से नगरीय जीवन का एक क्रमिक विकास परिलक्षित होता है। अमलानन्द घोष द्वारा प्रकाशित 'स्टेला' के द्वितीय पार्श्व में जहाँ जेतवन, आम्रवन के विक्रय का दृश्यांकन हुआ है वहाँ तो हम बैलगाड़ी तथा विश्राम करते वृषभों में एक लोक–जीवन का दृश्य पाते हैं। यहाँ तक की 'शवथी' जो इसी पार्श्व के ऊपर अंकित अभिलेख है, उसमें भी श्रावस्ती विहारों में लोक–जीवन का दृश्य रूपायित है। तृतीय पार्श्व जहाँ धान्यकटक का अभिलेख मिलता है वहाँ तक अभी लोकत–जीवन ही परिलक्षित हो रहा है।

इसमें कुछ समय बाद का 'स्टेला' जो मद्रास संग्रहालय में संग्रहित है जिसका प्रकाशन सी० शिवराममूर्ति ने किया था, इसमें सुप्रसिद्ध कुशीनगर के दुर्ग व्यवस्था तथा धातु के लिए संघर्श का दृश्यांकन है, यहाँ पर नगरीय जीवन परिलक्षित होने लगता है। गवाक्षों से झांकती पुर सुन्दरियाँ तथा अश्वों से आने–जाने वाले सैनिक पूर्णतया एक नगरीय हलचल को प्रदर्शित करते हैं।

निष्कर्ष

प्रस्तुत–शोध पत्र के समापन बिन्दु के साथ हमें यह स्वीकार करने में कोई कठिनाई नहीं है कि अधीतकालीन भारत के आर्थिक उन्नयन में कुछ विदेशी प्रेरणायें सीधी भागीदार थी। दक्षिण भारत के विभिन्न नगरों के उत्खनन में प्राप्त बहुसंख्यक रोमन समग्री एवं सिक्के इस तथ्य के सक्षम साक्षी हैं। निश्चय ही पण्य वस्तुओं के विनिमय ने अनिवार्यतः विचारों के आदान–प्रदान को जन्म दिया होगा। प्रस्तुत स्थिति की संज्ञापना अमारावती की कला में प्राप्त होने वाले मद्यपान के दृश्य, अन्तःपुर में पारदर्शी वस्त्र पहनी महिलाएं, मोतीयों के आभूषण की बाहुल्यता, छज्जों पर पक्षधारी सिंहों की आकृतियाँ, अंगारी पहने रोम योद्धाओं का अंकन, स्त्रियों के विविध रूपों में मनमोहक रूप सज्जा तथा पुरूषों के रूपांकन में उनके वस्त्राभूषण से तत्युगीन वैभवशीलता एवं अभिजात्य विदेशी मूल्यों से प्रभावित नगरीय–जीवन की सहज अभिव्यक्ति के रूप में सामने आती है।

सन्दर्भ

1. एलिजाबेथ, रोजेन स्टोन. (1994). द आर्ट आव नागार्जुनकोण्डा. (प्र०सं०) दिल्ली।
2. आध्य, जी०एल०. (1966). अर्ली इण्डियन इकोनॉमिक्स. बम्बई।
3. कृष्णामूर्ति, के०. (1982). हेयर स्टाइल इन एन्शयेन्ट इण्डियन आर्ट. संदीप प्रकाशनः दिल्ली।
4. राय, अनामिका. (1994). अमरावती स्तूप : ए क्रिटिकल कम्पेरिजन आव इपिग्राफिक आर्टिअेक्चरल एण्ड स्कल्पचरल इविडेन्स. अगम कला प्रकाशनः दिल्ली।
5. रॉलिन्सन. (1916). इण्टरकोर्स बिटविन इण्डिया एण्ड वेस्टर्न वर्ल्ड. लन्दन।
6. सरकार, एच०., नैनार, एस०पी०. (1972). अमरावती, नई दिल्ली।
7. शिवराममूर्ति, सी०. (1942). अमरावली. स्कल्पर्च इन द मद्रास गवर्नमेण्ट म्यूजियमः मद्रास।
8. परीमिंग्टन, ईएच०. (1928). कामर्स बिटवीन दि रोमन इम्पायर एण्ड इण्डिया. कैंब्रिज।
9. ह्वीलर, आर०ई०एम०. (1946). अरिकामेडु – 'एन इण्डो–रोमन ट्रेड़िंग स्टेशन ऑन द ईस्ट कोस्ट ऑफ इंडिया. ए०आई०, नं०।
10. वारमिंग्टन, ई०एच०. (1995). कामर्स, बिटवीन दि रोमन एम्पायर एण्ड इण्डिया. मुन्शीराम मनोहर लाल प्रकाशन प्रा०लि०: नई दिल्ली. प्रथम संस्करण।

33

राष्ट्रीय प्रगति और महिला सशक्तीकरण

डॉ० संगीता तिवारी
असि0 प्रोफेसर, अर्थशास्त्र विभाग
डी०ए०वी० कॉलेज, सिविल लाइंस, कानपुर

प्रस्तावना

महिला या स्त्री जिसका अर्थ है लज्जा से सिकुड़ना। यह दुगाचार्य ने बताया कि वैदिक काल में स्त्रियों का अर्थ लज्जा युक्त स्त्री से लगाया जाता था। वैदिक काल में स्त्री का महत्व काफी अधिक था। फिर धीरे–धीरे काफी परिवर्तन होते गए और महिलाओं की स्थिति बिगड़ती चली गयी। जब मुस्लिम शासन था तब स्त्रियों का निकलना बिल्कुल बंद हो गया था। फिर अंग्रेजी शासन आया तब भी वहीं स्थिति ही रही। यहॉ तक कि बच्चियों को स्कूल जाने तक की भी आज्ञा नहीं थी। पूर्व के समय में समाज में स्त्रियों और बच्चियों को शिक्षा का अधिकार नहीं दिया गया था और जिस समाज में स्त्रियों को शिक्षित किया जाता था उन्हें, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, प्रशासनिक कार्यो में भाग लेने का अधिकार नहीं था। इस कारण तत्कालीन समाज में महिलाएॅ सशक्त नहीं थीं। ऐसी स्थिति में भारत में अनेक समाज सुधारकों जैसे (राजा राम मोहन राय, ईश्वर चन्द्र विद्यासागर, ज्योतिराव फुले, विवेकानन्द, दीनदयाल उपाध्याय और भी अनेकानेक.) ने महिलाओं के सशक्तीकरण के लिए अनेक आन्दोलन किए। उनके प्रयासों के परिणामस्वरुप सती प्रता को समाप्त किया गया, विधवा पुनर्विवाह अधिनियम लाया गयास और बहुत से शिक्षा केन्द्र खोले गए।

किसी भी राष्ट्र के विकास में महिलाओं का हमेशा से अद्वितीय योगदान रहा है। भारत में महिलाओं को सशक्त करने के लिए सरकार द्वारा अनेक उपाय किए जा रहे हैं। और आज भी हमारे देश को स्त्री ही चला रही है। महामहिम द्रोपदी मूर्मू जी भारत की अनुसूचित जाति की पहली महिला राष्ट्रपति जी हैं। कहा भी गया है कि–

शोचन्ति जामयोयत्र विनष्यत्याषु तत् कुलम्।
न शोचन्ति तु यत्रेता वर्धते तद्धि सर्वदा।।

अर्थात् जिस कुल में स्त्रियॉ शोक में रहती है, वह कुल शीघ्र ही बिगड़ जाता है, और जहॉ प्रसन्न रहती हैं वह सदा के लिए बढ़ता जाता है।

नारी राट्रष्य अक्शि अस्ति

अर्थात् स्त्री ही इस देश की ऑख है।

नारी माता अस्ति नारी कन्या अस्ति नारी नागिनी अस्ति

अर्थात् नारी ही मॉ है, बेटी है और बहन है। नारी ही सबकुछ है।

जब नारी सब कुछ है तब भी नारी या महिला सशक्तीकरण की बात कहना मजाक सा लगता है, किन्तु है और महिला न सशक्त है और न ही सुदृढ़।

आज भी हमारे सामने पीड़ित महिलाओं के उदाहरणों में कमी नहीं है। समाचार पत्र, समाचार चैनल, वेब चैनल, रेप, दहेज के लिए हत्या, भ्रूण हत की घटनाओं से भरे पड़े मिलते हैं, इन आंकड़ों में दिन बढ़ोतरी हो रही है। महिलाओं से होने वाली हिंसा और शोषण की घटनाएं खत्म होने का नाम नहीं ले रही। आज हर क्षेत्र में पुरुष के साथ ही महिलाएॅ भी तमाम चुनौतियों से लड़ रही हैं, सामना कर रही हैं, कई क्षेत्रों में तो महिलाएं पुरुषों से आगे हैं। लेकिन दुर्भाग्य यह है कि समाज के कुछ पुरुष प्रधान मानसिकता वाले तत्व यह मानने के लिए तैयार नही हैं कि महिलाएं भी उनकी बराबरी करें, ऐसे लोग महिलाओं की खुले विचार वाली कार्य शैली को बर्दाशत नहीं कर पाते हैं। शायद इसलिए कभी तस्लीमा नसरीन जी चर्चित हुई तो कभी दीपा मेहता। आज भी हमारे समाज में

महिला केंद्रित आलेख और सिनेमा आसानी से स्वीकार नहीं किए जाते हैं, कहीं न कहीं उनका विरोध शुरु हो जाता है। क्या महिलाओं को अधिकार नहीं है कि वे खुलकर अपने विचारों को समाज के सामने रखें।

सवाल पुरुष और महिलाओं के अलग होने का नहीं है, न ही महिलाओं को कमतर आंकने का, सबसे बड़ा सवाल यह है कि अगर देश की आधी आबादी का यूंही अनदेखा किया जाएगा, उनका शोषण किया जाएगा, ऐसे में उनके बिना समाज का विकास कैसे संभव है। जबकि महिला और पुरुष दोनो हो समाज की धुरी है, एक को कमजोर करके संतुलित विकास हो ही नहीं सकता। जब तक देश की आधी आबादी सशक्त नहीं होगी हम राष्ट्रीय विकास की कल्पना भी नहीं कर सकते। आज समय की मांग है कि संविधान में भी महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकार मिलें, और उनके साथ कदम से कदम मिला कर चले।

महिला सशक्तीकरण का सही अर्थ

यह एक चर्चा का विषय है कि सशक्तीकरण है क्या? कही सशक्तीकरण के नाम पर अराजकता फैलाना तो नहीं। कहीं हम समाज में प्रचलित रीति रिवाज और प्रथाओं का उल्लंघन तो नहीं कर रहे हैं। हम नारी स्वतत्रंता का गलत फायदा तो नहीं उठा रहे। कहीं हम सशक्त हाने का मतलब है मन–मर्जी से जीना और सामाजिक रीतियों को तोड़कर अपनी हर ख्वाहिशों को पूरा करने की कोशिश तो नहीं कर रहे हैं। अब समय आ गया है कि हम इसकी वास्तविक परिभाषा को समझे और सशक्त बनें।

सरल शब्दों में कहें तो हम ये कह सकते हैं कि महिलाओं को अपनी जिंदगी के हर छोटे–बड़े हर काम का खुद निर्णय लेने की क्षमता होना ही सशक्तिकरण है। अपनी निजी स्वतन्त्रता और खुद फैसले लेने के लिए महिलाओं को अधिकार देना ही महिला सशक्तीकरण है। जब तक महिला स्वयं को पुरुषों के बराबर समझे और उनकी निर्भरता की सोच से बाहर आए तभी सशक्तीकरण हो सकता है। विशेषकर हमारे पारंपरिक ग्रामीण समाज की महिलाएँ जो अपनी इच्छाशक्ति, स्वतंत्रता और स्वाभिमान को दबाकर जीने को मजबूर है। कहने को तो बेटी घर की लक्ष्मी होती है लेकिन घर के बाहर हर जगह वह तर्क–कुतर्क और विकृत मानसिक लोगों की शिकार होती है, हिंसा का शिकार होती है, या लज्जित होती है।

महिलाओं को पुरुष के बराबर वैधानिक, राजनीतिक, शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं आर्थिक क्षेत्रों में उनके परिवार, समुदाय, समाज एवं राष्ट्र की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि मेकं निर्णय लेने की स्वत्व अधिकार से है। महिला सशक्तिकरण का मतलब यह नहीं है कि उनके दूसरों पर प्रभुत्व जमाने की शक्ति प्रदान करना तथा अपनी श्रेष्ठता को स्थापित करने के लिए शक्ति सम्पन्न बनाना। महिलाओं के लिए सशक्तिकरण का मतलब यह है कि उसे ऐसी शक्ति प्राप्त हो, जिससे उसके महत्व को स्वीकार किया जा सके तथा उसे समान नागरिक एवं समान अधिकार की स्थिति तक ला सके। उनके लिए शक्ति का मतलब यह है कि न केवल घर के अंदर, बल्कि समाज के प्रत्येक स्तर एवं पक्ष में उनकी भागीदारी सुनिश्चित हो सके। उनकी शक्ति के मूल्य एवं भागीदारी को समाज द्वारा उचित मान्यता भी प्राप्त हो सके।

महिला की सशक्तिकरण होने से उनमें अपनी क्षमताओं एवं योग्यताओं को पहचानने की शक्ति उत्पन्न हो जाती है, ताकि वे एक पूर्ण नागरिक के रुप में अपने देश एवं मानवता की सेवा में सहायता पहुॅचा सके। अपनी क्षमताओं के अनुरुप वे अपने परिवार, समुदाय एवं समाज के प्रत्येक स्तर पर अपनी एक सकारात्मक छवि का निर्माण कर सकें और अपने अंदर आत्मविश्वास को भी उत्पन्न करें। उनमें क्षमताओं का इतना विकास हो सके कि वे किसी भी समस्या का स्वयं समाधार कर सकें।

और

नारी राष्ट्रष्य अक्शि अस्ति

अर्थात् स्त्री ही इस देश की ऑख है।

नारी माता अक्ति नारी कन्या अस्ति नारी थगिनी अस्ति

अर्थात् नारी ही, मॉ है, बेटी है और बहन है। नारी ही सब कुछ है।

जब महिलाएँ अपने प्रति होने वाले सामाजिक मनोवैज्ञानिक, सांस्कृतिक अन्याय, लिंग भेद, असमानता, सामाजिक सांस्कृतिक, आर्थिक तथा राजनीतिक शक्तियों के नकारात्मक प्रभाव के विरुद्ध जागरुक हो जाए तो यह समझा जा सकता है कि उनका सशक्तिकरण हो रहा है। वास्तव में, इसकी शुरुआत तब होती है, ज बवे अपनी सकारात्मक स्वच्छ छवि, अधिकार, कर्तव्य ओर अपनी क्षमताओं के प्रति पूरी जागरुक हो जाती है। अतः महिला सशक्तिकरण की सार्थकता यह है कि, उन्हें इतना योग्य बनाया जाए ि कवे अपनी क्षमताओं एवं योग्यताओं को पहचान सकें और इसका उपयोग अपने जीवन में कर सकें। वे अपने जीवन में विचारों, उसकी अभिव्यक्ति एवं कार्यो की स्वतंत्रता का उपयोग कर सकें। इतना ही नहीं, उन्हें केवल अपनी योग्यता को ही नहीं पहचानना है, बल्कि इसके लिए उन्हें अवसर, सुविधा, बाहरी और आंतरिक वातावरण पर भी ध्यान देना है, ताकि वे अपनी क्षमताओं एवं आत्मसम्मान की समृद्धि भी कर सकें। अपने प्रति होने वाले अन्याय के विरुद्ध संघर्ष करने की क्षमता भी विकसित हो सके।

महिला सशक्तिकरण का अर्थ है 'शक्तिसम्पन्न' करना अर्थात् जो पहले से शक्तिहीन है, या शक्तिहीन बनाया गया है या शक्तिहीन माना गया है या जिसे शक्तिहीन रुप में देखा जाता है उसे एसी शक्तियॉ प्रदान की जाए जो उसके बहु–आयामी

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

व्यक्तित्व के सम्मान हेतु, पुष्पित पल्लवित और समृद्ध करने हेतु आवश्यक है। सशक्तिकरण किसी भी प्रकार के भेदीाव विषमता, स्तरण, अधीनता, हिंसा, अस्पृश्यता, वंचना तथा किसी भी आभाव को मिटाने वाली प्रक्रिया है जो अन्ततः सकारात्मक शक्ति का उपयोग करने की क्षमता पैदा करती है। महिलाओं के संदर्भ में सशक्तिकरण का अर्थ है संसाधनों पर उनका नियंत्रण तथा निर्णय का अधिकार।

भारत में महिला सशक्तिकरण का उद्देश्य और महत्व

भारत में महिला सशक्तिकरण से आशय प्राथमिक रुप से महिलाओं की सामाजिक और आर्थिक दशा में सुधार लाना है। यहॉ सशक्तिकरण के विभिन्न आयामों पर भी दृष्टिपात करना उचित होगा। उल्लेचानीय है कि शक्ति कोई वस्तु नहीं है जिसका आदान–प्रदान किया जा सकता है। महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए उन पहलुओं को मजबूत बनाने की आवश्यकता है, जिनका सीधा संबंध स्वावलम्बन और उत्थान से है। शैक्षणिक, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्र इनमें से प्रमुख है। महिला की प्रगति पूरे घर परिवार समाज एवं राष्ट्र की प्रगति मानी जाती है।

आज यह स्वीकार किया जाने लगा है कि मानव राष्ट्र एवं विश्व का वास्तविक विकास महिलाओं के सशक्तिकरण के माध्यम से ही संभव हो सकता है।

महिला सशक्तिकरण को हम एक प्रक्रिया के रुप में देखते हैं, जिनमें महिलाएँ भौतिक, मानवीय एवं बौद्धिक जैसे ज्ञान, सूचना, विचार और वित्तीय स्रोतों जैसे धन अथवा धन तक पहुँच एवं घर, परिवार, समुदाय एवं राष्ट्र आदि के संदर्भ में निर्णय लेने के सम्बन्ध में अधिक सहभागिता कर सकती है।

इस नीति का लक्ष्य महिलाओं की उन्नति विकास तथा सशक्तीकरण को मूर्त रूप देना है। इसी नीति का व्यापक प्रसार किया जाएगा ताकि इसके लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए सभी साक्षेदारों को सक्रिया भागीदारी करने के लिए प्रेरित किया जा सके। इस नीति के उद्देश्यों में विशेषकर निम्नांकित शामिल हैः

1. महिलाओं के पूर्ण विकास हेतु सकारात्मक आर्थिक तथा सामाजिक नातियों के जरिए एक माहौल का निर्माम करना, ताकि वे अपनी क्षमताओं को समझ सकें।
2. राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा नागरिक क्षेत्रों में महिलाओं द्वारा सभी मावाधिकारों तथा मौलिक आजादियों का पुरुषों के समान कानूनी तथा व्यावहारिक उपयोग करना।
3. सामाजिक, राजनैतिक तथा आर्थिक जावन में महिलाओं द्वारा भागीदारी और निर्णय क्षमता का समान अवसर देना।
4. स्वास्थ्य देखभाल, सभी स्तर की गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, करियर तथा व्यावसायिक मार्गदर्शन रोजगार समान वेतन पेशेवर स्वास्थ्य तथा सुरक्षा सामाजिक सुरक्षा तथा सरकारी ऑफिस इत्यादि में समान अवसर की उपलब्धता देना।
5. कानूनी सिस्टम को सुदृढ़ करना, जिसका उद्देश्य महिलाओं के खिलाफ होने वाले सभी प्रकार के भेदभाव का उन्मूलन करना।
6. पुरुष तथा महिला दोनों के सक्रिया भागीदारी और साझीदारी द्वारा सामाजिक धारणाओं और सामुदायिक व्यवहारों में परिवर्तन लाना।
7. विकास प्रक्रिया में एक लैंगिक दृष्टिकोण को लागू करना।
8. महिलाओं तथा बालिकाओं खिलाफ होने वाली किसी भी प्रकार के भेदभाव का उन्मूलन तथा
9. सिविल सोसाईटी के साथ खास कर महिला संगठनो के साथ साझेदारी का निर्माण करना तथा उसका सशक्तीकरण करना।

नीति निर्देश

न्यायिक कानूनी प्रणाली

- कानूनी व्यायिक प्रणाली को अधिक जिम्मेदार तथा महिलाओं की आवश्यकता के प्रति संवेदनशील बनया जाएगा खासकर घरेलू हिंसा तथा जिजी उत्पीड़न के मामलों में। नए कानून को लागू किया जाएगा और मौजूदा कानून की समिक्षा की जाएगी ताकि त्वरित न्याय प्रदान किया जा सके और दोशी को कड़ी से कड़ा सजा दी जा सके।
- सामुदायिक तथा धार्मिक नेताओं समेत सबी भागीदारों की पूर्ण भागीदारी के साथ इस नीति का उद्देश्य है पर्सनल लॉ बोर्ड जैसे शादी, तलाक, गुजारा भत्ता तथा अभिभाकत्व आदि में सुधार लाना ताकि महिलाओं के खिलाफ भेदभाव को खत्म किया जा सके।
- पुरुष प्रधान समाज में संपत्ति के अधिकार पर महिला को दोयम दर्जा पर रहने के लिए मजबूर किया है। इस नीति का उद्देश्य है संपत्ति और विरासत के मालिकाना हके के जुड़े कानूनों में सुधार लाना है ताकि महिलाओं को लैंगिग न्याय मिल सके।

निर्णय क्षमता

- शक्ति कि साझेदारी में महिलाओं की समानता तथा निर्णय क्षमता में उनकी सक्रीय भागीदारी सुनिश्चित की जाएगी, ताकि

सशक्तीकरण के लक्ष्य की पूर्ति का जा सके। विधायिका, कार्यपालिका, न्यायपालिका, कॉरपोरेट, सांवैधानिक निकायों तथा सलाहकार आयोग समितियों, बोर्ड, ट्रस्ट आदि में सभी स्तरों कि निर्णय क्षमता में महिलाओं की समान पहुंच बनाने के लिए सभी उपाय किए जाएंगे। उच्च विधायिका समेत सभी क्षेत्रों में आरक्षण कोटा पर विचार किया जाएगा। महिला हितैशी कर्मचारी नीतियों का भी निर्माण किया जाएगा, ताकि महिलाओं को विकास प्रक्रिया में प्रभावी भागीदारी निभाने का मौका मिल सके।

राष्ट्रीय विकास प्रक्रिया में एक लैंगिक दृष्टिकोण लागू करना

- सभी विकास प्रक्रियाओं में उत्प्रेरक, भागीदार तथा प्राप्तकर्ता के रुप में महिलाओं के दृष्टिकोण को लागू करने के लिए नीतियों, कार्यक्रमों तथा प्रणालियों की स्थापना की जाएगी। जहां कहीं भी नीतियों तथा कार्यक्रमों में अतंर दिखाई पड़ेगा, उन्हें पाटने के लिए महिला के लिए तैयार विशिष्ट हस्तक्षेपों को लागू किया जाएगा। ऐसा मुख्य धारा प्रणालियों की प्रगति की समीक्षा के लिए समय–समय पर समंवयन तथा निगरानी प्रणाली तैयार की जाएगी। परिणामस्वरुप महिला के मामले तथा चिंताओं को सभी संबंध कानूनों, क्षेत्रगत नीतियों, योजनाओं तथा कार्यक्रम में उठाया और प्रतिबिंबित किया जाएगा।

महिलाओं का आर्थिक सशक्तीकरण

गरीबी उन्मूलन एवं क्षमता में वृद्धि

- चूंकि महिलाएं गरीबी रेखा के नीचे बसर करने वालों विशाल जनसंख्या निर्मित करती और प्रायः अत्यधिक गरीबी में जीवन व्यतीत करती हैं, ऐसे में घर से बाहर की कड़वी सच्चाइयों तथा सामाजिक भेदभाव, वृहत अर्थव्यवस्था नीतियों तथा गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों के जरिए ऐसा महिलाओं की जरूरतों तथा समस्याओं से निपटा जा सकता है। उन कार्यक्रमों का उन्नत क्रियांवन किया जाएगा जो पहले से ही महिला केंद्रित हैं। गरीब महिलाओं को संगठित करने और सेवाओं के एकत्रीकरण के ले आवश्यक उपाय किए जाएंगे, जिसके तहत उन्हें कई प्रकार के आर्थिक तथा सामाजिक विकल्प प्रदान किए जाएंगे और साथ ही उनकी क्षमताओं को बढ़ाने को लिए आवश्यक सहायक उपाय भी किए जाएंगे।

लघु ऋण में बढ़ावा देना

उपभोग तथा उत्पादन के लिए महिलाओं को ऋण की प्राप्ति के अवसरों को बढ़ावा देने के लिए नई तथा मौजूदा लघु–ऋण प्रणालियों व लघु–वित्त स्थितिंयों को सुदृढ़ किया जाएगा। विस्तृत वित्तीय स्थितियों तथा बैंकों के जिरए पर्याप्त ऋण प्रवाह को सुनिश्चित करने के लिए अन्य सहायक उपाय भी अपनाए जाएंगे ताकि गरीबी रेखा से नीचे बसर करने वाले सभी महिलाओं को ऋण की सरल उपलब्ध सुनिश्चित हो सके।

महिला सशक्तीकरण तथा अर्थव्यवस्था

- बृहत आर्थिक तथा सामाजिक नीतियों को तैयार करने तथा उनके क्रियांवयन में महिलाओं को शामिल कर उनके दृष्टिकोण को स्थान दिया जायेगा। उत्पादकर्ता तथा मजदूर के रुप में सामाजिक आर्थिक विकास में उनकी भूमिका की औपचारिक व अनौपचारिक क्षेत्रों में (घरेलू काम करने वाली महिलाएं भी मशामिल हैं) पहचान की जाएगी और रोजागर तथा उनकी कार्यदशाओं की रुपरेखा तैयार की जाएगा। ऐसा उपायों में शामिल होंगे।

जहां कहीं भी आवश्यक हो काम की पारंपरिक अवधारण की पुनरव्याख्याय और पुनर्परिभाषा, जैसे जनगणना रिकॉर्ड में महिलाओं के योगदान को उत्पादक तथा मजदूर के रुप में दिखाया जाना। सैटेलाईट तथा राश्ट्रीय खातों का निर्माण। उपरोक्त (1) तथा (2) को लागू करने के लिए सही क्रिया विधियों का विकास करना।

वैश्विकरण और महिला सशक्तिकरण

वैश्विकरण ने महिलाओं के समानता के लक्ष्य की पूर्ति के लिए नई चुनौतियाँ खड़ी की है जिसके लैंगिक प्रभाल को योजनाबद्ध तरीके से मूल्यांकित नहीं किया जा सका है। हालांकि वृहत स्तर के अध्ययनों से जिन्हें महिला तथा बाल विकास विभाग द्वारा संचालिक किया गया यह पता चलता है कि रोजगार की पहुचं बनाने तथा गुणवत्तापूर्ण रोजगार सृजित करने के लिए नीतियों में फेर–बदल करने कि जरुरत हैं। वृद्धिरत वैश्विक अर्थव्यवस्था तथा ग्रामीण क्षेत्रों में कार्य दशा में गिरावट होने और असुरक्षित कार्य वातावरण को बढ़ाया मिलने से लैंगिक असमानता में वृद्धि हुई। महिलाओं की क्षमता बढ़ाने तथा नकारात्मक सामाजिक तथा आर्थिक प्रभाव से निपटने के लिए उनके सशक्तीकरण के लिए रणनीतियाँ तय की जाएंगी।

महिला तथा कृषि

- कृषि तथा सहायक क्षेत्रो में उत्पादक के रूप में महिलाओं के हम योगदानों के देखते हुए संकेंद्रित व्यास प्रयास किया जाएगा ताकि यह सुनिश्र्चित किया जा सके कि ट्रेनिंग, विस्तार तथा विभिन्न कार्यक्रमों के लाभ उनकी संख्या के अनुपात में ही उन तक पहुंच सके। मुद्रा संरक्षण, सामाजिक वानिकी, डेरी विकास तथा अन्य व्यावसायिक सहायक कृषि क्षेत्रो में जैसे उद्यान

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

विज्ञान, मवेशी पालन, पॉल्ट्री मछली पालन इत्यादि में महिलाओं के प्रशिक्षण की व्यवस्था की कृषि क्षेत्र के श्रमिक महिलाओं तक भी विस्तार किया जाएगा।

महिला तथा उद्योग

- इलेक्ट्रॉनिक, सूचना प्रौद्योगिकी तथा खाद्य प्रसंस्करण और कृषि उद्योग व टेस्कटाईल उद्योग में महिलाओं दवारा निभाई अहम भूमिका इन क्षेत्रों के विकास में काफी महत्तवपूर्ण रही है। उन्हें श्रम कानून सामाजिक सुरक्षा तथा अन्य सहायक सेवाओं में व्यापक मदद की जाएगी,ताकि वे विभिन्न औद्योगिक 7त्रो में भागीदारी निभा सके।
- वर्तमान में महिलाएं कारखानों में रात की पाली में काम नहीं कर सकतीं, भले ही वो ऐसा चाहती हों। कारखानों में रात की शिफ्ट में महिलाएं काम र सके इसके लिए उचित उपाय अपनाने होंगे। इसके लिए सुरक्षा, परिवहन इत्यादि के लिए सहायक सेवाएं बहाल करनी होगी।

सहायक सेवाएं और महिला सशक्तीकरण

- महिलाओं के ले सहायक सेवाएं, जैसे बच्चों देखभाल की सुविधाएं, कार्यस्थल तथा शिक्षण संस्थाओं में पालनाघर, वृद्धाओं और विकलांग महिलाओं के लिए घर जेसी सुविधाओं का विस्तार और उन्नत किया जाएगा ताकि सामाजिक, राजनैतिक तथा आर्थिक जीवन में उनके पूर्ण सहयोग को सुनिश्चित किया जा सके और एक अनुकूल वातावरण का निर्माण किया जा सके। महिलाओं के विकास प्रक्रिया में प्रभावी भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए महिला हितैशी कर्मचारी नीतियों का भी निर्माण किया जाएगा।

महिलाओं का सशक्तीकरण में शिक्षा

- महिलाओं तथा लड़कियों के लिए शिक्षा का समान अवर मुहैय्या कराया जाएगा। भेदभाव को समाप्त करने, शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए निरक्षरता को खत्म करने एक लैंगिक संवेदनशील शिक्षा प्रणाली बनाने के लिए नामांकन में इजाफा करने तथा कक्षा में लड़कियों की उपस्थिति में विस्तार करने तथ जीवन भर के प्रशिक्षण के लिए शिक्षा गुणवत्ता में सुधार लाने के लिए सात ही महिलाओं की व्यावस्यिक तकनीकी क्षमताओं में सुधार के लिए सभी आवश्यक कदम उठाएं जाएंगे। माध्यामिक तथा उच्च शिक्षा में लैंगिक अंतर क कम करना एक मुख्य लक्ष्य होगा। मौजूदा नीतियों में क्षेत्रवार समय सीमा की पूर्ति का ध्यान रखा जाएगा जिसमें खासकर अनुसूचित जाति जनजातियों अन्य पिछड़ी जातियों अल्पसंख्यक समुदाय की लड़कियों तथा महिलों पर ध्यान केंद्रित किया जाएगा। शिक्षा प्रणाली के सभी स्तरों पर लैंगिक संवेदनशील पाठ्यक्रम का निर्माण किया जाएगा, जिससे लैंगिक भेदभाव के एक कारण के रुप में लैंगिक रूढ़िवादिता से निपटा जा सके।

भारत के राष्ट्रीय प्रगति में महिला का योगदान

भारत की कुल जनसंख्या में लगभग 39 प्रतिशत कार्यशील जनसंख्या है, जिसमें लगभग एक चौथाई महिलाएँ हैं। कृषि प्रधान भारत देश में कृषि प्रधान भारत देश में कृषि कार्य में सक्रिय भूमिका अदा करते हुए स्त्रियाँ प्रारंभ से ही अर्थव्यवस्था का आधार रही हैं, लेकिन समाज में स्त्री की आर्थिक गतिविधियों को हमेशा से ही उचित रुप से मूल्यांकित नहीं किया गया है।

आधुनिक युग में कुछ समाज सुधारकों के प्रयास ने महिलाओं की स्थिति में धीरे–धीरे सुधार लाना प्रारंभ किया, जिसके परिणाम से राष्ट्र की समुचित प्रगति में महिलाओं का नाम निरंतर आगे आ रहा है।

वर्तमान समाज में महिला का योगदान

आज स्त्रियों ने अनेक सामाजिक आर्थिक कठिनाइयों को पार करते हुए नई नई बुलंदियों को छुआ है।

घर की जिम्मेदारियॉ तो वे सदियों से निभाती आ रही हैं, अब उन्होंने स्वयं को बाहर की दुनिया में भी दृढ़ता से स्थापित किया है। चिकित्सा का क्षेत्र हो या इंजीनियरिकंग का, सिविल सेवा का क्षेत्र हो या बैंक का, पुलिस हो या फौज, वैज्ञानिक हो या खेल का क्षेत्र, प्रत्येक क्षेत्र में अनेक महत्वूपर्ण पदों पर स्त्रियाँ आज सम्मान के साथ आसीन है।

मेरी कॉम, किरण बेदी, कल्पना चावला, मीरा नायर, मीरा कुमार, मलाला यूसुफजई, मेनका गांधी, बछेंद्री पाल, संतोष यादव, सानिया मिर्जा, सायना नेहवाल, पीटी ऊषा, कर्णम कल्लेश्वरी, पीवी सिंधु, गीता फोगाट और अभी हाल ही में हुए टोक्यो 2021 मेकं रजत पदक विजेता मीरा बाई चानू व महामहिम राष्ट्रपति द्रोपदी मुर्मू आदि की क्षमता एवं प्रदर्शन को छिपाया नहीं जा सकता। आज नारी पुरुषों के कंधे से कंधा मिलाकर आगे बढ़ रही है और देश को बढ़ा रही है।

सुभाषचंद्र बोस ने भी कहा है–

ऐसा कोई भी कार्य नहीं, जो हमारी महिलाएँ नहीं कर सकतीं और ऐसा कोई भी त्याग और पीड़ा नहीं है, जो वे सहन नहीं कर सकतीं।

स्त्रियों की स्थिति में सुधार की आवश्यकता

यद्यपि महिलाओं ने अनेक क्षेत्रों में प्रगति की है, परन्तु महिलाओं का अभी बहुत कुछ करना शेष है। आज भी स्त्री की उपेक्षा का सिलसिला उसके जन्म के साथ ही शुरु हो जाता है। पितृसत्तात्मक सामाजिक संरचना के कारण हमें हर स्तर पर उनकी दशा सुधारने के लिए प्रयास कने चाहिए। आज भी अधिकांश भारतीय स्त्रियॉ वेतनभोगी होते हुए भी आर्थिक दृष्टि से पुरुषों पर आश्रित बनी हुई है। सिर्फ कानूनी प्रावधा नही महिलाओं की स्थिति सुधारने के लिए पर्याप्त नहीं होंगे, बल्कि लोगों की मनोवृत्ति में परिवर्तन लाने की भी अत्यंत आवश्यकता है। आवश्यकता इस बात की भी है कि भारतीय महिलाओं की उनका उपयुक्त स्थान दिलाने के लिए आगे आए।

निष्कर्ष

महिला सशक्तिकरण, एक ऐसा विषय है जिस पर जितना लिखा या बोला जाए उतना कम है। इस विषय पर उपरोक्त चर्चा करने के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुॅच सकते हैं कि प्राचीन समय से मध्य काल तक और मध्य काल से आधुनिक काल तक स्त्रियों की स्थिति में सुधार लाने और उन्हें सशक्त करने के लिए अनेक समाज–सुधारकों और प्रशासन द्वारा कई प्रयास किए गए हैं। उन सभी प्रयासों के फलस्वरुप ही आज वर्तमान समय की महिलाएॅ सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक व सासं अपना योगदान दे रही हैं।

कृतिक क्षेत्रों में लेकिन सिर्फ प्रशासन द्वारा किए जा रहे कानूनी प्रावधानों से ही महिलाओं की स्थिति सुधारने (महिला सशक्तिकरण) के लिए पर्याप्त नहीं होंगे, बल्कि समाज के सभी लोगों की मनोवृत्ति में परिवर्तन लाने की भी आवश्यकता है। आवश्यकता इस बात की भी है कि भारतीय समाज महिलाओं को उनका उपयुक्त स्थान दिलाने के लिए निरन्तर आगे आए।

अतः विश्व के मानस पटल पर एक अखण्ड व प्रखर भारत राष्ट्र की तस्वीर तभी प्रकट होगी, जब हमारी मातृशक्तियाँ अपने अधिकारों व शक्ति को पहचान कर अपनी गरिमा व गौरव का परिचय देंगी और राष्ट्र निर्माण में अपनी प्रमुख भूमिका निभाएँगी।

संदर्भ

1. स्त्री सम्मान एवं सशक्तीकरण Class 10 एक निबन्ध।
2. क्यों जरुरी महिला सशक्तीकरण, www.punjabkesari.in.
3. राष्ट्र निर्माण में महिलाओं का योगदान tendyhindi.com.
4. 2001 में पारित की गयी महिला सशक्तीकरण की योजना ni.vikaspedia.in.
5. स्वयं

34

औद्योगिक तथा पर्यावरण निम्नीकरण– एक दृष्टिकोण

डॉ० मनीषा सक्सेना
असिस्टेंट प्रोफेसर, अर्थशास्त्र विभाग
एल.वाई. डिग्री कॉलेज, कायमगंज, फर्रुखाबाद

सारांश

इस पृथ्वी के प्रत्येक जीव को बेहतर जीवन पाने के लिए सर्वप्रथम बेहतर पर्यावरण को पाना अति आवश्यक है परंतु कभी–कभी वैश्विक पर्यावरण परिवर्तन के कारण हमारे स्वास्थ्य और दूसरी स्थितियों जैसे आर्थिक, सामाजिक, भौगोलिक गतिविधियों पर इसका काफी बुरा असर पड़ता है। इस तरह की अनेकों समस्याओं के निवारण के लिए पर्यावरण का शुद्ध होना अति आवश्यक है, क्योंकि न केवल मानव जीवन बल्कि पशु–पक्षी और वनस्पतियों पर भी प्रदूषित पर्यावरण का विशेष प्रभाव पड़ता है। पर्यावरण प्रदूषण के लगातार बढ़ते रहने के कारण ही पृथ्वी की बहुत सी दुर्लभ प्रजातियां नष्ट होती जा रही हैं। पशु पक्षियों की संख्या में कमी आती जा रही है। तेजी से बदलते परिवेश का असर भूमंडलीय तापमान का बढ़ना, मौसमी चक्र में बदलाव कहीं सूखा तो कहीं अधिकाधिक वर्षा, ग्लेशियरों का पिघलना, समुद्री जल स्तर में बढ़ोतरी आदि अत्यंत कठिन परिस्थितियों को जन्म देता है।

पर्यावरण संकट के कारण

विभिन्न उद्योगों से गैस के रूप में निकलने वाले विशैले पदार्थों को औद्योगिकरण का प्रमुख संकट माना जा रहा है औद्योगीकरण एक ओर देश को प्रगति की ओर ले जाता है तो दूसरी ओर विभिन्न प्रकार की फैक्ट्रियों से निकलने वाली गैसों के कारण पृथ्वी के वातावरण में कई प्रकार की विशैली गैसों का उत्सर्जन होता है जिससे पर्यावरण को काफी नुकसान पहुंचता है विश्व में औद्योगिकरण से ध्वनि प्रदूषण वायु प्रदूषण एवं जल प्रदूषण होता है जिसके कारण पृथ्वी का वातावरण दिन प्रतिदिन दूषित होता जा रहा है। सामान्यत पर्यावरणीय संकट के दो प्रमुख कारण है–

1– प्राकृतिक कारण

2– मनुष्य कारण

जब प्राकृतिक कारणों से कोई घटना घटती है तो उसके कई कारण हो सकते हैं जैसे कि–

1. विभिन्न प्राकृतिक घटनाएं जैसे ज्वालामुखी विस्फोट भूकंप एवं भूस्खलन इत्यादि पृथ्वी की आंतरिक गतिविधियों की वजह से घटती है जिसका प्रमुख कारण पृथ्वी की कुछ आंतरिक गतिविधियों जैसे की दाब, ताप एवं इसकी विभिन्न परतो के बीच उत्पन्न असंतुलन, परंतु इसे रोका नहीं जा सकता क्योंकि पृथ्वी की प्रमुख क्रिया प्राकृतिक है इस पर व्यक्ति का कोई वश नहीं होता परंतु वैज्ञानिक विभिन्न उपक्रमों के माध्यम से इसका पूर्वानुमान लगा लेते हैं जिससे घटना को पहले और तुरंत बाद राहत एवं लोगों की सहायता की जा सकती है।
2. मौसम या जलवायु में परिवर्तन की कारण भी आनेको घटनाएं घटती हैं जैसे चक्रवात, बिजली चमकना, तेज वर्षा, आग लगना जैसी घटनाएं घटती हैं जिससे अनेकों प्राकृतिक दुर्घटनाएं असंख्य मात्रा में व्यक्ति काल के गाल में चले जाते हैं इन सभी कारणों से पर्यावरण की गुणवत्ता भी नष्ट होती है और अनेकों प्राणियों का जीवन का अस्तित्व खतरे में पड़ता है।
3. मानवीय कारणों के द्वारा भी हम कई बार संकटों में घिर जाते हैं, जैसे– सामाजिक संकट के रूप में जनसंख्या विस्फोट, आतंकवाद, चोरी, डकैती, हत्या, लूटपाट, आत्महत्या जैसी कई समस्याएं हैं जो वातावरण में नकारात्मकता लाती हैं और पृथ्वी को दूषित करती हैं एवं भौतिकवादी संवेदना के कारण मानव प्रकृति की आंतरिक क्रियाओं में भी दखल देने लगता है। ऐसे

अनेकों कारणों के द्वारा ही प्राकृतिक वातावरण की गुणवत्ता कम होने लगती है और हम अनेकों बीमारियों से ग्रसित रहते हैं और दुर्बलता प्राप्त करते हैं।

पर्यावरण का आर्थिक प्रभाव

पर्यावरण की इन सभी परिस्थितियों का प्रभाव भारत की अर्थव्यवस्था पर भी पड़ना स्वाभाविक ही है क्योंकि भारत की अर्थव्यवस्था कृषि पर ही आधारित है यद्यपि कृषि व्यवस्था में उचित सुधार के लिए सरकार समय–समय पर कई योजनाएं एवं उन्नत कृषि के लिए कृषकों को ट्रेनिंग के माध्यम से उन्हें प्रशिक्षित करती है, परंतु फिर भी यदि जलवायु का भी उचित सहयोग मिले तो कृषि उपज में उच्चतम बढ़ोतरी हो सकती है कृषिको को उचित समय पर वर्षा का पानी नहीं मिल पाता, और जब पानी की आवश्यकता होती है तो सूखा पड़ जाता है और जब खेती को पानी की आवश्यकता नहीं होती तो बाढ़ आ जाती है यह व्यवस्था केवल हमारे दूषित पर्यावरण के कारण ही है निश्चित रूप से ही यह कठिन परिस्थितियां कृषि द्वारा उत्पादित फलों सब्जियों अनाजों की उपज एवं गुणवत्ता को प्रभावित करेंगी।

आर्थिक पर्यावरण उन सभी आर्थिक कारकों को संदर्भित करता है जो वाणिज्यिक और उपभोक्ता व्यवहार को प्रभावित करते हैं अर्थात यह सभी कारक विभिन्न कृषि व्यवसाय को निश्चित रूप से प्रभावित करते हैं अर्थात पर्यावरण आर्थिक गतिविधियों को कैसे संचालित करता है और कितनी अर्थव्यवस्था में कितनी सफलता दिलाता है यह विषय विचारणीय है। यह कहा जा सकता है कि आर्थिक पर्यावरण विभिन्न आर्थिक कारकों का संयोजक है जो व्यवसाय पर अपने प्रभाव निश्चित रूप से डालता है।

आर्थिक पर्यावरण को प्रभावित करने वाले तत्व

किसी देश के आर्थिक वातावरण के अंतर्गत आने वाले तत्वों व व्यावसायिक पर्यावरण को प्रभावित करने वाले तत्वों में नीति औद्योगिक नीति व्यापार नीति मौद्रिक एवं राजकोषीय नीति आर्थिक संरचना बचत एवं विनियोग निवेश नीति सरकार की आर्थिक भूमिका विदेशी पूंजी आदि प्रमुख है इन सभी विषयों पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है क्योंकि इनमें से किसी के भी संकुचन से अर्थव्यवस्था पर प्रभाव पड़ना निश्चित है।

आर्थिक विकास एवं पर्यावरण का प्रभाव

भारत आर्थिक विकास के लिए पर्यावरण एक विशेष स्थान रखता है क्योंकि भारतीय कृषि प्राकृतिक जलवायु पर आज भी निर्भर है क्योंकि भारत का 60 प्रतिशत किसान गरीब होने वह उचित सुविधा ना मिल पाने के कारण आज भी जलवायु पर ही निर्भर रहता है जिसका कृषि उपज पर पर विशेष प्रभाव पड़ता है।

इसमें संदेह नहीं है कि आर्थिक समृद्धि एवं विकास पर्यावरण पर ही अधिकांशतः निर्भर करता है आर्थिक पर्यावरण रोजगार का मूल है और देश की प्रगति को संचालित करने में विशेष स्थान रहता है। यदि आर्थिक पर्यावरण, गरीबी, बेकारी, भुखमरी जनता का असंतोष का सामना करना पड़ सकता है तो भारत तो क्या किसी भी देश के विकास में अवरोध पैदा कर सकता है। अतः भारत जैसे अर्धविकसित देश को आगे ले जाने के लिए पर्यावरण में अनुकूलता अति आवश्यक है क्योंकि आर्थिक विकास और उचित पर्यावरण एक दूसरे के पूरक (सहयोगी) हैं।

जलवायु परिवर्तन का समष्टिगत आर्थिक प्रभाव

जलवायु परिवर्तन का देश की अर्थव्यवस्था पर भी विशेष प्रभाव पड़ता है। अतः जलवायु परिवर्तन को आर्थिक स्थिरता के लिए खतरे के रूप में माना जाता है मनुष्य एवं प्रकृति दोनों पर ही जलवायु परिवर्तन का विशेष प्रभाव पड़ता है उपयुक्त जलवायु खेतों में और इससे संबंधित उद्योगों में काम करने में व्यक्ति को सक्षम बनाती है। वर्तमान में हम बहुत तेजी से पर्यावरणीय बदलावों से गुजर रहे हैं जो कि जटिल होने के साथ–साथ बहुत हद तक बहुआयामी भी है, जैसे कि यदि काफी बड़े स्तर पर जलवायु परिवर्तन होता है तो वायु प्रदूषण के कारण हवा की खराब गुणवत्ता और भोजन और पानी की किल्लत के कारण बहुत से मौसमी व अन्य खराब उत्पादन संबंधी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इस तरह के खराब वातावरण के संपर्क में आने के कारण ही भारत जैसे विकासशील देशों में स्वास्थ संबंधित समस्याएं और मिश्रित समस्याएं उत्पन्न होती हैं।

यद्यपि हम सामान्य तौर पर समय–समय पर इन समस्याओं की जांच व समाधान ढूंढने का प्रयास करते हैं जिससे कि स्वास्थ्य पर समग्र प्रभाव को कम करने का कोई रास्ता निकाल सकें। वर्तमान में हमें इस ओर ध्यान देने की अति आवश्यकता है कि हम अपने पर्यावरण को अधिक से अधिक शुद्ध व स्वस्थ रखने के प्रति जागरूक रहें जिससे कि हमारे वातावरण व व इससे संबंधित अनेकों तरह की सामाजिक व आर्थिक समस्याओं का समाधान हो सके एवं हमारी जलवायु अधिक उपयोगी को अधिकतम आर्थिक उत्पादन क्रिया की जा सके क्योंकि भारत जैसे विकासशील देश में कृषि ही ऐसा माध्यम है जो देश को विकास की ओर ले जाने में सहायक सिद्ध हो सकता है क्योंकि यदि जलवायु उचित होगी तो कृषि उत्पादन निश्चित रूप से ही उन्नत होगा।

पर्यावरण के बदलाव से खेती पर प्रभाव

सामान्य जीवन में भी पर्यावरण में परिवर्तन होने से अनेकों प्रकार की चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। सामान्यतः

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

पर्यावरण में परिवर्तन होने से खेती पर भी प्रभाव पड़ता ही है, जिसके अनेकों कारण है जैसे कि तापमान, वर्षा आदि बदलाव होने से मिट्टी की उर्वरा शक्ति कीटाणु और पौधों में बीमारियों का फैलना आदि पहले बरसात का मौसम जो पहले लंबा चलता था अब उतनी ही बारिश कम होती जा रही है, इसके कई कारण हो सकते हैं जैसे कि वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण इत्यादि, परंतु ऐसे प्रदूषण के लिए किसानों को भी कुछ सचेत रहना होगा एवं अच्छी फसल के लिए उसे मौसम विभाग से मौसम की जानकारी देते रहना चाहिए इसके लिए सरकार भी काफी जागरूक होती जा रही है और सरकार ने यह फैसला किया है कि हर जिले में किसानों को सूचना देने के लिए एक केंद्र खोला जाए, इसके द्वारा सूचना देने का फायदा यह होगा कि किसान अधिकतम फसल के नुकसान से बच सकेंगे और खेती का बचाव कर सकेंगे।

पिछले कई दशकों से यह देखा जा रहा है कि औद्योगीकरण के प्रारंभ से अर्थात 1780 से लेकर अब तक पृथ्वी के तापमान में 0.7 सेल्सियस तक वृद्धि हुई है। कुछ पौधे ऐसे होते हैं कि जिन्हें एक विशेष तापमान की आवश्यकता होती है वायुमंडल का तापमान बढ़ने से उसके उत्पादन पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है, जैसे कि यदि किसी किसान पर आलू जो सरसों गेहूं आदि की खेती हो रही है तो यदि तापमान बढ़ता है तो वहां इस प्रकार की खेती करना मुश्किल हो जाता है इसी प्रकार प्रत्येक फसल का अपना–अपना तापमान होता है और यदि मौसम की फसल को उचित तापमान नहीं मिलेगा तो फसल पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा इस प्रकार जलवायु परिवर्तन होने से स्थानीय विविधता में परिवर्तन उनके लक्षण का कारण हो सकता है।

फसल उत्पादन में नई तकनीकों का विकास

पर्यावरण में परिवर्तन होने के कारण उत्तम उत्पादन होने में कठिनाई तो आती ही है परंतु भारत का कृषक वर्ग केवल पर्यावरण पर ही केंद्रित रहे यह उचित नहीं है। किसानों को अपनी फसल को और अधिक बढ़ाने के लिए उसमे कुछ नई तकनीकी का प्रयोग करना चाहिए। कृषकों को जलवायु परिवर्तन के गंभीर प्रभावों को ध्यान में रखते हुए ऐसे बीजों की किस्म को विकसित करना होगा जो नए मौसम के अनुकूल हो उत्तम खेती की प्रत्येक किस्मों को विकसित करना होगा जो अधिक तापमान, सूखे, बाढ़ की विभीषिका को सहन करने में सक्षम हो किसानों को लवणता को सहन करने वाली किस्मों को भी किसान द्वारा इजाद करना होगा करना होगा तभी को उचित लाभ होगा।

औद्योगिकरण का पर्यावरण पर प्रभाव व निवारण

भारत को विकास की ओर ले जाने में औद्योगिकरण को विकसित होना मानव को जीवन स्तर प्रदान करने के साथ–साथ सामाजिक आर्थिक संरचना और नए आयाम प्रदान करना है औद्योगिक विकास के लिए प्राकृतिक संसाधनों का भी उत्तम होना अति आवश्यक है किंतु औद्योगिक प्रक्रियाओं के परिणाम स्वरूप पर्यावरण में सर्वथा नवीन तत्व समावेशित होने हो जाते हैं जो पर्यावरण के भौतिक विकास एवं रासायनिक संगठनों को भी प्रभावित कर देते हैं इन सभी पहलुओं पर सुधार की आवश्यकता जरूर है ताकि हमारी प्राकृतिक संपदा का हनन न हो सके और औद्योगिकरण का विकास हो सके औद्योगिकरण के फलस्वरूप ही प्रति व्यक्ति आय और राष्ट्रीय आय में वृद्धि होती है जो आर्थिक विकास की परिचायक है औद्योगीकरण ही राष्ट्र के सामाजिक ढांचे में मूलभूत परिवर्तन करता है सत्य ही है कि और योगी करण ही पूंजीवाद का जनक है और यह भी सही है कि पर्यावरण पर औद्योगिकरण का एक विशेष प्रभाव नकारात्मक पड़ता है और जो भी करण प्रकृति में सुष्मिता विलुप्त होने का कारण बनता जा रहा है जिसके परिणाम स्वरूप अति उपयोगी प्राकृतिक विषमताओं को नुकसान पहुंचता है और कभी–कभी औद्योगिकरण संक्रमण का कार्य करने लगता है इसलिए प्रदूषण की तीव्रता को कम करने के लिए औद्योगिक विकास और भौतिक पर्यावरण के बीच संतुलन बनाने की आवश्यकता है क्योंकि विभिन्न उद्योगों से एक प्रकार विशेष प्रकार की विशैली गैस निकलती है जो पर्यावरण को भी निशाना करती है इन सभी विषयों पर प्रत्येक नागरिक और सरकार को ध्यान देने की अति आवश्यकता है।

अतः यह कहा जा सकता है कि मानव जीवन की गुणवत्ता को नए रूप में रखने के लिए पर्यावरण शुद्ध होना अति आवश्यक है क्योंकि उत्तम पर्यावरण मानव विकास की सीढी है, और देश की प्रगति का श्रोत है। चाहे वह औद्योगीकरण हो का विकास हो, जलवायु परिवर्तन हो उत्तम खेती के माध्यम से कृषकों की विकास हो, इन सभी में सन्तुलन बनाये रखने के लिये पर्यावरण को शुद्ध होना अति आवश्यक है। इसके लिए प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है कि वह पर्यावरण को प्रदूषित होने से रोकने का प्रयास करें एवं देश के विकास में अपना योगदान दे।

संदर्भ

1. https://hindimind.com
2. https://hindi.knowlgeuniverseonline.com
3. https://www.studyfry.com
4. https://www.krishisewa.com
5. https://sarkariauider.in

35

कबीर और मीरा के काव्य में प्रेम के स्वरूप का तुलनात्मक विवेचन

प्रो० वंदना पाण्डेय
हिन्दी विभाग
गोकुलदास हिन्दू गर्ल्स कॉलेज
मुरादाबाद (उ०प्र०)

सारांश

कबीर और मीरा भक्तिकाल की मध्ययुगीन चेतना के अन्तर्गत निर्गुण तथा सगुण धारा के प्रमुख आधार स्तंभ है। इन दोनों रचनाकारों ने सामाजिक संरचना की विसंगतियों से उत्पन्न विष का पान करके उसे राग और विराग के अमृत में बदलकर एक विचार और अनुभूति के रूपमें मानव समाज को देने का प्रयास किया है। कबीर और मीरा के काव्य में प्रेम का संचार अपनी–अपनी परिस्थितियों के अनुरूप एक विशेष प्रेम–दर्शन के रूपमें संचरित हुआ है। कबीर और मीरा के काव्य में अभिव्यक्त प्रेम के स्वरूप का वर्णन विभिन्न दृष्टिकोण से किया जा सकता है।

कबीर और मीरा के व्यतिव का विकास अलग–अलग दिशाओं में हुआ। इस विरोधी व्यतिव तथा विरोधी परिस्थितियों के कारण मीरा और कबीर के प्रेम तत्व की रेखाएँ समानान्तर नहीं रहतीं किन्तु वे एक दूसरे को काटती भी नहीं है। अपनी अनुभूति और प्रकृति के आधार पर अपने–अपने ढंग से विभिन्न दृष्टियों को समेटती हुई एक ऐसे प्रेम दर्शन को जन्म देती हैं जो अलग दिखते हुए भी व्यक्ति और जीवन को उसी में रंगने की बात करती हैं तो वहीं कबीर ढाई आखर को पढ़ते हुए प्रेममय हो जाना चाहते हैं।

मीरा और कबीर दोनों ही दार्शनिक नहीं हैं। वास्तव में दोनों के काव्य की अन्तर्चेतना प्रेम–तत्व में ही निहित हैं प्रेम–तत्व को जीवन के लौकिक और आध्यात्मिक संदर्भों में विविध आयाम देते हुए काव्य की भाषा में अभिव्यक्त करना इन महान कवियों को लक्ष्य रहा है। मीरा और कबीर की कविता के सभी किसी न किसी रूप में जीवन में प्रेमतत्व की ही प्रतिष्ठा करते हैं।

मीरा की कविता प्रत्यक्ष रूपसे प्रेम को आधार बनाकर चलती है तथा मीरा ने स्वयं को कृष्ण को समर्पित कर दिया है। मीरा के कृष्ण पुरुष है परंतु अविनाशी है। यही कारण है कि मीरा का प्रणय भाव आध्यात्मिक होते हुए भी लौकिक दृष्टि से स्वाभाविक और सहज है। उन्होंने कृष्ण को प्रेमालम्बन स्वीकारते हुए अनुभूति तथा अभिव्यक्ति के स्तर पर अनेक नाम और रूप दिये हैं। इस संदर्भ में प्रेमतत्व को भी नए आयाम मिलते हैं जहां प्रेम कहीं स्थूल रूप ग्रहण करता है। तो कहीं सूक्ष्म रूप। इस प्रक्रिया में वैचारिकता स्वाभाविक रूप में दिखाई देती है। यह प्रेम परक वैचारिकता मीरा के कार्य का यह ढाचा है जिस पर मीरा का प्रेम काव्य पल्लवित हुआ है। इस प्रकार मीरा के काव्य में प्रेम की अनुभूतियों में ही उनका प्रेम दर्शन अन्तर्निहित है। प्रेम–दर्शन के विभिन्न तत्व काव्य में निहित प्रेमानुभूति प्रेम–प्रवाह और प्रेम के आलम्बन में देखे जा सकते हैं। मीरा के काव्य में प्रेम–दर्शन का अन्तर्भावित स्वरूपक हीं कबीर के समानान्तर चलता है तो कहीं उससे अलग।

कबीर की कविता मीरा की तरह मात्रवैयक्तिक अनुभूतियों को स्वर देने वाली नहीं हैं। कबीर मीरा की तरह प्रेम की एकांतिक सावना नहीं करते है। उनकी कविता सामाजिक आधार भूमि ग्रहण करती हुई अपनी अनुभूतियों को अभिव्यक्ति देती है। कबीर के काव्य में यह स्पष्ट है कि कबीर का मन सामाजिक विसंगतियों, विषमताओं के बीच असहनीय पीड़ा का अनुभव कर रहा था। इसके समाधान के लिए कबीर ने मानव जीवन में प्रेमतत्व को आधार बनाया। कबीर विभिन्न सामाजिक संदर्भों में एक ऐसा ढांचा प्रस्तुत करते हैं जो समसामयिक समाज के विकृत रूप को सुधारने के लिए प्रेमतत्व की अपरिहार्यता बता रहा था। कबीर का काव्य इसी प्रेमतत्व परक दृष्टि और वैचारिकता पर टिका हुआ है। राग तत्व उनके काव्य की धमनियों में संचरित है जो स्पष्ट रूप से दिखाई न देते हुए भी उनके काव्य को जीवन चेतना देता है। कबीर ने आत्मतत्व के स्वरूप को समझकर उसे परमात्म तत्व के साथ जोड़कर

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

प्रेम का भावन किया है। एकांतिक साधना में यह प्रक्रिया अद्वैत परक निर्गुण साधना बन गई है। यही साधना व्यावहारिक रूप ग्रहण करती हुई, लौकिक सम्बन्धों के आधार पर भावात्मक साधनों के रूप में व्यक्त हुई है।

एकांतिक साधना के इन रूपों में कबीर का प्रेमतत्व वैचारिकता के आधार पर क्रमशः पारदर्शी होता गया है। कबीर की एकांतिक साधना जब सामाजिक साधना की ओर उन्मुख होती है तो उनका आत्मतत्व सामाज की एक इकाई बन जाता है। इस प्रक्रिया में कबीर को जो अभाव खटकता है उसे समाज दर्शन में प्रेम का संचार कर पूरा कर देना चाहते है। उनके इस प्रयास से उनका समाज दर्शन भी प्रेमदर्शन बन जाता है। इस प्रकार कबीर की कविता में प्रेमतत्व सूक्ष्म रेखाओं में अन्तर्निहित है।

मीरा और कबीर के प्रेमतत्व का तुलनात्मक अध्ययन करने पर हम पाते हैं कि दोनों के काव्य में अव्यक्त प्रेम तत्व भक्ति साधना के रूप में प्रकट होता है। भक्ति के क्षेत्र में प्रायः मधुरा भक्ति और वात्सल्य भक्ति के आधार पर ही प्रेमतत्व का विश्लेषण किया जाता है। भक्ति साधना का निर्वाह भक्ति के आलंबन के रूप के आधार पर ही होता है। मीरा का काव्य तो मधुराभक्ति का साक्षात्रूप है ही, कबीर के काव्य में भी मधुराभक्ति तथा वात्सल्य की झाँकी दिखाई देती है। कबीर और मीरा की भक्ति साधना और भक्ति के आलम्बन के स्वरूप के आधार पर इन दोनों का प्रेम अलग–अलग स्वरूप ग्रहण करता है। कबीर ज्ञान को आधार बनाकर अपने आलम्बन के स्वरूप का निर्माण करते है। कबीर के प्रेम का यह आलम्बन कण–कण में व्याप्त रमैया' के रूप में है। यही कारण है कि रमैया की व्यापकता के साथ कबीर का प्रेम भी सर्वव्यापी हो जाता है। जबकि मीरा का प्रेम शुद्ध भावना प्रधान है। उसका प्रेम–निर्वाह परम सत्ता के विश्वात्मक स्वरूप के साथ नहीं हो सकता। परमसत्ता का सीमित सगुण साकार स्वरूप लौकिक आधार पर प्रेम के स्वरूप को दिशा देता है। सगुण से निर्गुण चौतन्य के स्वरूप ग्रहण के साथ मीरा का प्रेम लौकिकता के घेरे से निकलकर आध्यात्मिक बन जाता है।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि मीरा और कबीर के काव्य में अभिव्यक्त प्रेम–दर्शन की अलग पृष्ठ भूमि स्वरूप तथा पहचान है। दोनों के काव्य में अभिव्यक्त प्रेम–दर्शन का सम्मिलित स्वरूप ही प्रेमतत्व का पूर्ण व्यावहारिक और वैज्ञानिक स्वरूप प्रस्तुत करता है। प्रेगतत्व के सम्मिलित स्वरूप के आधार पर ही जीवन में समरसता की परिकल्पना की जा सकती है तथा इसी के आधार पर भक्ति साहित्य का पुन पार्ठ हो सकता है।

संदर्भ

1. दास, डॉ० श्यामसुन्दर. कबीर ग्रन्थावली. नागरी प्रचारिणी सभा।
2. शर्मा, सरनाम सिंह. कबीर व्यक्तित्व कृतित्व एवं सिद्धान्त. भारतीय शोध संस्थानः गुलाबपुर राजस्थान।
3. कबीर और कबीर पंथ तुलनात्मक अध्ययन।
4. तिवारी, डॉ० भोलानाथ. कबीर और उनका काव्य. राजकमल प्रकाशनः दिल्ली।
5. त्रिगुणायत, डॉ० गोविन्द. कबीर की विचार धारा. साहित्य निकेतनः कानपुर।

36

भारतीय साहित्य पर कोविड–19 का प्रभाव

राजेश कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
महात्मा गाँधी मेमौरियल (पी0जी) कॉलेज, सम्भल, (उ०प्र०)
ईमेलः *rrgpatel.77bsl@gmail.com*

सारांश

कोरोना वायरस ऐसे वायरस परिवार से है जो सामान्य जुकाम से लेकर गंभीर स्वरूप की बीमारी जैसे कि मिडल ईस्ट रिस्पेरेटरी सिंड्रोम कोरोना वायरस का कारण बनता है।

नोवल कोरोना वायरस कोविड–19 की पहचान चीन के बुहान में 2019 में हुई थी। यह एक नया कोरोना वायरस है जिसे मनुष्यों में पहले कभी नहीं देखा गया था।

भारत में कोरोना वायरस का पहला मरीज 30 जनवरी 2020 को केरल में मिला।

चीन के बुहान में पढ़ने वाली केरल की एक मेडिकल स्टूडेंट ऊषा राम मनोहर जबसे सेमेस्टर खत्म होने के बाद घर आईं थीं। गले में खरास और सूखी खांसी जैसे लक्षणों की शिकायत के बाद उसके मेडिकल टेस्ट में कोरोना हो गया। कोरोना वायरस के कारण हमारी आदतें और हमारी दिनचर्या काफी हद तक बदल गई है। हमारी जीवन शैली में हो रहे इन बदलावों को हम हर दिन अनुभव भी कर रहे हैं। इतिहास की कई बड़ी आपदाओं के बाद सामाजिक, आर्थिक समझ और जीवन शैली में बदलाव देखे गये हैं। कोरोना संकट के दौर में भी देश दुनिया में सामाजिक जीवन शैली काफी हद तक प्रभावित हो रही है। हमारे खानपान और तौर–तरीकों से लेकर हमारी कार्यशैली बदल रही है आने वाले समय में इन बदलावों का बड़ा असर पड़ने वाला है। हो सकता है कि इस दौरान हमारी बदली आदतें हमारे जीवन का स्थाई हिस्सा बन जाए।

कोरोना वायरस के प्रकोप को रोकने के लिए इस संक्रमण से मुक्ति के लिए भारत के प्रधानमंत्री ने लॉकडाउन की घोषणा की थी, क्योंकि सामाजिक दूरी ही कोरोना को रोकने के लिए कारगर उपाय है। यही कारण है कि लॉकडाउन को कई बार बढ़ाया गया। हम सब की जिम्मेदारी है कि इस निर्णय का पूर्ण समर्थन करते हुए हम लॉकडाउन तथा सरकार द्वारा जारी दिशा निर्देशों जैसे सोशल डिसटेंसिंग, मास्क तथा अपने हाथों की साफ–सफाई का नियमित पालन करें और कोरोना वायरस को जड़ से मिटाने में सरकार का सहयोग करें।

लॉकडाउन एक आपातकालीन व्यवस्था है, जो किसी आपदा या महामारी के वक्त लागू की जाती है। जिस इलाके में लॉकडाउन किया गया है, उस क्षेत्र के लोगों को घरों से बाहर निकलने की अनुमति नहीं होती है। उन्हें सिर्फ दवा और खाने–पीने जैसी जरूरी चीजों की खरीदारी के लिए ही बाहर आने की इजाजत मिलती है। लॉकडाउन के वक्त कोई भी व्यक्ति अनावश्यक कार्य के लिए सड़कों पर नहीं निकल सकता।

कोरोना वायरस ने इंसान को इंसान से दूर कर दिया। अलगाव, क्वारंटीन, सोशल डिस्टेंसिंग जैसे शब्द हम अब हम आमतौर पर इस्तेमाल करने लगे हैं। सोशल मीडिया पर आपने कोरोना वायरस से जुड़ी हुई इस तरह की तस्वीरें देखी होगीं, जो हाल में वायरल हुई हैं। कुछ तस्वीरों में ताबूतों के साथ लोगों की लंबी कतारें देखी जा सकती हैं तस्वीरों में दिखता है कि इंसान को एक अजीब अकेलेपन ने घेर लिया है, जो कि मौत के बाद भी खत्म नहीं होती। माँ अपने बच्चे को छू नहीं सकती पति अपनी पत्नी को ढाढस बंधा नहीं सकता क्योंकि एक दूसरे को छूने से कोरोना का संक्रमण फैलने का डर है। ये एक अभूतपूर्व समय है, जब अगर हम अपने प्रियजनों को जीवित देखना चाहते हैं तो हमें उनसे दूर जाना ही होगा।

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

कोरोना वायरस से निजात पाने के लिए दवा और टीके को विकसित करने के प्रयासों के बीच शोधकर्ताओं ने प्रयोगशाला में लघु अंगों को विकसित किया, जिससे यह पता लगया जा सके कि कोरोना वायरस शरीर को कैसे और कितना नुकसान पहुँचाता है। शोधकर्ताओं का दावा है कि यह वायरस फेफड़े, लीवर, किड़नी और आतों को नुकसान पहुचा सकता है।

''शोधकर्ताओं का मानना है कि नवीन कोरोना वायरस के स्पाइक प्रोटीन के अनुक्रम में लगभग 98 प्रतिशत की समानता है। इस शोध के परिणाम सांइस पत्रिका में प्रकाशित किए गए हैं। शोधकर्ताओं ने यह भी पाया कि कोरोना वायरस तरह कोरोना वायरस कोविड–19 का स्पाइक प्रोटीन भी मानव कोशिकाओं के एंजियोटेनसिन कन्वर्टिंग एंजाइम 2 नामक रिसेटटर्स से जुड़ता है। इन्हीं रिसेटरर्स के जरिए कोरोना वायरस मानव कोशिकाओं में प्रवेश कर पाते हैं। नवीन कोरोना वायरस के स्पाइक प्रोटीन की मानव कोशिकाओं से जुड़ने की क्षमता के मुकाबले 10 से 20 गुना अधिक होती है।''[1]

भारत में कोरोना का असर दूसरे देशों की तुलना में कम है। यहाँ कोरोना से होने वाली संक्रमण एवं मृत्युदर विश्व के दूसरे देशों की तुलना में काफी कम है। ''संक्रमित रोगियों की संख्या एवं मृत्युदर कोरोना वायरस–2019 की वजह से उन लोगों में ज्यादा है जो पहले से किसी 'संक्रमणीय' रोगों, जैसे मधुमेह, उच्च रक्तचाप अथवा हदय सम्बन्धी रोगों से पीड़ित हैं।''[2]

वर्तमान समय में समूचा विश्व एक भीषण चुनौती का सामना कर रहा है, जो कोविड–19 अर्थात कोरोना महामारी के रूप में हमारे समक्ष एक विकराल स्वरूप है। इस कोरोना संक्रमण की विकरालता व भयावहता को देखते हुए विश्व स्वास्थ्य संगठन ने 15 मार्च 2020 को इस वैश्विक महामारी के रूप में घोषित किया है। अभी भी विश्व के अधिकांश राष्ट्र में इसका कहर जारी है। इक्कीसवीं सदी की इस गंभीर त्रासदीं के वैश्विक परिप्रेक्ष्य में इस नकारात्मक का सामना करने के लिए साहित्य अपनी सकारात्मक भूमिका का निर्वाह कर सकता है। इससे कदापि इंकार नहीं किया जा सकता है। हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कहा है कि ''साहित्य मंगल विधाता है इसलिए उसकी भूमिका पृथक व सार्थक है। साहित्य की अनेक विधाओं के माध्यम से ''तमसों मां ज्योतिर्गमय'' की अवधारणा को अपनाते हुए एक सकारात्मक पहल की जा सकती है, जो मानव समाज के लिए एवं समग्र सृष्टि के लिए कल्याणकारी हो सकती है, क्योंकि साहित्य की अपनी प्रकृति संवेदनशीलता भी होती है।''[3]

कोरोना के कारण परिवर्तन समाज एवं साहित्य की दुनिया में भी दिख रहा है। साहित्य का संसार मूलरूप से लेखकों, प्रकाशकों एवं प्रारूपों से मिलकर बनता है। ''मैं साहित्य को मनुष्य की दुर्गतिहीनता और परमुखपेक्षिता से बचा न सके, जो उसकी आत्मा को तेजोदीप्त न बना सके, जो उसके हदय को पर दुख कातर और संवेदनशील न बना सके, उसे साहित्य कहने में मुझे संकोच होता है।''[4]

देश में कोरोना वायरस के चलते लागू लॉकडाउन ने लोगों की जीवन शैली पूरी तरह से बदल दी है। मानव जीवन में हुए इन बदलावों में कुछ सकारात्मक है कुछ नकारात्मक भी सबसे बड़ा बदलाव साफ–सफाई को लेकर हुआ है। प्रधानमंत्री माननीय नरेन्द्र मोदी जी के स्वच्छ भारत अभियान के बाद कोरोना वायरस ने लोगों को स्वच्छ रहने और अपने आस–पास साफ–सफाई रखने को मजबूर कर दिया है। कोरोना वायरस के बाद घरों में अचानक सफाई का स्तर बढ़ गया है। इसके साथ ही कुछ भी छूने के बाद लोग अपने हाथों को अच्छे से साफ कर रहें हैं। लॉकडाउन के खाली समय में कोई अपनी पसंद की किताबें पढ़ रहा है तो कोई रचनात्मक कार्यों में मशगूल हो गया है। लॉकडाउन में लोग घरों में रहकर ही ऑफिस का काम कर रहे हैं। लॉकडाउन में ऑनलाइन क्लासेस का दौर भी खूब चल निकला हैं वहीं महिलायें घर में रहकर नई–नई रेसिपी बना रही हैं। इसके साथ ही कुछ नकारात्मक प्रभाव भी पड़े है। जैसे–घरों में खाली रहने की वजह से लोगों में तनाव पैदा हो रहा है। तनाव का एक बड़ा कारण आर्थिक एवं सामाजिक चुनौतियों भी है।

देश में 25 मार्च से 31 मई कुल 86 दिन का लॉकडाउन रहा इसके सभी लोगों को काफी परेशानियों का सामना करना पड़ा परन्तु प्रभावी श्रमिकों को अपने घरों तक आने में बहुत मुसीबतों का सामना करना पड़ा।

वैश्विक महामारियां साहित्य और समाज को प्रभावित करती आई हैं। वैश्विक महामारियां अपने समय और भविष्य दोनों को प्रभावित करती हैं, राजनीति, भूगोल, अर्थशास्त्र के साथ ही सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों में भी उनका असर हुआ है।

महामारियों के कथानक पर केन्द्रित अतीत की साहित्यिक रचनाएं आज के संकटों की भी शिनाख्त करती हैं। ये हमें मनुष्य जिजीविषा की याद दिलाने के साथ नैतिक मूल्यों के ह्रास और मनुष्य अंहकार अन्याय और नश्वरता से भी आगाह करती हैं इतिहास गवाह है कि अपने–अपने समय में चाहें कला हो या साहित्य संगीत, सिनेमा तमाम रचनाओं ने महामारियों की भयावहताओं को चित्रित करने के अलावा अपने समय की विसंगतियों, गड़बडियों और सामाजिक द्वन्द्वों को भी रेखाकित किया है। रचनायें सांत्वना, धैर्य और साहस का स्रोत भी बनी हैं, दुखों और सरोकारों को साझा करने वाला एक जरिया और अपने समय का मानवीय दस्तावेज।

समकालीन विश्व साहित्य में महामारी पर विशदकृति 'द प्लेग' को माना जाता है। कहा जाता है कि अल्जीरियाई मूल के विश्व प्रसिद्ध फ्रांसीसी उपन्यासकार अल्बैर कामू अपने उपन्यास 'द प्लेग' के जरिए कामू नात्सीवाद और फासीवाद के उभार ओर उनकी भयानकताओं के बारे में बता रहे थे, इसमें दिखाया गया है कि कैसे स्वार्थों और महत्वाकांक्षाओं और विलासिताओं से भरी पूंजीवादी आग्रहों और दुष्चक्रों वाली दुनिया में किसी महामारी का हमला कितना व्यापक और जानलेवा हो सकता है कि कैसे वो

खुश फहमियों और कथित निर्भयताओं के विशाल पर्दे वाली मध्यवर्गीय अभिलाषाओं का तहस–नहस करता हुआ एक अदृश्य दैत्य की तरह अंधेरों और उजालों पर अपना कब्जा जमा सकता है।''[5]

'द प्लेग' उपन्यास का एक अंश है, ''हर किसी को पता है कि महामारियों के उपाय दुनिया में लौट आने का रास्ता होता है, फिर भी न जाने क्यों हम उस चीज पर यकीन नहीं कर पाते है जो नीले आसमान से हमारे सिरों पर आ गिरती है। जब कुछ युद्ध भड़कता है, लोग कहते हैं, ''बहुत बड़ी मूर्खता है, ज्यादा दिन नहीं चल पाएगी।'' लेकिन युद्ध कितना ही मूर्खतापूर्ण क्यों न हो, ये बात उसे चलते रहने से नहीं रोक पाती है। मूर्खता के पास अपना रास्ता बना लेने का अभ्यास होता है। जैसा कि हमें देख लेना चाहिए अगर हम लोग हमेशा अपने में ही इतना लिपटे हुए न रहें।''[6]

विश्व साहित्य पर नज़र डाले तो अल्बैर कामू से पहले भी लेखकों ने अपने समयों में बीमारियों और संक्रामक रोगों का उल्लेख अपनी रचनाओं में किया है, कोलम्बियाई कथाकार गब्रिएल गार्सीया मार्केश का मार्मिक उपन्यास 'लव इन द टाइम ऑफ कॉलेरा' प्रेम और यातना के मिलजुले संघर्ष की करूण दास्तान सुनाता है। जहाँ महामारी से खत्म होते जीवन के सामान्तर प्रेम के लिए जीवन को बचाए रखने की जददोजहद एक विराट जिद की तरह बनी हुई है।

प्लेग, चेचक, इन्फलुएंजा, हैजा, ओर तपेदिक आदि बीमारियों ने घर परिवार ही नहीं, शहर के शहर उजाड़े हैं और पीढ़ियों को एक गहरे भय और संत्रास में धकेला है। चेचक को दुनिया से मिटे 40 वर्ष से ज्यादा हो चुके हैं। पिछले वर्ष दिसम्बर में विश्व स्वास्थ्य संगठन ने इस बात का जश्न भी मनाया था लेकिन 20 वीं सदी के शुरूआती वर्षों में ये एक भीषण महामारी के रूप में करोड़ों लोगों को अपना ग्रास बना चुकी थी। रवीन्द्र नाथ टैगोर की काव्य रचना पुरातन मृत्यु (पुराना नौकर) में एक ऐसे व्यक्ति की दास्तान है जो अपने मालिक की देखभाल करते हुए चेचक की चपेट में आ जाता है। 1903 में टैगोर ने तपेदिक से जूझती 12 वर्ष की बेटी को स्वास्थ्य लाभ के लिए उत्तराखंड के नैनीताल जिले के रामगढ़ की हवादार पहाड़ी पर कुछ महीनों के लिए रखा लेकिन कुछ महीनों में उसने दम तोड़ दिया था, चार साल का बेटा भी नहीं रहा। टैगोर ने रामगढ़ प्रवास के दौरान 'शिशु' नाम से अलग कविताओं के संग्रह का नाम अध्रचंद कर दिया था। टेगौर की इस रचना से एक पवित्र देखिए ''अंतहीन पृथीवियों के समुद्र तटों पर थल रहे हैं बच्चें, मार्गविहीन आकाश में भटकते हैं तूफान, पथविहीन जलधाराओं में टूट जाते हैं जहाज, मृत्यु है निबंध और खेलते हैं, बच्चे, अंतहीन पृथिवियों के समुद्रतटों पर बच्चों की चलती है एक महान बैठक।''[7]

ठीक तरह निराला ने अपनी आत्मकथा कुल्लीभाट में 1918 के दिल दलहा देने वाले फलू से हुई मौतों का जिक्र किया है, जिसमें उनकी पत्नी, एक साल की बेटी और परिवार के कई सदस्यों और रिश्तेदारों की जाने चली गई थीं। निराला ने लिखा था कि ''दाह संस्कार के लिए लकड़ियां कम पड़ जाती थीं। इस बीमारी ने हिमालय के पहाड़ों से लेकर बंगाल के मैदानों तक सबको अपनी चपेट में ले लिया था''8. बेटी की याद में 'सरोज स्मृति हिन्दी साहित्य का शोककाव्य है।

प्रगतिशील लेखक संगठन के पुरोधाओं में एक राजिंदर सिंह बेदी की कहानी 'क्वारंटीन' में महामारी ज्यादा उसके बचाव के लिए निर्धारित उपायों और पृथक किए गए क्षेत्रों के खौफ का वर्णन है। पानी एक विडंबनापूर्ण और हास्यास्पद सी स्थिति से आती है कि महामारी से ज्यादा मौतें क्वारंटीन में दर्ज होने लगती हैं।

फडीश्वरनाथ रेणु के प्रसिद्ध उपन्यास 'मैला आँचल' में मलेरियां और कालाजार की विभीषिका के बीच ग्रामीण जीवन की व्यधा का उल्लेख मिलता है। उड़िया साहित्य के जनक फकीर मोहन सेनापति की रेबती कहानी में हैजे का प्रकोप का वर्णन है। कन्नड़ कथाकार यू आर अनंतमूर्ति की उपन्यास 'संस्कार' में एक प्रमुख किरदार की मौत प्लेग से होती है। ज्ञानपीठ आवार्ड से सम्मानित मलयाली साहित्य के दिग्गज तकाजी शिवशंकर पिल्लै का उपन्यास 'थोत्तिपुडे मकान' में दिखाया गया है कि किस तरह पूरा शहर एक संक्रामक बीमारी की चपेट में आ जाता है।

आज के कोरोना समय में जब अधिकांश लेखक ऑनलाइन है तो दुनिया ही नहीं भारत में भी विभिन्न भाषाओं में कवि, कथाकार सोशल मीडिया के जरिए खुद को अभिव्यक्त कर रहे हैं। डायरी, निबंध, नोट लघुकथा, व्याख्यान और कविता लिखी जा रही है। कहीं चुपचाप तो कहीं सोशल नेटवर्किंग वाली मुखरता के साथ। भारत में खासकर हिंदी क्षेत्र में विभिन्न लेखक संगठन व्यक्ति और प्रकाशन संस्थान फेसबुक लाइव जैसे उपायों के जरिए लेखकों से उनकी, रचनाओं और अनुभवों को साझा कर रहे हैं। हालांकि इस काम में प्रकाशित हो जाने की हड़बड़ी और होड़ भी देखी जा रही है और अपने अग्रहों और पसंदों के आरोप–प्रत्यारोप भी लग रहे हैं और वास्तविक दुर्दशाओं से किनारा करने के आरोप भी हैं। संजय कुंदन कहते हैं कि हो सकता है जो आज सोशल मीडिया पर शेयर किया जा रहा है वो साहित्य की कसौटी पर खरा न उतरे और गुणवत्ता में कम हो लेकिन उन्हीं के बीच से ऐसी रचनाएं भी अवश्य आएगीं जो आगामी वक्त के लिए संघर्ष, यातना ओर संशय से भरे इस भयावह जटिलताओं वाले समय की सबसे प्रखर और संवेदनापूर्ण दस्तावेज कहलाने योग्य होंगी।

कोरोना में कवि पुस्तक की भूमिका में संपादक संजय कुंदन ने लिखा है दुनिया भर में फैली महामारियां या बीमारियां हमेशा से साहित्य की विषय वस्तु रही हैं। इतिहास महामारियों का उतना बारीक और ज्वलंत चित्रण नहीं करता, जितना साहित्य में मिलता

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

हैं। उपन्यास, कहानियों, नाटकों और कविताओं के रूप में हमें ऐसी असंख्य रचनायें मिलती हैं। इस श्रृंखला में वाम प्रकाशन की करोना में कवि भी शामिल हो गई है। इस काव्य संग्रह में जाने माने और नवोदित कवियों की कविताएं शामिल की गई हैं। अधिकांश कवियों ने लॉकडाउन से उपजी परिस्थितियों का मार्मिक चित्रण किया है। ज्यादातर कवियों ने प्रभावी मजदूरों की पीड़ा को स्वर दिया है।

संजय कुंदन आगे लिखते हैं, ''हर तरह की तकनीक और उन्नत चिकित्सक प्रणाली वायरस के सामने फिलहाल तो असहाय रही है। हालांकि ऐसी असहायता के बीच पहले भी रास्ते निकले हैं और निश्चय ही इस बार भी हम इससे उबर जाएगें। यह भी कम हैरत की बात नहीं कि सत्तातंत्र का व्यवहार आज भी वैसा ही है, जैसा सौ साल पहले की किसी महामारी में रहा है।'' वह आगे लिखते हैं, ''महामारी के वहाने जनतांत्रिक मूल्यों व जनता के अधिकारों पर कुठाराघात की कोशिशें भी देखी जा रही है। इतिहास का यह खतरनाक दोहराव चिचिंत करने वाला है।''[9]

इसी दोहराव को रेखाकित करते हुए सुभाष राय ने साइकिल पर अपने पिता को बिठाकर गुड़गांव से दरभंगा पहुंचने वाली 15 साल की ज्योति पासवान पर कविता लिखी है। संजयकुंदन ने ''जा रहे हम'' शीर्षक से प्रकाशित कविता में अपने गांव लौट रहे प्रवासी मजदूरों की व्यथा और शहरों के अपेक्षित उम्र के व्यक्ति की पीड़ा को स्वर देते हुए लिखा है। लीलाधर मंडलोई ने सारा डेटा होते हुए भी कुछ न करने की व्यवस्था पर बेहद तीखा कटाक्ष किया है। ''आपको सब मालूम है'' कविता में उन्होंने मेहनतकश मजदूरों की जिजीविषा और सरकारी उपेक्षा पर लिखा है।

ये कविताएं कोरोना काल की पीड़ा और छटपटाहट को स्वर देती है। कुछ समय बाद जब देश कोरोना वायरस की जद से बाहर निकल चुका होगा, तब यह काव्य संग्रह इस भयंकर दौर की रह रहकर याद दिलाता रहेगा।

हालांकि कई पुराने और स्थापित लेखक और कवि सोशल मीडिया पर चल रहे साहित्य की गंभीरता पर सवाल उठा सकते हैं लेकिन बावजूद इसके उसके रचना धर्म पर सवाल नहीं उठाया जा सकता। क्योंकि कई ऐसे लेखक हैं जिन्होंने इस प्लेटफार्म का बेहतर उपयोग करके कुछ हद तक अपनी जगह बनाई है। ऐसे कई नाम हैं जिनके लेखन और कविता को नकारा नहीं जा सकता है।

जिस तरह सोशल मीडिया प्लेट फार्म को अब तक हल्के में लिया जा रहा था इस कोरोना काल वहीं सबसे ज्यादा कारगर साबित हुआ है। चाहें वो सूचना हो, खबर हो, सोशल गेदरिंग हो या साहित्य का कोई हिस्सा। खासतौर पर साहित्य ने अपना नया मंच खोज लिया है। वैसे भी संप्रेषण का मतलब ही मेरे ख्याल से वह होता है कि दुनिया के किसी अज्ञात कोने में बैठकर अपनी जेब से मोबाइल निकालकर आप अपनी बात रखें और वह दुनिया के हर कोने तक पहुंच जाए।

सन्दर्भ

1. प्रसाद, आर0. द हिन्दु महामारी मार्ग दर्शिका. संपादक पी0जे0 जार्ज. पृष्ठ **7.**
2. सिंह, ए0के0. (2020). कोमोरविडिटीज इन कोविड–19 आउटकम इन हाइपर टेन्सिल काहार्ट एवं कन्ट्रोवर्शीस विद रेनिन एन्जोटेंशिन सिस्टम ब्लाकर्सः डायविटीज मेरव सिंड्रोम. 9 अप्रैल. पृष्ठ **283–287.**
3. द्विवेदी, आचार्य हजारी प्रसाद. (1950). अशोक के फूल. सस्ता साहित्य मण्डलः नई दिल्ली।
4. द्विवेदी, आचार्य हजारी प्रसाद. (1550). अशोक के फूलः सस्ता साहित्य मण्डलः नई दिल्ली. पृष्ठ **166.**
5. अल्बैर, कामू. (1947). द प्लेग. संपादक–एडीसन गैलीमार्ट।
6. अल्बैर, कामू. (1947). द प्लेग. एडीसन गैलीमार्ट।
7. टैगोर, रवीन्द्र नाथ. (1903). शिशु।
8. निराला, सूर्यकान्त त्रिपाठी. (1918). कुल्लीभाट. राजकमल प्रकाशन. नया संस्करण 2004.
9. कुंदन, संजय. 'कोरोना में कवि' पुस्तक की भूमिका।

37

पर्यावरण समस्याएं एवं समाधान

डॉ० अनीता भारद्वाज
असिस्टेंट प्रोफेसर, अर्थशास्त्र विभाग
कन्या महाविद्यालय, आर्य समाज भूड़, बरेली

भूमिका

आर्थिक विकास की वैश्विक प्रतिस्पर्धा के इस युग में विकास कार्यों को त्वरित तथा युद्ध स्तर पर संपादित करने में प्राकृतिक संसाधनों का तेजी से विदोहन किया जाना एक अनिवार्यता बन गई है जिसके दुष्परिणाम विभिन्न रूप में हमारे सामने प्रकट हो रहे हैं और उनका निदान समूचे विश्व समुदाय के लिए एक गम्भीर चुनौती बनकर उभर चुका है। पहली बार इस समस्या पर चिन्तन 1972 में संयुक्त राष्ट्र संघ के तत्वावधान में स्टॉकहोम में एक विश्व स्तरीय सम्मेलन आयोजित करके किया गया था जिसके बाद शनैः शनैः इस क्षेत्र में सभी देश समस्या की गम्भीरता का अनुभव करते हुए उसके समाधान की दिशा में प्रयासरत हैं। भारत में प्रारंभिक वर्षों में इस समस्या पर ध्यान ''चिपको'' आंदोलन के माध्यम से गढ़वाल मण्डल के एक छोटे से पर्वतीय गांव से आकर्शित किया गया था जो अब एक बहुआयामी रूप ले चुका है। समस्या की गम्भीरता से वर्तमान की युवा पीढ़ी और आगामी पीढ़ियों को परिचित कराने के लिये पर्यावरण सम्बन्धी समस्याओं और प्रदूषण को रोकने तथा पर्यावरण सम्बन्धी विभिन्न समस्याओं के सम्भावित समाधान व अध्ययन को प्राकृतिक एवं सामाजिक विज्ञान की सभी विधाओं में पाठ्यक्रम का एक अनिवार्य अंग बनाकर उनके माध्यम से सामाजिक चेतना एवं जागरूकता उत्पन्न की जा रही है।

प्रस्तुत शोध पत्र में पर्यावरण की बढ़ती समस्याओं–पर्यावरण अध्ययन, जलवायु परिवर्तन, वैश्विक गर्माहट, जनसंख्या विस्फोट, निर्वनीकरण, संयुक्त वन प्रबंधन, खनन प्रदूशण, जैव विविधता, पर्वतीय पारिस्थितिकी तंत्र, पर्यटन और उससे सम्बन्धित समस्याओं का विश्लेषण किया गया है जो मेरे मत में शिक्षार्थियों के लिए विशेष रूप से लाभकारी सिद्ध होगा।

पर्यावरण का तात्पर्य

संक्षिप्त और सरल रूप में समस्त जीवधारियों और वनस्पतियों के चारों ओर का आवरण ही पर्यावरण है। हवा, पानी, मिट्टी, पेड़–पौधे आदि सभी तत्वों पर हमारा दैनिक जीवन निर्भर करता है, इन्हीं पंच तत्वों से मानव शरीर का निर्माण होता है और अंत में इन्हीं में मानव शरीर विलीन भी हो जाता है। प्रकृति का कार्य इन सभी तत्वों में सन्तुलन बनाए रखने का होता है परन्तु मनुष्य अपनी जीवनशैली से इन तत्वों के पारस्परिक संतुलन को तोड़कर असंतुलित कर देता है और जिसके कारण पर्यावरण की समस्या विभिन्न रूपों में उत्पन्न होती है।

अंग्रेजी भाषा के शब्द Environment की व्युत्पत्ति ग्रीक शब्द Oikos तथा Logos नामक दो शब्दों से हुयी है। Oikos के अन्तर्गत आवास के स्थान का अध्ययन किया जाता है। विभिन्न विद्वानों ने इस शब्द को परिभाषित करते हुए संक्षिप्त रूप में जिस प्रकार से व्यक्त किया है उसका अभिप्राय एक ऐसी प्रवृति से है जो जन्तुओं तथा वनस्पतियों को प्रभावित करती है जिसमें भौतिक तत्वों की प्रधानता होती है।

पर्यावरण का अध्ययन क्षेत्र

वर्तमान में पर्यावरण अध्ययन का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक हो गया है जिसमें जीवमंडलीय परिस्थितिक तंत्र के तीन अंग भू–मंडल, जलमंडल एवं वायुमंडल को सम्मिलित करते हुए, उनकी संरचना और संगठन के अध्ययन को सम्मिलित किया जाता है। इनके प्रभाव दृश्य एवं अदृश्य रूप में परिलक्षित होते हैं, जिनकी संवेदनशीलता का अनुभव किया जाना एक विशिष्ट आवश्यकता है।

Shodh Manthan Vol. XIV Special Issue Fab.2023 ISSN: (P)0258-1701(e)2454-3403 Impact Factor: 8.870
Doi: https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.v14.iS.01

पर्यावरण के अंग

पर्यावरण के अध्ययन के लिए उसको निम्न रूप में विभाजित किया जा सकता है–

1. **भू–मंडलीय पर्यावरण–** इस क्षेत्र के अन्तर्गत हम पृथ्वी तल पर भौतिक रूप में दिखाई देने वाले सभी तत्वों को सम्मिलित करते हैं जैसे मैदान पर्वत, पठार, वनस्पति आदि।
2. **जलमंडलीय पर्यावरण–**पर्यावरण के इस अंग में हम जल के विभिन्न स्त्रोतों नदी, झील, समुद्र, महासागर आदि में पाए जाने वाले तत्व, जीव एवं सभी स्थल आकृतियों को सम्मिलित करके उनका अध्ययन करते हैं।
3. **वायुमंडलीय पर्यावरण–**इसके अन्तर्गत वायु में पाए जाने वाले सभी जीव जन्तु, तत्व, गैस उनकी रासायनिक संरचना, सांद्रता आदि का अध्ययन सम्मिलित होता है।
4. **वानस्पतिक पर्यावरण–**इसके अन्तर्गत थल, जल, एवं वायु किसी भी मंडल में विचरण करने वाले समस्त जीवधारियों एवं उनकी क्रियाओं के प्रभाव का अध्ययन सम्मिलित किया जाता है।

उन्नत जीवन जीने के लिए जहॉ एक ओर आर्थिक विकास महत्वपूर्ण है उतना ही महत्वपूर्ण पर्यावरण संतुलन हमारे जीवन के लिए है जो ''इकानमी'' और ''इकालजी'' की पारस्परिक घनिश्ठता में परिलक्षित होता है और यह वैश्विक स्तर पर आवश्यक है क्योंकि एक देश के पर्यावरण असंतुलन का प्रभाव दूसरे देश पर अनिवार्य रूप में पड़ता है। बढ़ी हुई सामाजिक चेतना एवं कठोर कानूनी प्रावधानों के बावजूद अधिकाधिक स्वच्छता, वृक्षारोपण, वायु प्रदूषण को कम करने को एक वष्हत सामाजिक आंदोलन चलाकर ही आगे बढ़ाना होगा।

पर्यावरण की बढ़ती समस्याएं

विश्व के सामने एक प्रमुख चुनौती बढ़ती हुई जनसंख्या खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि सुनिश्चित करना है। इस क्रम में प्राकृतिक व जैविक उर्वरकों के स्थान पर रासायनिक उर्वरकों के अनियंत्रित प्रयोग ने भूमि की गुणवत्ता से लेकर वायुमंडल तक में अनेक परिवर्तन किए हैं जिनका पर्यावरण पर निरन्तर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। बढ़ी हुई जनसंख्या की विभिन्न आवश्यकताओं को पूर्ण करने लिए जीवाश्म ईंधन के अधिकाधिक दोहन से वायुमंडल में कार्बनडाइऑक्साइड की मात्रा निरन्तर बढ़ रही है जिससे विश्व का तापमान धीरे–धीरे बढ़ता जा रहा है और आशंका है कि आगामी समय में औसत तापमान के काफी बढ़ जाने के कारण हमें कृषि उत्पादन के क्षेत्र भी बदलने पड़े। यह भी आशंका है कि समुद्री जलस्तर बढ़कर तटीय नगरों में बाढ़ ला दे जिससे राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था चरमरा जाए। औद्योगिक गैसों के समुचित निस्तारण के अभाव में पृथ्वी की सुरक्षा कवच रूपी ओजोन पर्त को खतरा है। सीवेज प्लांट की कमी तथा उद्योगों के अनिस्तारित उपशिष्ट के जल प्रवाह के कारण नदियों एवं सागरों के जल की गुणवत्ता और खाद्य श्रंखला पर भयंकर संकट आसन्न है जो नए–नए रोगों की उत्पत्ति का कारण बनता चला जा रहा है जिससे अर्थव्यवस्था एवं विकास की प्राथमिकताएं गलत दिशा में मुड़ती जा रही हैं। सभी प्रकार के नाभिकीय परीक्षण जो पर्यावरण प्रदूषण के स्त्रोत है उन पर भी अतंराष्ट्रीय सहमति से प्रतिबंध लगाया जाना आवश्यक है। इन पर गंभीर चिन्तन और निदान की आवश्यकता है।

पर्यावरण संरक्षण तथा समस्याओं का समाधान

सम्पदाओं को निरन्तर बनाए रखना, इसमें वृद्धि करना तथा इसके सदुपयोग को संरक्षण कहा जाता है। सरंक्षण के द्वारा सजीव और निर्जीव में एक संतुलन बनाए रखने का प्रयास किया जाता है। इस प्रक्रिया में वनों के अंधाधुंध कटाव पर नियन्त्रण, अधिकाधिक वृक्षारोपण तथा कम होती जा रही वन उपज जैसे लकड़ी और उस पर आधारित उद्योग और उत्पाद का शनैः शनैः उपयोग कम करना है। डिजीटल इंडिया कार्यक्रम के अन्तर्गत पेपरलेस कार्यप्रणाली से कागज के उपयोग को भी इसी अन्तर्गत कम करना है जिसका पर्यावरण संरक्षण पर दीर्घकालीन प्रभाव देख जा सकेगा। ऊर्जा के जीवाश्म स्त्रोतों के स्थान पर सौर ऊर्जा, बायोगैस, निर्धूम चूल्हे पवन चक्कियों आदि को प्रोत्साहित करने की नीति पर्यावरण संरक्षण और समाधान की दिशा में मील का पत्थर सिद्ध होगी जिसके लिए सरकार के स्तर पर प्रोत्साहन की विभिन्न योजनाएं क्रियाशील है और इनके प्रयोग के लिए लोगों में आधिकाधिक जागरूकता उत्पन्न की जा रही है। मृदा संरक्षण को मूर्त रूप देने के लिए मृदा परीक्षण एवं गुणवत्ता में सुधार के लिए विभिन्न स्तरों पर प्रयोगशालाएं स्थापित की गई है यद्यपि उनके बारे में व्यापक स्तर पर चेतना का अभी भी अभाव है।

पर्यावरण सरंक्षण के लिए यह अति महत्वपूर्ण है कि विकास कार्य पर्यावरण एवं मानव समुदाय के अस्तित्व की कीमत पर बिल्कुल भी नहीं किया जाए। भारत में इसके महत्व को स्वीकार करते हुए संघ एवं राज्य सरकारों के स्तर पर पृथक से पर्यावरण एवं वन मंत्रालय का गठन किया गया है और राष्ट्रीय व प्रदेश स्तर पर इस क्षेत्र में विभिन्न संस्थाएं जैसे केन्द्रीय व राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, NEERI, ITCR Lucknow, Bhaba Atomic Research Centre आदि स्थापित की गई हैं जो अपने–अपने क्षेत्रों में समुचित योगदान कर रही हैं। मेरे विचार से इस समस्या का निदान तभी सम्भव है जब नगरीय विकास में प्राकृतिक संसाधनों का अनियंत्रित विदोहन रोका जाए जिसके लिए सामाजिक जागरूकता उत्पन्न किया जाना विशेष रूप से आवश्यक है।

हमारे प्रदेश में माननीय मुख्यमंत्री जी द्वारा विगत वर्षों से वृक्षारोपण की एक वृहत स्तरीय मुहिम चलाई जा रही है। विभिन्न

शिक्षण संस्थाओं के माध्यम से और वन विभाग के सहयोग से वृक्षारोपण अभियान वृहत स्तर पर चलाया जा रहा है और पर्यावरण संरक्षण के प्रति चेतना भी जागृत की जा रही है। इसके दीर्घकालीन प्रभाव के रूप में ही वायुमंडल में कार्बनडाइऑक्साइड की कमी हो सकेगी। स्वच्छ भारत मिशन और केन्द्र सरकार की स्मार्ट सिटी परियोजा के अन्तर्गत स्वच्छता और पर्यावरण संरक्षण के जो कार्यक्रम विकसित किए जा रहे हैं उनका प्रभाव आगामी वर्षों में ही व्यापक रूप से प्रकट होगा। अब समय आ गया है कि मानव को समझना पड़ेगा कि प्राकृतिक संसाधनों पर उनका एकाधिकार नहीं है आवश्यकता इस बात की है कि मानव प्रकृति के साथ सामंजस्य और संतुलन बनाकर विकास की प्रक्रिया निर्धारित करे।

संदर्भ

1. कुमार, शील. (2006). ''पर्यावरण समस्याएं''. प्रकाशक ज्योति इंटरप्राइजेज।
2. शर्मा, महेन्द्र सूर्य. (2003). ''भारत में पर्यावरण''. चन्द्रमुखी प्रकाशनः दिल्ली।

SOCIAL SCIENCES	SINCE	ISSN (P)	ISSN (E)	PERIOD	IMPACT FACTOR
Research Journal of Philosophy & Social Sciences	1974	0048-7325	2454-7026	Half Yearly June-Dec.	8.902
Review Journal of Philosophy & Social Sciences	1975	0258-1707	2454-3403	Half Yearly Mar-Sept.	8.862
Review Journal of Political Philosophy	2003	0976-3635	2454-3411	Half Yearly Mar-Sept.	8.858
Journal Global Values	2010	0976-9447	2454-8291	Half Yearly June-Dec.	8.835
Arts & Humanities	**SINCE**	**ISSN (P)**	**ISSN (E)**	**PERIOD**	**IMPACT FACTOR**
Notions: A Journal of English Literature	2010	0976-5247	2395-7239	Half Yearly June-Dec.	8.874
Artistic Narration: A Journal of Performing Art	2010	0976-7444	2395-7247	Half Yearly June-Dec.	8.898
Science	**SINCE**	**ISSN (P)**	**ISSN (E)**	**PERIOD**	**IMPACT FACTOR**
Voyager: A Journal of Sciences	2010	0976-7436	2455-054X	Yearly	8.419
Multidisciplinary	**SINCE**	**ISSN (P)**	**ISSN (E)**	**PERIOD**	**IMPACT FACTOR**
Shodhmanthan (शोधमंथन) in Hindi	2010	0976-5255	2452-339X	Quarterly Mar-Sept.	8.870

* All Journals are available in Print and online (Open Access)
* Plagiarism: Check for similarity to prior published works through Ithenticate (Turnitin)
* Double blind peer reviewed.

Published By :

Journal Anu Books
In Support of KIET

Shivaji Road, Near Petrol Pump, Meerut, UP (india)

E-mail : kietjournals@gmail.com
journalanubooks@gmail.com
Website : www.anubooks.com, www.kiet.asia
Phone : 0121-4007472
Mob. : 91-9997847837, 8279743450

₹ 1000/-